JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

आयुष्मान भारत योजना के प्रति जागरूकता में संचार अभियानों और कार्यक्रमों की भूमिका

लक्ष्मी नारायण शर्मा
शोधार्थी, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग,
उ.प्र. राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
एवं
डॉ. सतीश चंद्र जैसल
असिस्टेंट प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग,
उ.प्र. राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

शोध सार – *आयुष्मान भारत योजना भारत सरकार की एक महत्वाकांक्षी स्वास्थ्य पहल है। यह योजना अपने कई घटकों के माध्यम से स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार करने, समाज को निशक्त वर्गों को स्वास्थ्य बीमा की सुविधा से लैस करने, स्वास्थ्य के क्षेत्र में आधारभूत सुविधाओं को सशक्त करने, डिजिटल तकनीक को बढ़ावा देने जैसे लक्ष्यों के साथ क्रियान्वित हो रही है। किसी जन कल्याणकारी योजना की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि योजना के पात्र लाभार्थियों तक उसके बारे में समुचित जानकारी हो। इसके लिए विभिन्न तरह के संचार अभियान चलाये जाते हैं। इनमें एक ओर जहां सरकार के जागरूकता कार्यक्रम और उनके मानव संसाधनों की भूमिका होती है तो दूसरी ओर जनसंचार माध्यम भी इसमें अपनी भूमिका का निर्वाह करते हैं। योजना के सफल क्रियान्वयन के लिए आवश्यक है कि संचार और जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से अधिक से अधिक लोगों तक जानकारी पहुंचाई जाये। सरकार इस बात को ध्यान में रखते हुए योजना के क्रियान्वयन के हर स्तर पर संचार और जागरूकता से जुड़े अभियान और कार्यक्रमों को भी आयोजित करती है। प्रस्तुत शोध आलेख में आयुष्मान भारत योजना के प्रति जागरूकता में प्रयुक्त होने वाली संचार अभियानों और जागरूकता कार्यक्रमों की भूमिका का विश्लेषण किया गया है।*

प्रस्तावना – मनुष्य के जीवनयापन के लिए भोजन, वस्त्र और आवास मूलभूत आवश्यकताएँ हैं। सभ्यता के विकसित होने के क्रम में शिक्षा, स्वास्थ्य और संचार साधनों की उपलब्धता भी मनुष्य के जीवन की अनिवार्य आवश्यकताएँ बन चुकी हैं। वर्तमान समय में नागरिकों को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध कराने, मानव विकास संकेतकों में स्थिति बेहतर करने और सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने के प्रयास में स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर करने के लिए कई तरह के प्रयास किये जा रहे हैं। भारत में सामाजिक और आर्थिक रूप से निशक्त वर्गों को प्राथमिक, माध्यमिक और तृतीयक स्तर की स्वास्थ्य सेवाएँ निशुल्क उपलब्ध कराने और दूरस्थ क्षेत्रों तक फैले स्वास्थ्य सेवाओं के संजाल को सशक्त करने के उद्देश्य से केन्द्र सरकार ने आयुष्मान भारत योजना की शुरूआत की है। इस योजना के दो प्रमुख घटकों 'आयुष्मान आरोग्य मंदिर' (हेल्थ एंड वेलनेस सेंटर) और 'प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना' की वर्ष 2018 में शुरूआत हुई। वर्ष 2021 में आयुष्मान भारत योजना को विस्तार देते हुए इसमें दो नये स्तंभ जोड़े गये, 'आयुष्मान भारत हेल्थ इंफ्रास्ट्राक्चर मिशन' और 'आयुष्मान भारत डिजिटल मिशन'।

आयुष्मान भारत योजना के माध्यम से देश के निशक्त वर्गों और जन सामान्य को स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध हो सकें, इसके लिए आवश्यक है कि सरकार ने जिन नागरिकों को केंद्र में रखकर यह योजना तैयार की है, उन तक योजनाओं के बारे में सभी तरह की जानकारियाँ पहुँचाई जाये। आयुष्मान भारत योजना के बारे में जन सामान्य तक सूचनाओं, संदेशों और जागरूकता कार्यक्रमों को पहुँचाने के लिए सरकार, स्वास्थ्य विभाग,

स्थानीय प्रशासन, गैर सरकारी संस्थाएँ और जनसंचार माध्यम किस तरह से कार्य कर रहे हैं, प्रस्तुत अध्ययन में इसे रेखाँकित करने और इनकी भूमिका का विश्लेषण किया गया है।

महत्वपूर्ण शब्द – आयुष्मान भारत योजना, प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना, आयुष्मान आरोग्य मंदिर, जागरूकता कार्यक्रम, संचार अभियान, जनसंचार माध्यम।

अध्ययन प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र में आयुष्मान भारत योजना के विभिन्न घटकों कें अंर्तगत अपनाई जाने वाली संचार रणनीतियों और जागरूकता कार्यक्रमों की भूमिका का विश्लेषण किया गया है।

आयुष्मान भारत योजना – भारत सरकार के वर्ष 2018–19 के बजट में सरकार ने आयुष्मान भारत योजना की घोषणा की। वित्त मंत्री अरूण जेटली ने बजट भाषण में निवारण और स्वास्थ्य संवर्धन दोनों को सम्मिलित करते हुए प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक देखरेख प्रणाली में स्वास्थ्य समस्या से व्यावहारिक ढ़ंग से निपटने के उद्देश्य से बनाये गये आयुष्मान भारत के भाग के रूप में दो प्रमुख पहलों 'आयुष्मान भारत – प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना' और 'आयुष्मान भारत – स्वास्थ्य और कल्याण केंद्र' की घोषणा की। वर्ष 2021 में आयुष्मान भारत योजना को विस्तार देते हुए इसमें दो नये स्तंभ 'आयुष्मान भारत – हेल्थ इंफ्रास्ट्राक्चर मिशन' और 'आयुष्मान भारत डिजिटल मिशन' को जोड़ा गया।

आयुष्मान आरोग्य मंदिर : वित्त मंत्री ने बजट भाषण (वर्ष 2018–19) में जानकारी दी कि 'राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति, 2017 में स्वास्थ्य प्रणाली की नींव के रूप में स्वास्थ्य और कल्याण केंद्रों (हेल्थ ऐंड वेलनेस सेंटर) की परिकल्पना की गई है।' वर्ष 2018 में इस योजना की शुरूआत हुई। वर्ष 2023 में आयुष्मान भारत – स्वास्थ्य और कल्याण केंद्र का नाम परिवर्तित कर 'आयुष्मान आरोग्य मंदिर' कर दिया गया। आयुष्मान आरोग्य मंदिरों को विकसित कर इनके माध्यम से असंचारी रोगों, मातृत्व तथा बाल स्वास्थ्य सेवाएँ, आवश्यक दवाइयाँ और नैदानिक सुविधाएँ निशुल्क उपलब्ध कराये जाने की घोषणा की गई। 'आयुष्मान आरोग्य मंदिर' (हेल्थ ऐंड वेलनेस सेंटर) के माध्यम से वर्तमान स्वास्थ्य उपकेंद्रों और प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों में सुविधाओं की बढ़ोत्तरी कर 1,50,000 (एक लाख पचास हजार) आयुष्मान आरोग्य मंदिर तैयार किये जाने का काम शुरू हुआ।

आयुष्मान भारत–प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना : आयुष्मान भारत योजना के दूसरे भाग के रूप में देश के 10 करोड़ से अधिक गरीब और कमजोर परिवारों को द्वितीयक और तृतीयक देख–रेख अस्पताल में भर्ती होने के लिए प्रति परिवार प्रति वर्ष पाँच लाख रूपये तक स्वास्थ्य बीमा कवरेज प्रदान करने की घोषणा की गई। वर्ष 2018 से आयुष्मान भारत – प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना क्रियान्वित की जा रही हैं।

प्रधानमंत्री–आयुष्मान भारत हेल्थ इंफ्रास्ट्राक्चर मिशन : भारत सरकार के बजट 2021–2022 में प्रधानमंत्री आत्मनिर्भर स्वस्थ भारत योजना 64,180 करोड़ रूपये के परिव्यय के साथ 6 वर्ष के लिए शुरू करने की घोषणा की गई, जिसका नाम परिवर्तित कर 'प्रधानमंत्री – आयुष्मान भारत हेल्थ इंफ्रास्ट्राक्चर मिशन' कर दिया गया (पीआईबी)। आयुष्मान भारत हेल्थ इंफ्रास्ट्राक्चर मिशन के अंर्तगत 17,788 ग्रामीण और 11,024 शहरी स्वास्थ्य और आरोग्य केंद्रों के लिए समर्थन, 11 राज्यों में सभी जिलों में एकीकृत लोक स्वास्थ्य प्रयोगशालाओं और 3382 ब्लॉक लोक स्वास्थ्य इकाईयाँ की स्थापना, 602 जिलों और 12 केंद्रीय संस्थानों में क्रिटिकल केयर हॉस्पिटल ब्लाक की स्थापना, राष्ट्रीय रोग नियंत्रण केंद्र की पाँच क्षेत्रीय शाखाओं और 20 महानगर स्वास्थ्य निगरानी इकाइयों को सुदृढ़ करना, एकीकृत स्वास्थ्य सूचना पोर्टल का सभी राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में विस्तार, 32 विमानपत्तनों, 11 बंदरगाहों और 7 लैंड क्रॉसिंग्स पर स्थित 17 नई लोक स्वास्थ्य इकाइयों का क्रियान्वयन और 33 वर्तमान लोक स्वास्थ्य इकाइयों का सशक्तिकरण, 15 आकस्मिक स्वास्थ्य क्रियान्वयन केंद्रों और 2 मोबाइल अस्पतालों की स्थापना, विश्व स्वास्थ्य संगठन दक्षिण पूर्व एशिया क्षेत्र के क्षेत्रीय अनुसंधान प्लेटफार्म की स्थापना, 9 बायो सेफ्टी लेवल – ।।। प्रयोगशालाओं की

स्थापना और 4 क्षेत्रीय राष्ट्रीय संस्थानों की स्थापना का लक्ष्य निर्धारित किया गया है (बजट 2021–2022, भारत सरकार)।

आयुष्मान भारत डिजिटल मिशन : आयुष्मान भारत डिजिटल मिशन' की शुरूआत 27 सितंबर, 2021 को हुई। इसका उद्देश्य स्वास्थ्य देखभाल पारिस्थितिकी तंत्र के हितधारकों को जोड़ने वाला एक डिजिटल मार्ग तैयार करना है। इस योजना के माध्यम से 2 वर्षों में 45 करोड़ से अधिक आयुष्मान भारत स्वास्थ्य खाते (आभा) बनाये गये हैं। इन स्वास्थ्य खातों से 30 करोड़ से अधिक स्वास्थ्य रिकॉर्ड जुड़े हुए हैं। डिजिटल प्रौद्योगिकियों का उपयोग करके स्वास्थ्य सेवा वितरण को सशक्त करना इसका उद्देश्य है (पीआईबी)।

आयुष्मान भारत योजना के प्रति जागरूकता –

प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना के लाभार्थियों तक योजना से जुड़ी जानकारियाँ पहुँचाने, उन्हें योजना का लाभ दिलाने, आयुष्मान आरोग्य मंदिरों में उपलब्ध सुविधाओं के बारे में ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में रहने वाले लोगों तक सूचनाएँ पहुँचाने, आयुष्मान भारत डिजिटल मिशन के अंर्तगत बनाये जाने वाले आभा अकाउंट की जानकारी लोगों तक पहुँचाने के लिए विभिन्न तरह के कार्यक्रम और अभियान संचालित होते रहे हैं, जिनका प्रस्तुत आलेख में विश्लेषण किया जा रहा है।

आयुष्मान भव अभियान – देश के सभी गाँव और कस्बों को सभी स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं से संतृप्त करने के उद्देश्य से आयुष्मान भव पहल की शुरूआत की गई है। इस पहल के अंर्तगत 'आयुष्मान आपके द्वार 3. 0', आयुष्मान सभा, स्वास्थ्य और कल्याण केंद्र व सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र पर आयुष्मान मेले का आयोजन, और सभी स्वास्थ्य सेवाओं से संतृप्त करते हुए ग्राम पंचायतों व नगरीय वार्डों को आयुष्मान ग्राम पंचायत/आयुष्मान वार्ड की स्थिति में लेकर आने जैसे लक्ष्यों को निर्धारित किया गया है। आयुष्मान भव अभियान का आरंभ 13 सितंबर 2023 को भारत की राष्ट्रपति श्रीमती द्रौपदी मुर्मू द्वारा किया गया।

आयुष्मान आपके द्वार 3.0 : राष्ट्रीय स्वास्थ्य प्राधिकरण ने आयुष्मान कार्ड निर्माण में तेजी लाने के उद्देश्य से आयुष्मान भारत – प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना को लागू करने वाले 33 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में 1 मार्च, 2021 को आयुष्मान 1.0 अभियान शुरू किया। आयुष्मान आपके द्वार 2.0 संशोधित आईटी प्लेटफॉर्म, मोबाइल एप्लिकेशन आधारित कार्ड निर्माण और घर–घर अभियान के लिए एफएलडब्ल्यू की भागीदारी के साथ 1 अगस्त, 2022 को शुरू किया गया। भारत सरकार ने 17 सितंबर, 2023 से आयुष्मान आपके द्वार 3.0 आरंभ किया है। इसमें लाभार्थियों को स्व पंजीयन की सुविधा प्रदान की जा रही है। इसमें लाभार्थी स्व पंजीयन कर आयुष्मान कार्ड बना और डाउनलोड कर सकता है। इसे लोकप्रिय बनाने के लिए विभिन्न माध्यमों से ट्यूटोरियल वीडियो प्रसारित किये गये। कार्ड निर्माण के लिए चरणबद्व प्रक्रिया बताने वाले पत्रक वितरित किये गये (आयुष्मान भव)।

आयुष्मान सभा : यह ग्राम पंचायत अथवा नगरीय वार्ड स्तर की सभा है। इसका नेतृत्व ग्राम स्वास्थ्य स्वच्छता पोषण समिति (वीएचएसएनसी), महिला आरोग्य समिति (एमएएस) अथवा वार्ड समिति करती है। इसके अंतर्गत पात्र लाभार्थियों को आयुष्मान कार्ड का वितरण, प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना से उपचार प्राप्त करने वाले लाभार्थियों की सूची का प्रदर्शन, क्षेत्र में सूचीबद्व अस्पतालों की सूची का प्रदर्शन, आभा आईडी के निर्माण की सुविधा, आयुष्मान आरोग्य मंदिरों से दी जाने वाली सुविधाओं की जानकारी, संचारी रोगों, गैर संचारी रोगों, टीबी और सिकल रोग पर जागरूकता प्रदान करने का कार्य किया जाता है। ग्राम पंचायतों और नगरीय वार्डों को यह दायित्व प्रदान किया गया है कि संचार के स्थानीय प्रासंगिक माध्यमों की सहायता से सभी हितधारकों तक आयुष्मान सभा के आयोजन की तिथि और स्थान के बारे में सूचना

पहुँचाएं। स्वास्थ्य मेले की जानकारी प्रिंट, ऑडियो–विजुअल, सोशल मीडिया, रेडियो चैनल, नुक्कड़ नाटक समेत अन्य माध्यमों से कार्यक्रम से पहले और बाद में प्रसारित की जाये (आयुष्मान भव)।

आयुष्मान मेला : आयुष्मान आरोग्य मंदिर पर प्रत्येक सप्ताह के शनिवार को स्वास्थ्य मेले का आयोजन किया जाता है। माह के प्रत्येक सप्ताह के मेले का आयोजन अलग–अलग विशेष थीम पर किया जाता है। पहले सप्ताह की मुख्य थीम गैर संचारी रोग, दूसरे सप्ताह की मुख्य थीम क्षय रोग, कुष्ठ रोग और अन्य संचारी रोग, तीसरे सप्ताह की मुख्य थीम मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य और पोषण और चौथे सप्ताह की मुख्य थीम राज्य की स्थानीय आवश्कताओं के अनुरूप निर्धारित की जाती है। सभी मेलों में मुख्य थीम के अतिरिक्त आभा आईडी का निर्माण, आयुष्मान भारत कार्ड का निर्माण, व्यापम प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएँ, आयुष, मानसिक स्वास्थ्य सेवाएँ, बुजुर्ग और उपशामक देखभाल, कल्याण सहायता और गतिविधियाँ, निशुल्क दवाएँ, निदान और टेलीपरामर्श सेवाएँ उपलब्ध होती हैं। मेले का यह उद्देश्य है कि वंचित जनसंख्या तक व्यापक स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच, उपलब्धता, सामर्थ्य और स्वीकार्यता में वृद्वि हो। लोगों के बीच व्यवहार परिवर्तन संचार के माध्यम से स्वास्थ्य और स्वस्थ जीवन शैली के बारे में जागरूकता पैदा करें। स्थानीय कला और संस्कृति सहित मल्टीमीडिया का उपयोग करके जीवनशैली में संशोधन और कल्याण संवर्धन गतिविधियों का संचालन, स्वास्थ्य मेले की जानकारी का प्रचार–प्रसार प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक, सोशल मीडिया और नुक्कड़ नाटकों के माध्यम से मेले के आयोजन से पूर्व और आयोजन के पश्चात किया जाता है (आयुष्मान भव)।

आयुष्मान ग्राम पंचायत/नगरीय वार्ड : स्वास्थ्य योजनाओं को सफलतापूर्वक पूरा करने वाली ग्राम पंचायतों को आयुष्मान ग्राम पंचायत या आयुष्मान शहरी वार्ड का दर्जा प्रदान किया जाता है। आयुष्मान कार्ड वितरण, आभा आईडी का निर्माण, मधुमेह और उच्च रक्तचाप के लिए स्क्रीनिंग, टीबी जाँच की संख्या, सफल उपचार परिणाम वाले टीबी रोगियों की संख्या, सिकल रोग और कार्ड वितरण के लिए स्क्रीनिंग जैसे संकेतकों पर निर्धारित कवरेज प्राप्त करने वाले पंचायतों या वार्डों को आयुष्मान ग्राम पंचायत या आयुष्मान शहरी वार्ड का दर्जा प्रदान किया जाता है (आयुष्मान भव)।

आरोग्य मित्र – आयुष्मान भारत प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना के अंर्तगत सूचीबद्व अस्पतालों में लाभार्थियों की सहायता के लिए आरोग्य मित्र की नियुक्ति होती है। सरकारी सूचीबद्व अस्पतालों में आरोग्य मित्र की अलग से नियुक्ति की जाती है अथवा किसी वर्तमान कर्मचारी को आरोग्य मित्र का दायित्व प्रदान किया जाता है। सूचीबद्व निजी अस्पतालों को स्वयं के खर्च पर आरोग्य मित्र नियुक्त करना होता है। आरोग्य मित्र लाभार्थी की पात्रता के संबंध में पुष्टि करता है और उपचार के संबंध में पूर्व अनुमति व क्लेम हेतु अनुरोध प्रेषित करता है। यह प्रक्रियाएं वह ऑनलाइन पूरी करता है। किसी तरह की समस्या आने पर वह जिला समन्वयक से फोन के माध्यम से संपर्क करता है। वह लाभार्थी को बीमारी के उपचार से जुड़ी सभी जानकारियाँ प्रदान करता है। लाभार्थी को समय से उपचार की सुविधा दिलाने के लिए लाभार्थी की पहचान, प्रमाणीकरण और पात्रता के संबंध में पुष्टि का दायित्व निभाता है (नेशनल क्वालिफिकेशन रजिस्टर)।

आशा/ए.एन.एम./पंचायत सचिव – आयुष्मान भारत प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना के लाभार्थियों की पहचान कर आयुष्मान कार्ड बनाने के लिए प्रेरित करने का दायित्व आशा/ए.एन.एम./पंचायत सचिव समेत अन्य कार्मिकों को प्रदान किया गया है। इन सभी को आयुष्मान कार्ड के प्रति जागरूकता के प्रसार का भी दायित्व दिया गया है। इसके अतिरिक्त आयुष्मान सभा के आयोजन और आयुष्मान भारत डिजिटल मिशन के अंर्तगत आभा आईडी बनाने में भी आशा/ए.एन.एम./पंचायत सचिव की भूमिका निर्धारित की गई है।

आरोग्य मेला – उत्तर प्रदेश सरकार ने विभिन्न स्वास्थ्य सेवाएं एक ही स्थान पर उपलब्ध कराने के लक्ष्य के साथ प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों पर मुख्यमंत्री आरोग्य मेलों की शुरूआत वर्ष 2020 में की। प्रत्येक रविवार

को आयोजित होने वाले इस मेले में आयुष्मान भारत – प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना के लाभार्थियों के आयुष्मान कार्ड भी बनाये जाते हैं। जुलाई 2023 में प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार आरोग्य मेलों में 1.32 करोड़ लाभार्थियों के आयुष्मान कार्ड बनाये गये (दैनिक जागरण वेबसाइट)।

जनसंचार माध्यम – आयुष्मान भारत योजना के प्रति आम लोगों तक सूचनाओं को पहुंचाने में जनसंचार माध्यमों ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। दूरदर्शन और निजी समाचार चैनलों पर समाचारों के बुलेटिन में आयुष्मान भारत योजना के विभिन्न स्तंभों के बारे में सरकार की ओर से जारी सूचनाएँ, घोषणाएँ, निर्णय, नियमों में परिवर्तन, प्रगति से जुड़े आँकड़े आदि निरंतर प्रसारित किये जाते हैं। आकाशवाणी के माध्यम से स्वास्थ्य से जुड़े कार्यक्रमों में आयुष्मान योजना संबंधी सूचनाएँ और निरंतर समाचार बुलेटिन में आयुष्मान भारत योजना से जुड़े समाचार प्रमुख रूप से प्रसारित होते हैं। दूरदर्शन और आकाशवाणी के विभिन्न चैनलों पर स्वास्थ्य विभाग से जुड़े विशेषज्ञ साक्षात्कार आधारित कार्यक्रमों में योजना के संबंध में विस्तार से जानकारी देते हैं। समाचार पत्रों में आयुष्मान से जुड़ी गतिविधियाँ और उनसे संबंधित समाचार प्रकाशित किये जाते हैं। पत्रिकाओं में आयुष्मान भारत योजना पर आधारित विस्तृत सूचनाप्रद आलेख प्रकाशित होते हैं। जनसंचार माध्यमों के रूप में इंटरनेट पर उपलब्ध समाचार और स्वास्थ्य आधारित वेबसाइट, ऐप, वीडियो प्लेटफॉर्म आदि पर आयुष्मान से जुड़ी जानकारियां और समाचार प्रचूर मात्रा में उपलब्ध हैं। विभिन्न जनसंचार माध्यमों पर योजना से जुड़े विज्ञापन भी प्रकाशित और प्रसारित होते हैं। इन विज्ञापनों में योजना से संबंधित सूचनाएं होती हैं।

प्रेस इंफॉर्मेशन ब्यूरो/सूचना विभाग–भारत सरकार का प्रेस इंफॉर्मेशन ब्यूरो और प्रदेशों के सूचना–जनसंपर्क विभाग आयुष्मान भारत से जुड़ी सूचनाओं को जनसंचार माध्यमों तक त्वरित गति से पहुँचाने के कार्य निरंतर करते हैं। आयुष्मान भारत योजना से जुड़े विभिन्न आयोजनों, कार्यक्रमों और निर्णयों को समाचार के रूप में तैयार कर उन्हें जनसंचार माध्यमों और समाचार एजेंसियों तक पहुँचाने में पी.आई.बी और राज्यों के सूचना–जनसंपर्क विभाग महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रेस इंफॉर्मेशन ब्यूरो भारत सरकार और उनके विभागों, मंत्रियों, अधिकारियों से संबंधित समाचारों और सूचनाओं को राष्ट्रीय स्तर पर जारी करता है। राज्य के मुख्यालय से लेकर जिलों तक में सरकार और स्वास्थ्य विभाग द्वारा जलाये जा रहे अभियानों, बैठकों से संबंधित समाचारों को सूचना एवं जनसंपर्क विभाग निरंतर जनसंचार माध्यमों और समाचार एजेंसियों तक पहुँचाकर जन सामान्य तक जानकारियों के पहुँचने की भूमिका तैयार करता है।

स्वास्थ्य जागरूकता कार्यक्रम – स्वास्थ्य विभाग द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य जागरूकता पर आधारित कई तरह के कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। गांव में कैंप का आयोजन कर बीमारियों से बचाव और स्वास्थ्य विभाग की योजनाओं के बारे में जानकारी दी जाती है। स्वास्थ्य विभाग की वैन भी ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य संबंधी सूचनाओं और जागरूकता के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इन सभी आयोजनों और अभियानों में सूचनाओं के रूप में स्वास्थ्य देखभाल और बीमारियों से बचाव की सूचनाओं के अतिरिक्त आयुष्मान भारत योजना से जुड़ी जानकारियां सम्मिलित रहती हैं।

विकसित भारत संकल्प यात्रा – भारत सरकार की योजनाओं से जुड़ी जानकारी और योजनाओं का लाभ पूरे देश में पहुँचाने के उद्येश्य से विकसित भारत संकल्प यात्रा की शुरूआत प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने जनजातीय गौरव दिवस के दिन 15 नवंबर, 2023 को झारखंड के खूंटी से की। इस अवसर पर केंद्र सरकार के प्रमुख कल्याणकारी कार्यक्रमों से जुड़े संदेश प्रचारित करने वाली विशेष रूप से डिजायन की गई पाँच आईईसी (सूचना, शिक्षा और संचार) वैन आसपास के क्षेत्रों में स्थित आदिवासी बहुल जनसंख्या वाले ग्राम पंचायतों से रवाना की गईं। देश भर में आदिवासी बहुल 68 जिलों से राज्यपालों, मुख्यमंत्रियों और अन्य गणमान्य व्यक्तियों ने इस तरह के विशेष आईईसी वाहनों को हरी झंडी दिखाकर रवाना किया।

नागरिकों से संपर्क करने और उनमें जागरूकता पैदा करने के उद्देश्य से यह यात्रा शुरू की गई है। विकसित भारत संकल्प यात्रा के 25 जनवरी 2024 तक देश के हर जिले से गुजरते हुए 2.55 लाख से अधिक ग्राम पंचायतों और 3600 से अधिक नगरीय निकायों को कवर करने का उद्देश्य निर्धारित किया गया है। दिनाँक 05 जनवरी, 2024 तक यात्रा के पचास दिनों की अवधि में 1.7 करोड़ से अधिक आयुष्मान कार्ड जारी किये गये और यात्रा के दौरान स्वास्थ्य शिविरों में 2.2 करोड़ से अधिक नागरिकों की स्वास्थ्य की जाँच की गई (प्रेस इंफॉर्मेशन ब्यूरो)।

स्कूल स्वास्थ्य एवं कल्याण कार्यक्रम – स्कूली विद्यार्थियों में स्वस्थ व्यवहार स्थापित करने के उद्देश्य से स्कूल आधारित स्वास्थ्य संवर्धन गतिविधियों को आयुष्मान भारत योजना के स्वास्थ्य एवं कल्याण घटक (आयुष्मान आरोग्य मंदिर) के एक भाग के रूप में सम्मिलित किया गया है। इस कार्यक्रम के अंर्तगत प्रत्येक विद्यालय में एक पुरूष और एक महिला शिक्षक को स्वास्थ्य और कल्याण राजदूत के रूप में नामित कर उन्हें स्वास्थ्य संवर्धन, बीमारी की रोकथाम सहित 11 विषयगत क्षेत्रों में जानकारियाँ प्रदान करने का दायित्व प्रदान किया जा रहा है (एनएचएम)।

शिक्षक मार्गदर्शिका – राष्ट्रीय स्वास्थ्य प्राधिकरण ने आयुष्मान भारत प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना के प्रति शिक्षकों के माध्यम से विद्यार्थियों में जागरूकता उत्पन्न करने के उद्देश्य से शिक्षक मार्गदर्शिका तैयार की है। इस पहल का उद्देश्य विद्यार्थियों को जागरूक कर उनके माध्यम से माता–पिता अथवा अभिभावक को आयुष्मान कार्ड बनवाने के लिए प्रेरित करना है। मार्गदर्शिका के माध्यम से कई रोचक गतिविधियों को आयोजित करने की रूपरेखा तैयार की गई है और इन गतिविधियों के लिए स्कूल किट तैयार किया गया है। इसके अंर्तगत मास्टर आयुष्मान कॉमिक बुक, मास्टर आयुष्मान पीएम जय एफ.ए.क्यू, प्रार्थना सभा के दौरान आयुष्मान भारत शपथ का गायन, टोल फ्री नंबर 14555 पर डेमो कॉल, आयुष्मान भारत पीएम जय पर केस स्टडी, आयुष्मान भारत पीएम जय पर स्लोगन लिखने की प्रतियोगिता, आयुष्मान भारत पीएम जय पर चित्रकला प्रतियोगिता का आयोजन, अपनी कहानी आयुष्मान भारत पीएम जय से साझा करना, आरोग्य मित्र अथवा कॉमन सर्विस सेंटर के साथ बातचीत करना, पीएम जय पोशम पा गीत जैसी गतिविधियाँ विद्यार्थियों के लिए तैयार की गई हैं। स्कूली विद्यार्थियों में आयुष्मान भारत पीएम जय योजना के सम्बन्ध में जागरूकता उत्पन्न करना उपरोक्त गतिविधियों का उद्देश्य है (एनएचए)।

निष्कर्ष – देश के सभी नागरिकों तक आवश्यक स्वास्थ्य सेवाओं और सुविधाओं की उपलब्धता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से संचालित आयुष्मान भारत योजना के विभिन्न घटकों के संबंध में जागरूकता के प्रसार के लिए कई तरह के कार्यक्रम संचालित हो रहे हैं। योजनाओं के क्रियान्वयन के साथ संचार और जागरूकता कार्यक्रमों की रूपरेखा को भी संबद्ध किया गया है। ग्रामीणों, महिलाओं, विद्यार्थियों समेत विभिन्न वर्गों को केंद्रित रखते हुए संचार और जागरूकता कार्यक्रमों की रणनीति निर्धारित की गई है। सरकार के नियंत्रण में आने वाले प्रसारण माध्यमों और स्वतंत्र जनसंचार माध्यमों द्वारा इस योजना के प्रति जागरूकता के प्रसार में निरंतर अपनी भूमिका का निर्वाह किया गया है। संचार अभियानों और जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से बड़ी संख्या में लाभार्थियों को योजनाओं का लाभ दिलाने में सफलता प्राप्त हुई है। वर्तमान में संचालित संचार अभियानों और जागरूकता कार्यक्रमों को विस्तारित कर लाभार्थियों के उन समूहों तक पहुँचाने की आवश्यकता है, जिन लोगों तक योजना के घटकों के संबंध में पर्याप्त जानकारी नहीं पहुँच सकी है। इस प्रयास से जनसंख्या के व्यापक हिस्से तक योजनाओं का लाभ पहुंचाना सुनिश्चित किया जा सकता है।

संदर्भ –

1- संसद. (2021). बजट 2021–2022 वित्त मंत्री का भाषण. https://sansad.in/ls/hi/knowledge-centre/speeches से पुर्नप्राप्त

2- प्रेस इंफॉर्मेशन ब्यूरो. आरोग्य मंथन 2023 आयुष्मान भारत पीएम–जेएवाई के 5 साल और आयुष्मान भारत डिजिटल मिशन के 2 साल होने के उपलक्ष्य में. https://pib.gov.in/PressReleaseIframePage.aspx?PRID=1960140 से पुर्नप्राप्त

3- आयुष्मान भव. आयुष्मान–आपके द्वार 3.0. https://ayushmanbhav.mohfw.gov.in/ayushman-apke-dwar-3.0 से पुर्नप्राप्त

4- आयुष्मान भव. आयुष्मान सभा. http://ayushmanbhav.mohfw.gov.in/ayushman-sabha से पुर्नप्राप्त

5- आयुष्मान भव. https://ayushmanbhav.mohfw.gov.in/ayushman-mela से पुर्नप्राप्त

6- आयुष्मान भव. आयुष्मान ग्राम पंचायत अथवा नगरीय वार्ड. http//ayushmanbhav.mohfw.gov.in/ayushman-gram-panchayat-or-urban-wards से पुर्नप्राप्त

7- नेशनल क्वालिफिकेशन रजिस्टर. https://nqr.gov.in/sites/default/files/HSS_Q6105_v2.0:20:281:29.pdf से पुर्नप्राप्त

8- दैनिक जागरण वेबसाइट. (2023). UP News : ब्रांड बना सीएम आरोग्य मेला, अब तक 12 करोड़ लोगों का इलाज ; पूरे देश में लागू होगा यह मॉडल. www.jagran.com/uttar-pradesh/lucknow-city-cm-arogya-mela-became-a-brand-so-far-12-crore-people-have-been-treated-this-model-will-be-implemented-in-the-country-23484530.html से पुर्नप्राप्त

9- प्रेस इंफॉर्मेशन ब्यूरो. (2021). प्रधानमंत्री आयुष्मान भारत स्वास्थ्य अवसंरचना मिशन. https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1776530 से पुर्नप्राप्त

10- नेशनल हेल्थ मिशन. स्कूल स्वास्थ्य एवं कल्याण कार्यक्रम. https://nhm.gov.in/index1.php?lang=1&level=3&sublinkid=1384&lid=746 से पुर्नप्राप्त

11- नेशनल हेल्थ अथॉरिटी. http:nha.gov.in/img/resources/School-Guidebook-Hindi.pdf से पुर्नप्राप्त

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

झारखंड की महिलाओं की राजनीतिक सहभागिताः दशा और दिशा

तलत परविन
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
बिनोद बिहारी महतो कोयलांचल विश्वविधालय, धनबाद

सारांशः–

प्रस्तुत शोध पत्र 'झारखंड की महिलाओं की राजनीतिक सहभागिताः दशा और दिशा' एक विस्तृत व व्यापक विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जिसके अंतर्गत राजनीतिक सहभागिता की अवधारणा एवं प्रकृति का वर्णन, झारखंड की महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता की वर्तमान स्थिति और राजनीतिक सहभागिता सम्बंधी बाधाओं का वर्णन तथा महिला सम्बंधी योजनाओं का भी उल्लेख इस शोध पत्र में किया गया है। चुँकी भारत के मानचित्र पर झारखंड की स्थिती बेहद महत्वपूर्ण मानी जाती है, झारखंड की राजनीतिक परिदृश्य से राज्य ही नहीं बल्कि देश की राजनीति भी प्रभावित होती है। यहाँ की राजनीति जिस तरह से अचानक से करवट ले लेती है वह पूरे देश में चर्चा का विषय बन जाता है। झारखंड की राजनीतिक उतार चढ़ाव का असर पूरे राज्य पर तो पड़ता ही है, साथ ही साथ महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी भी इससे प्रभावित होती है। झारखंड की महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक स्थिति बेहद निम्न है वे हिंसा एवं अपराध की भी शिकार हैं। अमीरों का वर्चस्व, माफियाओं का दबदबा तथा हिंसा के इस प्रतिकूल माहौल में महिलाएँ राजनीति में कैसा प्रदर्शन कर रही है? इसके बारे में बहुत कुछ नही लिखा गया है। झारखंड में राजनीतिक अस्थिरता होने के बावजूद भी राजनीतिक गलियारों में महिलाओं का प्रवेश, जनजातीय महिलाओं की बढ़ती राजनीतिक रूची, चुनाव में महिला मतदाताओं की भागीदारी, अध्ययन का विषय है।

मुख्य शब्द :–राजनीति, सहभागिता, झारखंड, महिला, अधिकार, भ्रष्टाचार,

प्रस्तावना :–

राजनीतिक सहभागिता सभी राजनीतिक व्यवस्थाओं के मध्य अनिवार्य तत्व है। लोकतांत्रिक शासन प्रणाली का बुनियादी आधार ही सहभागिता है क्योंकि इसका संचालन जनता के द्वारा किया जाता है। यद्यपि राजनीतिक सहभागिता का अध्ययन लोकतंत्र के अध्ययन से जुङा हुआ है।[1] 21वीं शताब्दी में सभी राजनीतिक व्यवस्थाएँ चाहे वे सर्वसत्तावादी, लोकतंत्रवादी, अनुदारवादी या प्रतिक्रियावादी हो, अपने नागरिकों को राजनीति में भाग लेने का अधिकार देती है। व्यक्तियों द्वारा राजनीतिक व्यवस्था के विभिन्न स्तरों पर भाग लेने को राजनीतिक सहभागिता की संज्ञा देते हैं। सामन्य तौर पर नागरिकों के वे कार्य जो सरकार की निर्णयकारी प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं वह राजनीतिक सहभागिता कहलाते है। **लास्की** के अनुसार ''राजनीतिक भागीदारी का अर्थ है कि व्यक्ति राजनीतिक प्रक्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग ले, चाहे वह वोट देना हो, राजनीतिक दलों में शामिल होना हो या सरकार की नीतियों पर प्रभाव डालने की कोशिश करना हो।'' राजनीतिक सहभागिता शब्द का विभिन्न अर्थो में प्रयोग किया जाता है,ऐसा करने से कभी–कभी इस शब्द के स्वअस्तित्व एवं उपयोगिता का भी लोप हो जाता है। दूसरे शब्दों में राजनीतिक सहभागिता लोकतान्त्रिक व्यवस्था में सहमति देने अथवा वापस लेने का एक प्रमुख साधन है जिसके द्वारा शासको को शासितों के प्रति उत्तरदायी बनाया जाता है।

राजनीतिक सहभागिता की प्रकृति :–राजनीतिक प्रकृतितः बहुमुखी होती है और बहुस्तरीय भी। राजनीतिक सहभागिता में मतदान, राजनीतिक दलों का समर्थन, मतदाताओं में राजनीतिक विचारों का प्रचार, विधायकों

से सम्पर्क और अन्य सम्बंधित गतिविधियों सहित ऐसी स्वैच्छिक गतिविधियाँ भी शामिल हैं, जो राजनीतिक गतिविधियों को प्रभावित करती हैं। ऐसी किसी भी तरह की संगठित गतिविधि में शामिल होने को राजनीतिक सहभागिता माना जा सकता है, जो इन सत्ता सम्बंधों को प्रभावित करती हैं या प्रभावित करने का प्रयास करती हैं।[2] महिलाओं की भागीदारी में विभिन्न मुद्दों पर आन्दोलन, समर्थन के लिए बैठकें, विरोध प्रदर्शन और शांति को बढ़ावा देने के आन्दोलन भी शामिल है।[3] भारत जैसे देश में सभ्यता और संस्कृति को काफी अधिक महत्व दिया जाता है। यहाँ की कला,साहित्य दर्शन मानव को आध्यात्म जीवन से जोड़ते है, इसमें भी महिलाओं की अहम भूमिका होती है।[4] पुरूष प्रधान समाज कभी स्वीकार नहीं कर पाया के महिलाओं को भी उनका अधिकार मिले, परन्तु अब पुरूष प्रधान समाज भी महसूस करने लगा है के महिलाओं पर अब उनका दबदबा छूटता जा रहा है, महिलाओं में परिवर्तन की लहर तेजी से फैलती जा रही है।[5] महिलाएँ अब अपने सारे सपने पूरे करने के लिए प्रयासरत हैं। वह हर क्षेत्र में भाग ले रही हैं,राजनीतिक क्षेत्र भी उनकी पसंद बनती जा रही है। वे केन्द्रिय और राज्यों की राजनीति में न सिर्फ भाग ले रही हैं बल्कि प्रतिनिधि भी बन रही हैं।[6]

साहित्य समीक्षा :–

मीणा,एस,(2014)[7], 'जनजातीय महिलाओं की राजनीतिक जागरूकता', इस पुस्तक में जनजातीय महिलाओं की स्थिति से सम्बंधित महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। महिलाओं की स्थिति से उनके विकास के स्तर को जानने में यह पुस्तक सहायक है। राजनीतिक रूप से महिलाएँ विशेष कर जनजातीय महिलाएँ सशक्त हो रही है, पंचायती राज में महिलाओं के लिए आरक्षण से ग्रामीण समुदाय के लोगों की स्थानीय समस्याएँ हल हो रही है, महिलाएँ राजनीति में आने के लिए जागरूक हो रही हैं और वे आधुनिकता से जुड़ रही हैं। **सिन्हा,ए,**(2016)[8], 'शोषण संघर्ष और शहादत', इस पुस्तक में झारखंड राज्य के लोगों के आंदोलन,उनके योगदान तथा जनजातीय लोगों द्वारा दी गई कुर्बानियों का वर्णन मिलता है। आदिवासियों के जल, जंगल और जमीन की रक्षा के लिए की गई लड़ायाँ और माफियाओं, महाजनों, सेठ साहुकारों द्वारा आदिवासियों की बेरहमी से की गई हत्या का वर्णन मिलता है। इतना ही नही पुलिस भी अदिवासियों पर बबर्ता करती थी, पुलिस फायरिंग में आदिवासियों की मौत एक आम बात बन चुकी थी। पुलिस आंदोलनकारियों पर गोलियों कि बौछार करते थे और यदि वे भाग जाते थे तो पुलिस उनके घरों को जला डालती थी या उनके परिवार के महिलाओं पर जुल्म ढ़ाती थी। **कुमार द्विवेदी,ए,के,** (2022)[9], 'रीवा जिले के महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता दशा और दिशा', इस लेख में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी की जानकारी मिलती है। राजनीति में महिलाएँ किस प्रकार सक्रिय भूमिका निभा रही हैं? उनकी राजनीतिक भागीदारी से अन्य महिलाओं में भी जागरूकता आ रही है,और महिलाओं में आत्मविश्वास की भावना में भी तेजी से वृद्धि हो रही है। **शर्मा,पी.डी**,(2017)[10], 'महिला सशक्तिकरण और नारीवाद', इस पुस्तक में महिला सशक्तिकरण और नारी मुक्ति के संघर्षों का वर्णन मिलता है। महिलाएँ बाजारवाद, फैशन, विज्ञान, कानून आदि से प्रभावित हो रही हैं। महिलाएँ अब पहले की तुलना में हर क्षेत्र में सशक्त हो रही हैं। **बिंझा,पी,**(2020)[11],'सोशियो इकोनामिक स्टेटस ऑफ ट्राइबल वूमेन ऑफ झारखंड', इस लेख में झारखंड की आदिवासी महिलाओं की स्थितियों का वर्णन मिलता है। आदिवासी महिलाओं के पास अन्य जातियों की महिलाओं की तुलना में बड़ी सामाजिक, आर्थिक शक्ति और उच्च स्थिति है। आदिवासी समाज में महिलाएँ अपने जीवन के सामाजिक आर्थिक, शैक्षणिक एवं धार्मिक पहलुओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। **देसाई. एन**,(2021)[12] ने 'भारतीय समाज में महिलाएँ,' नामक पुस्तक में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता के अर्थ एवं महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता की जानकारी मिलती है। इस पुस्तक के अध्ययन से महिलाओं में

बढ़ती जागरूकता, संसदीय और विधानसभा चुनावों में महिलाओं की भागीदारी तथा भारतीय समाज की महिलाओं की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एंव शैक्षण्कि स्थिति पर भी विशेष रूप से प्रकाश पड़ता है तथा आर्थिक स्थिति से सम्बन्धित कई प्रकार के आँकड़े भी इस पुस्तक में दिए गए हैं, जो जनगणना पर आधारित हैं।

अध्ययन के उद्देश्य :–

- राजनीतिक सहभागिता की अवधारणा एवं प्रकृति का अध्ययन करना।
- झारखंड की महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता की वर्तमान स्थिति का अध्ययन करना।
- झारखंड की महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता में चुनौतियाँ एवं बाधाओं का वर्णन करना तथा सरकार द्वारा चलाए जा रहे महिला सम्बंधी योजनाओं का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि :–

प्रस्तुत शोध पत्र हेतु द्वितीयक अनुसंधान आँकड़ो का प्रयोग किया गया है, जिसमें मुख्य रूप से भारत के निर्वाचन आयोग द्वारा प्रस्तुत चुनावी आँकड़ो का प्रयोग किया गया है, इसके अलावा जनगणना रिपोर्ट, शोध पुस्तकें, पत्रिकाएँ, लेख तथा वेबसाइट इत्यादि का प्रयोग किया गया है। इस शोध लेख में विश्लेषणात्मक अध्ययन पद्धति को अपनाया गया है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमिः–

भारतीय राजनीति में महिलाओं की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एक बहुत ही जटिल और बहुआयामी कथा है। महिलाएँ मनुष्य जाति की सृष्टि में महत्वपूर्ण योगदान देती है, साथ ही साथ समाज के निमार्ण में भी अहम् भूमिका निभाती आई हैं।[13] इतिहास साक्षी है के महिलाओं ने परिवार से लेकर सत्ता चलाने तक अपनी योग्यता और सूझ बूझ का परिचय देती आई है, बावजूद इसके महिलाओं की स्थिति संतोषजनक नही है। किसी भी देश या समाज की प्रगति इस बात पर निर्भर करती है कि उस समाज अथवा देश में महिलाओं की दशा कैसी है? भारतीय इतिहास महिलाओं के योगदानो को समझने उनकी राजनीतिक समझ एवं कौशल को जानने का आधर प्रदान करता है।[14]

स्वतंत्रतापूर्व :–

प्राचीन एवं मध्यकालीन भारत में महिलाओं की अक्सर शासन और प्रशासन में प्रमुख भूमिका होती थीं। रानी पदिम्नी और रानी दुर्गावती इसके उदाहरण है। हालांकी ये नियम नही बल्कि अपवाद थे और महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी सीमित रही।

स्वतंत्रता संग्राम में महिलाएँः–

20वीं सदी के आरंभ से लेकर मध्य तक ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्रता के लिए संघर्ष ने महिलाओं को राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए एक मंच प्रदान किया। रानी लक्ष्मी बाई, सरोजनी नायडू, एनी बेसेंट, इंदिरा गाँधी जैसी हस्यिों ने स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, महिला अधिकारों की वकालत की और महिलाओं में जागरूकता को बढाया।[15]

स्वतंत्रता के बाद की अवधीः–

भारत 15 अगस्त 1947 को आजाद हुआ। भारत ने एक लोकतांत्रिक संविधान को अपनाया जिसमें स्वतंत्रता की गारंटी दी गई। सभी नागरिकों को लिंग की प्रवाह किए बिना समानता का अधिकार दिया गया। महिलाओं को भी पुरूषों के समान ही वोट देने का अधिकार प्रदान किया गया। महिलाओं ने भी चुनावी राजनीति में भाग लेना प्रारम्भ कर दिया। 1952 में भारत ने पहला आम चुनाव आयोजित किया और कई महिलाएँ संविधान सभा में चुन कर आई।[16]

❖ झारखंड की महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता की दशा

दुनियाँ का चाहे कोई भी देश हो उसकी असल स्थिति का पता वहाँ की महिलाओं की सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक एंव राजनीतिक स्थितियों को देख कर ज्ञात किया जा सकता है। समय के अनुसार महिलाओं की स्थिति में कितना अधिक या कम सुधार हो पाया है यह भी विकास का एक मापक है। किसी भी देश के विकास में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है जिसे नकारा नहीं जा सकता है महिलाएँ देश की धरोहर हैं। वे परम्परा और संस्कृति को संरक्षित करने और उसे बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।[17] यदि झारखंड की बात की जाए तो इसकी स्थापना 15 नवंबर 2000 ई. को हुई, झारखंड खनिज संसाधनों से भरपूर एवं आदिवासी बहुल प्रदेश है। यहाँ कुल आबादी का आधा हिस्सा महिलाओं का है।[18] झारखंड राज्य के निमार्ण के कई वर्ष बीत चुके हैं फिर भी यहाँ की महिलाओं की स्थिति में ज्यादा परिवर्तन देखने को नहीं मिल रहा है। झारखंड के माँग से लेकर झारखंड के निर्माण तक महिलाओं के योग्दानों को नकारा नही जा सकता है। झारखंड की महिलाएँ झारखंड के विकास का आईना हैं। किसी भी राज्य में राजनीति एक ऐसा माध्ययम है जिसके जरिए समाज की दशा और दिशा को जीता जा सकता है। झारखंड की महिलाएँ विशेष कर आदिवासी महिलाएँ कम शिक्षित हैं वे अपने राजनीतिक अधिकारों के शक्ति से ज्यादा परिचित नही हैं,तथा वैधानिक अधिकारों की भी कम जानकारी होने के कारण झारखंड की महिलाएँ घरेलू हिंसा की शिकार हैं, पितृसत्ता द्वारा महिलाओं को उनके कतर्व्य निभाने के लिए सहयोग तो दिया जाता है परन्तु उनके अधिकारों खास कर राजनीतिक अधिकारों के प्रयोग के लिए सहयोग नही दिया जाता है। झारखंड की महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता की कमी का एक मुख्य कारण गरीबी भी है। जल, जंगल और जमीन का मुद्दा झारखंड की राजनीति का केन्द्र बिन्दु रहा है। झारखंड आंदोलन में पुरूषों के साथ–साथ महिलाओं का भी बराबर का योग्दान रहा है बावजूद इसके चाहे केन्द्रीय राजनीति हो या फिर राज्यों की राजनीति हो महिलाओं को वो स्थान अब तक नही मिल पाया है जिसकी वे हकदार हैं। महिलाओं के योगदानों और बलिदानों से लोग अपरिचित हैं कारण है इतिहासकारों द्वारा महिलाओं के बारे में अधिक न लिखा जाना।[19]

लोकसभा में झारखंड की महिलाओं का प्रतिनिधित्व :–

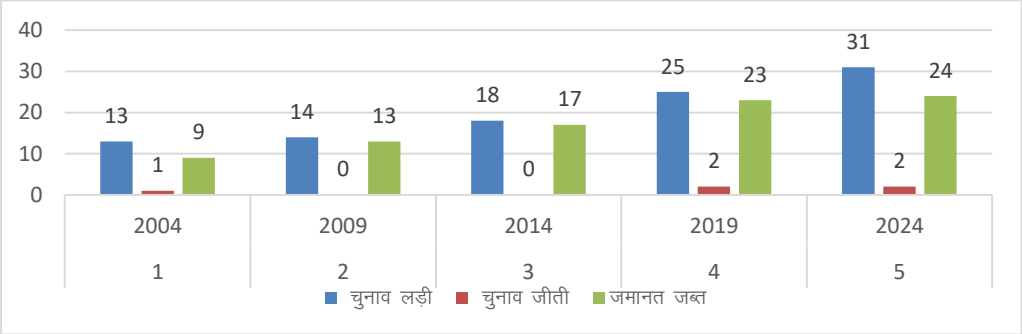
झारखंड से लोकसभा में 14 सीटें और राज्यसभा के लिए 6 सीटें है। झारखंड बनने के बाद 2004 में पहली बार लोकसभा चुनाव हुआ था, इसके बाद 2009, 2014, 2019 और 2024 में लोकसभा चुनाव सम्पन्न हुए। 2024 में लोकसभा का पाँचवां चुनाव सम्पन्न हुआ। राज्य की 14 लोकसभा सीटों पर महिलाओं का प्रतिनिधित्व नीचे की तालिका के द्वारा दर्शाया गया है।

तालिका संख्या– 1

झारखंड की महिलाओं का लोकसभा में प्रतिनिधित्व

क्र.सं	वर्ष	चुनाव लड़ी	चुनाव जीती	जमानत जब्त
1	2004	13	01	09
2	2009	14	00	13
3	2014	18	00	17
4	2019	25	02	23
5	2024	31	02	24

स्त्रोत– भारत निवार्चन आयोग–2024



उपरोक्त तालिका संख्या– 1 के अनुसार 2004 में झारखंड से लोकसभा चुनाव में कुल 13 महिलाएँ चुनाव लड़ी जिसमें से मात्र 1 महिला ही जीत हासिल कर सकी, और 09 महिलाओं की जमानत जब्त हुई। वहीं 2009 के लोकसभा चुनाव में झारखंड से 14 महिलाएँ चुनाव लड़ी जिसमें से एक भी महिलाएँ जीत हासिल नहीं कर सकीं, और 13 महिलाओं की जमानत जब्त की गई। 2014 के चुनाव में कुल 18 महिलाएँ उम्मीदवार थी जिसमें से एक भी जीत हासिल नहीं हर सकीं, और 17 महिलाओं की जमानत जब्त हुई। 2019 के लोकसभा चुनाव में 25 महिलाएँ चुनाव लड़ी जिनमें से मात्र 2 महिलाएँ जीतने में सफल हुई और 23 महिलाओं की जमानत जब्त हुई। 2024 के लोकसभा चुनाव 12 सीटों पर हुए जिस में 31 महिलाएँ चुनाव लड़ी जिसमें से मात्र 2 महिलाएँ ही जीत हासिल कर सकीं और 24 महिलाओं की जमानत जब्त हुई।

अतः निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है के लोकसभा में झारखंड की महिलाओं का प्रतिनिधित्व कभी भी चौंका देने वाला नहीं रहा।

झारखंड विधानसभा और महिला प्रतिनिधित्व :–

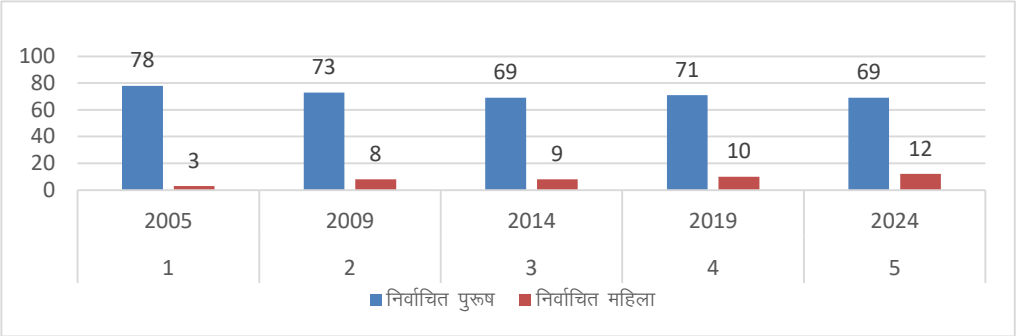
झारखंड राज्य के निर्माण के बाद महिलाओं के आँखों में विकास के जो सपने थे वे अब तक पूरे नही हो पाए हैं। नए राज्य के रूप में झारखंड में महिलाओं की मतदाताओं के रूप में संख्या तो बढ़ी है परन्तु राजनीतिक पदों पर महिलाओं की संख्या हाशिये पर है।[21] झारखंड विधानसभा में कुल 82 सीट है जिसमें से एक सदस्य राज्यापल द्वारा मनानित होता है और 81 निवार्चित सीटें है। जिसमें अनुसूचित जनजाति के लिए 29, अनुसूचित जाति के लिए 08, सामान्य के लिए 44 सीटें आरक्षित हैं। विधानसभा चुनाव की बात करें तो महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ तो रहा है लेकिन उसकी गती बहुत धीमी है।[22]

तालिका संख्या–2

झारखंड विधानसभा चुनाव में महिलाओं का प्रतिनिधित्व

क्र.सं	वर्ष	निर्वाचित पुरूष	निर्वाचित महिला
1	2005	78	03
2	2009	73	08
3	2014	69	09
4	2019	71	10
5	2024	69	12

स्त्रोत– भारत निवार्चन आयोग–2024(झारखंड)



उपरोक्त तालिका संख्या–2 के अनुसार झारखंड के पहले विधानसभा चुनाव 2005 में 81 निर्वाचित सीटों पर 78 पुरूष और 03 महिलाएँ विजित रहीं। वहीं 2009 के विधानसभा चुनाव में 73 पुरूषों ने जीत हासिल की और 08 महिलाएँ चुनाव में सफलता प्राप्त करने मे सफल रहीं। 2014 के झारखंड विधानसभा चुनाव में 69 पुरूष और 09 महिलाएँ सफल रहीं। 2019 के चुनाव में 71 पुरूष तथा 10 महिलाओं ने जीत दर्ज की। 2024 के चुनाव में 69 पुरूष और 12 महिलाओं ने जीत हासिल की।

इस प्रकार से झारखंड विधान सभा चुनाव में महिलाएँ अपने कदम बढ़ा रही हैं परन्तु अब भी उनमें संकोच देखी जा रही है।

झारखंडः पंचायती राज में महिलाओं की भागीदारीः–

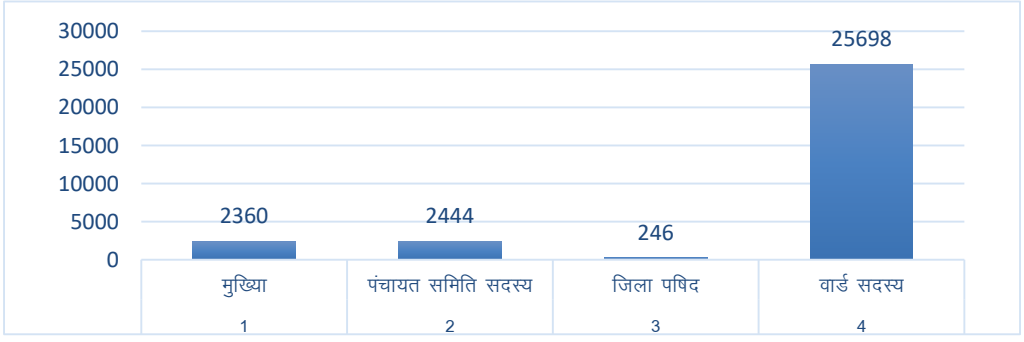
पंचायती राज, भारत में स्थानीय सरकार की एक प्रणाली होती है। जो गाँव में स्वशासन की व्यवस्था है। भारत के पंचायती राज व्यवस्था में ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत शामिल रहती है। इसे आर्थिक विकास के साथ–साथ सामाजिक न्याय को भी मजबूती मिलती है। इतना ही नहीं केन्द्र एवं राज्य सरकारों की योजनाओं के कार्यान्वयन का उत्तरदायित्व भी इसे सौंपा गया है। वर्तमान समय में झारखंड के पंचायती राज संस्थाओं में 56 प्रतिशत महिलाएँ प्रतिनिधित्व कर रही हैं। अब महिलाओं ने पंचायत के पगडंडिनुमा मार्ग पर चल कर झारखंड राज्य के विकास का मार्ग बानाना शुरू कर दिया है जिसका प्रभाव भविष्य में और ज्यादा दिखई पड़ेगा।[24]

तालिका संख्या–3

पंचायती राज में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी

क्र.सं.	वर्गीकरण	संख्या
1	मुख्या	2360
2	पंचायत समिति सदस्य	2444
3	जिला पषिद	246
4	वार्ड सदस्य	25698

https://www.prabhatlhabar.com



उपरोक्त तालिका संख्या– 3 के अनुसार महिला मुख्या की संख्या 2360 है। पंचायत समिति सदस्यों की संख्या 2444 है। जिला परिषदो की संख्या 247 है वहीं महिला वार्ड सदस्यों की संख्या 25698 है।
निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि झारखंड में महिलाएँ धीरे–धीरे राजनीति में रूची लेते हुए साफ देखी जा सकती हैं, लेकिन यह भी सत्य है के कई ऐसे भी उदाहरण सामने आए है जहाँ महिला प्रतिनिधियों के स्थान पर उनके घर के पुरूष निर्णय लेते हैं और महिला मात्र रबर के स्टाम्प की भूमिका निभा रही है। लेकिन इन छोटे मोटे उदाहरणों को नजर अंदाज किया जाए तो पाया जा सकता है के महिला प्रतिनिधियों ने पंचायत के रास्ते विधानसभा और लोकसभा का सफर तय करने के लिए तैयार हो रही हैं।

राजनीतिक दल और महिलाएँः–

आज के समय में दुनियाँ के कई देशों की तरह भारत में भी ज्यादातर राजनीतिक पदों पर पुरूष ही विराजमान हैं महिलाएँ नही। समानता का अधिकार होने के बावजूद भी महिलाएँ निर्णय लेने में अब तक पुरी तरह से स्वतंत्र नही है। शुरूआत से ही पुरूष सत्ता द्वारा महिलाओं की स्वतंत्रता की डकैती होती रही है, और महिलाएँ अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करती रही हैं। पुरूष राजनीतिक कार्यों में महिलाओं को बुद्धिहीन और अल्प अनुभव वाला समझते हैं। राष्ट्रीय दल हो या क्षेत्रीय दल, दलों के सारे निर्णय पुरूष नेताओं के द्वारा ही लिए जाते हैं, महिलाओं को दलों में शामिल ही नही किया जाता है। राजनीतिक दल चुनाव लङने हेतु महिलाओं को टिकट ही नही देते हैं, चाहे बङी पर्टी हो या क्षेत्रीय पार्टी, महिलाओं को टिकट नही मिल पाने के कारण वे प्रत्याशी ही नही बन पाती हैं तो भला प्रतिनिधि कैसे बन सकेंगी? जब–जब महिलाओं को मौका मिला उन्होंने अपने राजनीतिक कतर्व्यो को बखूबी निभाया, वतर्मान समय में महिलाओं की भागीदारी से भ्रष्टाचार के खिलाफ संघर्ष में मजबूती मिल रही है, स्थानीय स्तर पर विकास कार्यो की गुणवत्ता में वृद्धि हो रही है। झारखंड राज्य की महिलाओं की सक्रिय सहभागिता ने उनके सशक्तिकरण को नई उर्जा प्रदान की है।[26]

झारखंड की राजनीति में महिलाओं की भागीदारी सम्बंधि चुनौतियाँ एवं बाधाएँः–

झारखंड की महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता से सम्बंधित कई प्रकार की समस्याएँ एवं चुनौतियाँ है जो निम्नलिखित है।

1. शिक्षाः– शिक्षा सामाजिक परिवर्तन की आधारशीला है। झारखंड की महिलाओं की साक्षरता दर मात्र 64. 7 प्रतिशत है।[27] शिक्षा की कमी के कारण महिलाएँ प्रत्येक क्षेत्र में पिछङी हुई है। राजनीतिक क्षेत्र में उनका पिछङापन साफ दिखाई पङता है।

2. स्वास्थ्यः– झारखंड की महिलाओं में पोषण की कमी है, महिलाओं में रक्त अल्पता, टी. वी,हैजा,फाईलेरिया, आदि बिमारियाँ अधिक पाई जाती हैं।

3. अर्थव्यवस्थाः– झारखंड की महिलाएँ खास कर आदिवासी महिलाएँ आर्थिक रूप से बेहद कमजोर हैं, जिस कारण वे शोषण की शिकार हैं।

4. निर्णय लेने की क्षमताः– झारखंड की महिलाओं में निर्णय लेने की क्षमता में कमी पायी जाती है, परिवार के अंदर और बाहर दोनों जगहों पर वे निर्णय लेने में कमजोर दिखाई पङती हैं।

5. अंधविश्वास एवं रूढिवादी :– चुँकी महिलाओं की साक्षरता दर बेहद कम है अतः महिलाएँ अंधविश्वास और रूढिवाद की शिकार हैं।

5. लैंगिक असमानताः– लैंगिक असमानता के कारण महिलाएँ प्रत्येक क्षेत्र में पिछड़ी हुई हैं। शुरूआत ये ही पुरूषों की तुलना में महिलाओं को कम आंका जाता है।[28]

❖ झारखंड की महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता की दिशा

वर्तमान समय में विभिन्न वर्गों में व्याप्त जड़ता के खंडित होने की प्रक्रिया तेजी से शुरू हो चुकी है। विभिन्न वर्गो में अपने दायित्वों को बोध की भावना प्रबल हो रही है। महिलाएँ भी नई चेतना और जागृति से सुसज्जित हो रही हैं। समाज ने महिलाओं के प्रगति पर जो प्रतिबंध लगाए गए थे वे अब एक–एक करके समाप्त होने लगे हैं। स्वतंत्रता के बाद संविधान में ऐसे अनेकों प्रावधान किए गए जिनसे महिलाओं तथा पिछड़े वर्गो को आगे बढ़ाने के विशेष अवसर मिले हैं, महिलाओं को पुरूषों के समान विकास के अवसरों की गारंटी संविधान में दि गई है।[29] संवैधानिक प्रावधानों के कारण बड़े पैमाने पर शासन स्तर पर ऐसे अनेक योजनाएँ और नीतियाँ बनाई जा रही हैं जो महिला विकास पर केन्द्रित है।

भारतीय समाज की सब से बड़ी समस्या राजनीति में नैतिकता का कमजोर होना रहा है। यह भारतीय राजनीति के उस नैतिक पतन की तरफ ईशारा करता है जहाँ सत्ताधारी अपने एजेंडे के मुताबिक सत्ता में बने रहने के लिए लोकतंत्र की व्यवस्था और संस्थाओं का इस्तेमाल करती है। झारखंड की राजनीति में हमेंशा अतार चढ़ाव देखा जाता रहा है। झारखंड की महिलाओं को वोट बैंक के रूप में इस्तेमाल एक आम बात बन चुकी थी परन्तु बीते कुछ वर्षो से महिलाओं में जागरूकता देखने को मिल रही है। अब वे भी अपने सपने को पूरा करने में जुट गई है। अतः राज्य को भी चाहिए के वे महिलाओं को राजनीतिक रूप से और सशक्त करने के लिए संगठनात्मक प्रयास करें, कुशल नेतृत्व और कौशल विकास के लिए शिक्षा एवं रोजगार को प्रशिक्षण से जोड़ना भी एक प्रभावशाली कदम होगा। झारखंड की आदिवासी महिलाओं को राजनीतिक रूप से सशक्त बनाने से झारखंड की आदिवासी संस्कृति के संरक्षण को भी बढ़ावा मिलेगा। तथा भारत को गौरान्वित करने वाले कला और संस्कृति के संरक्षण में भी वृद्धि हो सकेगी, जो भारत के धरोहर के रूप में कार्य करते हैं और भारत को अलग पहचान देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। झारखंड के जनजातियों की अनोखी कला एवं संस्कृति पूरे विश्व में प्रसिद्ध हैं, इन्हें सहेजने में आदिवासी महिलाओं की अहम भूमिका रही है। अगर हम चाहते हैं के ऐसी कला और संस्कृति खत्म न हो वो हमेंशा बनी रहे तो इसे बढ़ावा देने और इसके संरक्षित करने की जरूरत है, और महिलाओं को भी सशक्त बनाने की आवश्यकता है।[30]

महिलाओं के लिए सरकारी कार्यक्रम और नीतियाँ :–

महिलाओं के लिए केन्द्र सरकार द्वारा कई कार्यक्रम और नीतियाँ चलाई जा रही हैं ताकि महिलाएँ सशक्त हो सकें और हर क्षेत्र में अपने कदम बढ़ा सकें। कुछ सरकारी कार्यक्रम और नीतियाँ इस प्रकार हैं–

1. स्वावलम्बन प्रोग्राम
2. महिला समृद्धि योजना
3. महिला समाख्या योजना
4. प्रियदर्शिनी याजना
5. स्व–शक्ति प्रोजेक्ट
6. स्वयंसिद्धा योजना
7. उज्वला योजना
8. जननी सुरक्षा योजना
9. राष्ट्रीय महिला कोष

10. स्टैंड अप इंडिया
11. बेटी बचाव बेटी पढ़ाओ
12. धनलक्ष्मी योजना
13. माध्यमिक शिक्षा के लिए लड़कियों के लिए प्रोत्साहन की राष्ट्रीय योजना
14. महात्मा गाँधी नेशनल रूरल इम्पलाईमेंट ग्रायरण्टी स्कीम
15. नारी शक्ति पुरस्कार ।[31]

महिलाओं और लड़कियों के लिए झारखंड सरकार की योजनाएँ :–

झारखंड सरकर भी महिलाओं और बेटियों कि स्थिति में सुधार हेतु कई योजनाएँ और कार्यक्रम चला रही है जो इस प्रकार है।

1. मुख्यमंत्री सुकन्या योजना
2. तेजस्विनी योजना
3. मुख्यमंत्री कन्यादान योजना
4. महिला उधमियों के लिए निःशुल्क मोबाईल योजना
5. सुकन्या समृद्धि योजना
6. मंईया सम्मान योजना
7. बालिका समृद्धि योजना
8. मुख्यमंत्री लाडली लक्ष्मी योजना
9. मुख्यमंत्री कन्या विवाह योजना
10. मुख्यमंत्री बालिका पोषण योजना।[32]

महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए भारत सरकार तथा झारखंड सरकार के द्वारा जो योजनाएँ चलाई जा रही वे महिलाओं को सबल बनाने में सहायतक सिद्ध हो रही हैं।

निष्कर्ष :–

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि देश के तरह राज्यों की राजनीति में भी महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता की स्थिति संतोषजनक नही है। पुरूष प्रधान समाज होने के वजह से पुरूषों ने शक्ति की प्रतीक नारी को सीमाओं में बाँध कर रखा हुआ है। चुँकी परिवार के मुख्या पुरूषों के होने के कारण पुरूषों ने महिलाओं को पारिवारिक दायित्वों और कर्तव्यों में इस तरह से बाँध दिया है के उन्हें अपने बारे में सोंचने का भी समय ही नही मिल पाता है, परन्तु अब महिलाएँ समय के साथ चलना और अपनी पहचान बनाने को लेकर जागरूक हो रही हैं। वे अपने सपनों को साकार करने की क्षमता रखती हैं। अब वे भी पुरूषों की तरह राजनीति में रूची ले रही है, उनके कदम तेजी से राजनीति की ओर बढ़ रहे है। इससे महिलाओं के आत्मविश्वास में वृद्धि हो रही है और वे सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक एवं राजनीतिक रूप से मजबूत हो रही है। महिलाओं में निर्णय लेने और अपने भविष्य के लिए योजना बनाने की क्षमताओं में भी वृद्धि देखी जा रही है। अब वे राजनीति को वे अपना करियर भी बना रही है। झारखंड की राजनीति में महिलाओं की बढती सहभागिता महिला सशक्तिकरण का मापक है।

संदर्भ :–

1 लिप्सेट,साईमन.मार्टिन, 'पोलिटिकल मैन', डबलडे एडं कंपनी.इंक, अमेरिका, 1960, पृ0 सं0– 90
2 श्री,विजय, 'राजनीतिक सहभागिताःअवधाणामक परिपेक्ष्य,' जनर्ल ऑफ इमर्जिंग टेक्नालॉजी एण्ड इनोवेटिव रिसर्च,वाल्यूम–5 इश्यू–8, 2018, पृ0 सं0, 838–848
3 पाठक, इन्दू, 'राजनीतिक सहभागिता एवं महिला सशक्तिकरण' कुरूक्षेत्र, 2007, पृ0 स0– 26
4 शर्मा,प्रज्ञा, 'भारतीय समाज में नारी', पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2001,पृ0 सं0, 99
5 वहीं पृ– 100
6 दिवान, रेणू, 'झारखंड की महिलाएँ,' बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना, 2015, पृ0 सं0– 21
7 मीणा,सुनीता, 'जनजातीय महिलाओं की राजनीतिक जागरूकता', हिंदी बुक सेंटर, नई दिल्ली, 2014, पृ0 सं0–115
8 सिंहा,अनुज,कुमार, 'शोषण संघर्ष और शहादत', प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृ0 सं0 –86
9 द्विवेदी, अखिलेश,कुमार, 'रीवा जिले के महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता दशा और दिशा', इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस्ड रिसर्च इन साइंस,कम्यूनिकेशन एण्ड टेक्नॉलाजी (आई.जे.ए.आर. एस.सी.टी),वाल्यूम–2 इश्यू–2, 2022, पृ0 सं0 1–7
10 शर्मा,पी.डी, 'महिला सशक्तिकरण और नारीवाद', रावत बुक्स, दिल्ली, 2017, पृ0 सं0– 202
11 बिंझा,पुनम, 'चैलेंजेस एंड प्रोस्पेक्ट ऑफ एंपावरमेंट ऑफ ट्राइबल वूमेन विद रिफरेंस टू झारखंड', इंटरनेशनल जर्नल फार रिर्सच इन इंजिनियरिंग एप्लिकेशन एण्ड मैनेजमेंट(आई. जे. आर. ई. ए. एम) वाल्यूम–06, इश्यू–07,2016,पृ0 सं0 1–5
12 देसाई,नीरा, एवं ठक्कर,उषा, 'भारतीय समाज में महिला महिलाएँ', राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत, नई दिल्ली, 2021, पृ0 सं0–II
13 सिंह,श्रीमती रमा, 'शिक्षित हिंदू महिलाएँ एवं धर्म', बी.आर पब्लिशिंग कार्पोरेशन दिल्ली, 1988, पृ0 सं0– 48
14 गुप्ता,देवेन्द्र कुमार, 'प्राचीन भरतीय समाज एवं अर्थव्यवस्था', न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, दिल्ली, 2004, पृ0 सं0–315
15 गुप्त,विश्व प्रकाश एवं गुप्त मोहिनी, 'स्वतंत्रता संग्राम और महिलाएँ', नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1999, पृ0 सं0–205
16 नेमिचंद, 'एन एनालिटिकल स्टडी ऑन वूमेन इन पालिटिक्स इन इंडिया', इंटरनेशनल जर्नल आफॅ ट्रेन्ड इन सांइटिफिक रिसर्च एंड डेवलप्मेंट(आई.जे.टी.एस.आर.डी) वाल्यूम–8, इश्यू–3,मई–जून 2024, पृ0 सं0– 1096–1103
17 बेक.ए.एस, 'पालिटिकल इम्पावरमेंट ऑफ ट्राइबल वूमेन इन झारखंड', इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशन,वाल्यूम–1,(7), 2022, पृ0 सं0, 1–7
18 कुमार,अनिल, 'झारखंड', राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत,नई दिल्ली, 2021,पृ0 सं0–1
19 दिवान,रेणू,'झारखंड की महिलाएँ,' बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी,पटना, 2015,पृ0 सं0, 48–49
20 भारतीय निवार्चन आयोग रिर्पोट –2024
21 दिवान,रेणू,'झारखंड की महिलाएँ,'बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी,पटना,2015,पृ0सं0– 2
22 तिवारी,राम.कमार,'झारखंड की रूपरेखा,'शिवांग पब्लिकेशन,राँची, 2012, पृ.सं.–589
23 भारतीय निवार्चन आयोग रिर्पोट –2024(झारखंड)

24 तिवारी,राम.कमार,'झारखंड की रूपरेखा,'शिवांग पब्लिकेशन,राँची, 2012, पृ.सं.–599
25 https://www.prabhatlhabar.com
26 https://navbharattimes.indiatimes.com...
27 भारतीय जनगणना रिर्पोट– 2011
28 मंडल,सुष्मिता एवं मिश्रा,जुगांतर, कंस्ट्रेंट्स ऑफ ट्राइबल वूमेन एंपावरमेंट इन उत्तर दिनाजपुर डिस्ट्रिक्ट ऑफ वेस्ट बंगााल,इंटरनेशनल जनर्ल ऑफ हयुमन रिसोर्स मैनेजमेंट(आई.जे.एच.आर.एम) वाल्यूम–10 इश्यू–2 2021 पृ 1–4
29 बिंझा.पुनम,'चैलेंजेस एंड प्रोस्पेक्ट ऑफ एंपावरमेंट ऑफ ट्राइबल वूमेन विद रिफरेंस टू झारखंड'', इंटरनेशनल जर्नल फार रिर्सच इन इंजिनियरिंग एप्लिकेशन एण्ड मैनेजमेंट(आई. जे. आर. ई. ए. एम) वाल्यूम–06, इश्यू–07, 2016, पृ0 सं0– 1–5
30 बेक.ए.एस, 'पालिटिकल इम्पावरमेंट ऑफ ट्राइबल वूमेन इन झारखंड', इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशन,वाल्यूम–1,(7), 2022, पृष्ठ. सं 1–7
31 https://www.jagrannjosh.com/articles/w...
32 www.jharkhandGovt.schemes2020

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

21 वीं सदी में सोशल मीडिया एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

जयन्त गुप्ता
शोध छात्र समाजशास्त्र

प्रो0 आलोक कुमार कश्यप
समाजशास्त्र विभाग
महाराज बलवंत सिंह पी0जी0 कालेज गंगापुर,वाराणसी

सारांश–
सोशल मीडिया का अपना एक नेटवर्क है। सोशल मीडिया के प्रत्येक स्वरूप चाहे वह फेसबुक, यूट्यूब, ट्वीटर वाट्सअप हो या इंस्टाग्राम सबका अपना एक नेटवर्क है। बड़ी संख्या मे लोग सोशल मीडिया के रूप मे इन सब एप्लिकेशनो का उपयोग करते है उस पर पोस्ट और कॅमेंट करते है। अर्थात माध्यम के रूप में वाट्सअप, यूट्यूब और फेसबुक लोगों के व्यवहार को प्रभावित करता है। आर्थिक इतिहासकार हेराल्ड इनिस के मुताबिक मीडिया नेटवर्क ने विशेष सामाजिक व्यवहारो को निर्मित किया है जिससे सामाजिक मूल्यों का निर्माण हुआ है।

सोशल मीडिया ने अंतर्वस्तु (कंटेन्ट) के संबंध मे उपभोक्ता और उत्पादक के बीच विभाजक रेखा को लगभग मिटा दिया है। जो उपभोक्ता है वह उत्पादक भी बन जाता है। अंतर्वस्तु (कंटेन्ट) के रूप सूचना, खबर, संदेश और मनोरंजन से जुड़ी सामग्री का लोग उत्पादक के रूप मे निर्माण करते है तथा सोशल मीडिया के माध्यम से साझा करते है। जिसे उपभोक्ता के रूप मे अन्य लोग देखते सुनते है उपभोग करते है तथा प्रतिक्रिया देते है जो अपने आप में उत्पादन है। साथ साथ उत्पादक भी अपने उत्पाद के बारे में लोगों की प्रतिक्रिया को देखता है अर्थात उपभोग करता है और प्रभावित होता है। सोशल मीडिया के माध्यम से अंतःक्रिया के दौरान व्यक्तित्व का विकास होता है। फेसबुक और यूट्यूब सोशल मीडिया के रूप में सबसे प्रभावशाली शक्ति के रूप सामने आए हैं। जिससे समाज में काफी बदलाव आया है। सोशल मीडिया के रूप मे फेसबुक और यूट्यूब का प्रभाव कल्पना से परे है। प्रिन्ट मीडिया की तुलना मे लोगों की सोशल मीडिया तक पहुँच आसान है क्योंकि इसके के लिए अशिक्षा बहुत अधिक बाधक नहीं है। यह क्षमता सोशल मीडिया की सबसे बड़ी ताकत है।

मुख्य शब्द – समाज, सोशल मीडिया, सोशल मीडिया का प्रभाव, संचार, यूट्यूब और फेसबुक।

सोशल मीडिया ऑनलाइन प्लेटफॉर्म को सन्दर्भित करता है ये ऑनलाइन प्लेटफॉर्म सामुदायिक गतिविधि को सक्षम करते हैं। सोशल मीडिया मानव नेटवर्क को बढ़ाता और विस्तारित करता है। उपयोगकर्ता मोबाइल उपकरणों पर ऐप के माध्यम से सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं । ये इंटरैक्टिव प्लेटफॉर्म व्यक्तियों, समुदायों और संगठनों को उपयोगकर्ता स्व जनित सामग्री को साझा करने, सह–निर्माण करने, चर्चा करने, भाग लेने और संशोधित करने की अनुमति देते हैं। सोशल मीडिया का उपयोग यादों को दस्तावेज करने, सीखने और दोस्ती बनाने के लिए किया जाता है। उनका उपयोग कंपनियों, उत्पादों और लोगों के विचारों को बढ़ावा देने के लिए किया जा सकता है। सोशल मीडिया का उपयोग समाचारों का उपभोग करने, प्रकाशित करने या साझा करने के लिए भी किया जा सकता है।

सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स को उनके प्राथमिक कार्य के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। फेसबुक, लिंक्डइन और थ्रेड्स जैसी सोशल नेटवर्किंग साइट्स व्यक्तिगत और पेशेवर संबंध बनाने पर ध्यान केंद्रित

करती हैं। माइक्रोब्लॉगिंग प्लेटफॉर्म जैसे कि ट्विटर अब और मैस्टोडॉन शॉर्ट – फॉर्म कंटेंट और तेजी से सूचना साझा करने पर जोर देते हैं। इंस्टाग्राम , टिकटॉक, यूट्यूब और स्नैपचैट सहित मीडिया शेयरिंग नेटवर्क उपयोगकर्ताओं को चित्र, वीडियो और लाइव स्ट्रीम साझा करने की अनुमति देते हैं। लाइव स्ट्रीमिंग प्लेटफॉर्म जैसे कि फेसबुक लाइव और यूट्यूब लाइव रियल–टाइम ऑडियंस इंटरैक्शन सक्षम करते हैं। अंत में, मैस्टोडॉन और ब्लूस्काई जैसे विकेन्द्रीकृत सोशल मीडिया 100 मिलियन से अधिक पंजीकृत उपयोगकर्ताओं वाले लोकप्रिय सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म में ट्विटर, फेसबुक, वीचौट, शेयरचौट, इंस्टाग्राम, क्यूजोन, वीबो, थ्रेड्स और लिंक्डइन शामिल हैं ।

सोशल मीडिया आउटलेट पुराने मीडिया (जैसे समाचार पत्र , टीवी और रेडियो प्रसारण) से कई मायनों में भिन्न हैं, जिसमें गुणवत्ता, पहुंच, आवृत्ति, प्रयोज्यता, प्रासंगिकता और स्थायित्व शामिल हैं। सोशल मीडिया आउटलेट एक संवादात्मक ट्रांसमिशन सिस्टम में काम करते हैं जबकि पारंपरिक मीडिया एक मोनोलॉजिक ट्रांसमिशन मॉडल (एक स्रोत से कई रिसीवर) के तहत काम करते हैं। उदाहरण के लिए, एक समाचार पत्र कई ग्राहकों तक पहुँचाया जाता है, और एक रेडियो स्टेशन एक शहर में एक ही कार्यक्रम प्रसारित करता है।

सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म

1997 में शुरू की गई सिक्सडिग्रीज को अक्सर पहली सोशल मीडिया साइट माना जाता है। ऑनलाइन सेवाओं का विकास नेटवर्क संचार के लिए चौनल के रूप में सेवा करने से लेकर 2.0 के आगमन के साथ नेटवर्क सामाजिक संपर्क के लिए इंटरैक्टिव प्लेटफॉर्म बनने तक आगे बढ़ा।

सोशल मीडिया की शुरुआत 1990 के दशक के मध्य में जियोसिटीज , क्लासमेट्स डॉट कॉम और सिक्सडिग्रीज डॉट कॉम जैसे प्लेटफॉर्म के आविष्कार के साथ हुई। उस समय इंस्टेंट मैसेजिंग और चैट क्लाइंट मौजूद थे, लेकिन सिक्सडिग्रीज अद्वितीय था क्योंकि यह लोगों के लिए गुमनाम रूप से जुड़ने के बजाय उनके वास्तविक नामों का उपयोग करके जुड़ने के लिए डिजाइन की गई पहली ऑनलाइन सेवा थी। इसमें प्रोफाइल, दोस्तों की सूची और स्कूल संबद्धता जैसी सुविधाएँ थीं, जो इसे "सबसे पहली सोशल नेटवर्किंग साइट" बनाती हैं।

2000 के दशक की शुरुआत में, सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म ने ब्लैकप्लेनेट (1999) के साथ फ्रेंडस्टर और माइस्पेस से पहले व्यापक लोकप्रियता हासिल की , इसके बाद फेसबुक 2004 , यूट्यूब 2005 और ट्विटर 2006 का स्थान रहा । 2015 के शोध में बताया गया है कि वैश्विक स्तर पर, उपयोगकर्ता अपने ऑनलाइन समय का 22 प्रतिशत सोशल नेटवर्क पर बिताते हैं, संभवतः स्मार्टफोन की उपलब्धता के कारण। 2023 तक, 4.76 बिलियन (476करोड़) लोग सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं जो वैश्विक आबादी का लगभग 59 प्रतिशत है।

मोबाइल सोशल मीडिया

मोबाइल सोशल मीडिया का तात्पर्य स्मार्टफोन और टैबलेट जैसे मोबाइल उपकरणों पर सोशल मीडिया के उपयोग से है । यह अपनी सर्वव्यापकता के कारण अलग है, क्योंकि अब उपयोगकर्ताओं को कंप्यूटर पर भाग लेने के लिए डेस्क पर नहीं रहना पड़ता है। मोबाइल सेवाएँ उपयोगकर्ता के तत्काल स्थान का उपयोग उस स्थान से संबंधित जानकारी, कनेक्शन या सेवाएँ प्रदान करने के लिए कर सकती हैं।

उपयोग के आँकड़े कम से कम 100 मिलियन (10 करोड़) सक्रिय उपयोगकर्ताओं वाले सोशल प्लेटफॉर्म की सूची स्टेटिस्टा के अनुसार जनवरी 2024 तक सक्रिय उपयोगकर्ताओं की संख्या के आधार पर सबसे लोकप्रिय सोशल नेटवर्किंग सेवाओं की सूची निम्नलिखित है ।

सबसे अधिक उपयोगकर्ताओं वाली सोशल नेटवर्किंग सेवाएँ, जनवरी 2024 तक

	नेटवर्क	र्ताओं की संख्या (लाखों में)	उद्गम देश
01	फेसबुक	3,049	संयुक्त राज्य अमेरिका
02	यूट्यूब	2,491	संयुक्त राज्य अमेरिका
03	व्हाटसऐप	2,000	संयुक्त राज्य अमेरिका
04	इंस्टाग्राम	2,000	संयुक्त राज्य अमेरिका
05	टिकटॉक	1,526	चीन
06	वीचैट	1,336	चीन
07	फेसबुक	979	संयुक्त राज्य अमेरिका
08	टेलीग्राम	800	रूस
09	डौयिन	752	चीन
10	स्नैपचैट	750	संयुक्त राज्य अमेरिका
11	कुआइशौ	685	चीन

नाबालिगों द्वारा उपयोग

कोविड–19 महामारी के दौरान सोशल मीडिया ने संचार में अहम् भूमिका निभाई। जून 2020 में, कार्टून नेटवर्क और साइबरबुलिंग रिसर्च सेंटर के एक सर्वेक्षण में अमेरिकी ट्वीन्स (9–12 वर्ष की आयु) का सर्वेक्षण किया गया और बताया गया कि सबसे लोकप्रिय एप्लिकेशन यूट्यूब (67 प्रतिशत) था। (जैसे–जैसे उम्र बढ़ी, ट्वीन्स के सोशल मीडिया ऐप और गेम का इस्तेमाल करने की संभावना अधिक थी।) इसी तरह, कॉमन सेंस मीडिया के 2020 के 13–18 वर्ष की आयु के अमेरिकियों के सर्वेक्षण में बताया गया कि यूट्यूब सबसे लोकप्रिय था (13 से 18 साल के 86 प्रतिशत बच्चों द्वारा उपयोग किया जाता है)। जैसे–जैसे बच्चे बड़े होते गए, उन्होंने सोशल मीडिया सेवाओं का तेजी से उपयोग किया और अक्सर सामग्री का उपभोग करने के लिए यूट्यूब का इस्तेमाल किया।

सोशल मीडिया का समाज पर प्रभावः–

सोशल मीडिया किसी भी समाज को बना तथा किसी भी समाज को नष्ट भी कर सकता है। यह यूजर्स पर निर्भर है कि वह सोशल मीडिया पर किस साइट्स का उपयोग किस तरह कर रहा है। यदि अध्ययन अध्यापन के कार्य में कुछ ज्ञान अर्जित करने के लिए इसका उपयोग किया जाता है तो एक उच्च स्तरीय अच्छे जीवन के लिए अग्रसर होते है। वहीं यदि सोशल मीडिया का उपयोग केवल समय गुजारने के लिए किया जाता है तो हम अपने कीमती समय गंवा देते है। और किसी भी प्रकार का ज्ञान प्राप्त नहीं हो पाता है अर्थात् इसका उपयोग करके जीवन में आगे बढ़ा जा सकता है। तथा दुरूपयोग से व्यक्ति अपने जीवन में अंधकार की ओर चला जाता है।

सोशल मीडिया का आज के समाज में सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रभाव देखने को मिलते है सोशल मीडिया की आलोचना बच्चों और किशोरों पर कई तरह के नकारात्मक प्रभावों के लिए की जाती रही है,

जिसमें अनुचित सामग्री के संपर्क में आना, वयस्कों द्वारा शोषण, नींद की समस्याएँ, ध्यान की समस्याएँ, बहिष्कार की भावनाएँ और विभिन्न मानसिक स्वास्थ्य संबंधी बीमारियाँ शामिल हैं। सोशल मीडिया की आलोचना राजनीतिक ध्रुवीकरण को बढ़ाने और लोकतंत्र को कमजोर करने के लिए भी की जाती रही है। प्रमुख समाचार आउटलेट में अक्सर झूठे दावों से बचने और उन्हें ठीक करने के लिए कड़े नियंत्रण होते हैं, लेकिन सोशल मीडिया की अनूठी खूबियाँ बहुत कम या बिना किसी निगरानी के वायरल सामग्री लाती हैं। जो एल्गोरिदम उपयोगकर्ता की व्यस्तता को ट्रैक करते हैं, वे दिखाए जाने वाले चीजों को प्राथमिकता देते हैं, जो क्रोध और आक्रोश जैसी नकारात्मक भावनाओं को बढ़ावा देते हैं। कुल मिलाकर, अधिकांश ऑनलाइन गलत सूचनाएँ "सुपरस्प्रेडर्स" के एक छोटे से भाग से उत्पन्न होती हैं, लेकिन सोशल मीडिया उनकी पहुँच और प्रभाव को बढ़ाता है।

समाज पर सोशल मीडिया के सकारात्मक प्रभावः–

सोशल मीडिया प्रगति पथ का एक स्तंभ माना जा सकता है। सोशल मीडिया के सही प्रयोग के द्वारा व्यक्ति प्रगति के मार्ग पर अग्रसर हो सकता है समाज के विकास में सूचनाओं का प्रचार–प्रसार करने के लिए सोशल मीडिया एक सशक्त माध्यम हैं। लोकतंत्रिक समाज में मीडिया के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति की आवाज को सरकार तक तथा सरकार की बात जनता तक पहुँचाई जाती है। सोशल मीडिया प्रत्येक व्यक्ति को अपनी बात खुलकर सबके सामने रखने का एक खुला मंच प्रस्तुत करती है। वर्तमान समय में शिक्षा के प्रचार–प्रसार में भी सोशल मीडिया एक अहम भूमिका निभा रहा है। अधिकांश विश्वविद्यालयों के द्वारा कई प्रकार के पाठ्यक्रम ऑनलाईन उपलब्ध कराये जा रहे है। कई कोचिंग संस्थाए ऑनलाइन वेबसाइट्स के माध्यम से लोगों को सीखने का अवसर प्रदान करती है। Email और वीडियों कॉन्फ्रेसिंग के द्वारा अपने विचारों का आदान–प्रदान किया जाता हैं। देश का मुख्य व्यवसाय कृषि जिसके विकास के लिए सरकार द्वारा कई ऐसे ऑनलाईन पोर्टल प्रारंभ किये गए है जिसके द्वारा कृषि की नई तकनीकों एवं कृषि से संबंधित विभिन्न प्रकार की बीज बोने से लेकर फसल काटने तक सभी निर्देश बखुबी दिखाये एवं सिखाये जाते है। जिससे हम अपनी कृषि को और अधिक उन्नत तरीके से कर सकते हैं। जुडाव, संचार, जागरूकता, व्यापकतम पहुँच, खुला मंच, सुचना के साधन, मनोरंजन के साधन, आदि सोशल मीडिया के सकारात्मक प्रभाव है।

समाज पर सोशल मीडिया के नकारात्क प्रभावः–

सोशल मीडिया का जहाँ एक ओर सकरात्मक प्रभाव देखने को मिलता है वहीं दूसरी ओर व्यक्तियों पर इसके नकारात्मक प्रभावों का भी असर होता है। "एक सिक्के के दो पहलू होते है"। इसी तरह सोशल मीडिया का एक तरफ समाज पर सकरात्मक प्रभाव पड़ा हैं। और दूसरी ओर नकारात्मक प्रभाव भी व्यक्ति पर देखने को मिला है। सोशल मीडिया के माध्यम से कई झूठी खबरों को फैलाया जाता है। समाज का युवा वर्ग सोशल मीडिया से अधिक प्रभावित हैं वयस्क फिल्मों को देखने की आयु लगभग 18 वर्ष या इससे अधिक है किन्तु आज सोशल मीडिया के प्रयोग से अवयस्क भी वयस्क फिल्मों को देखते है। म्यांमार में मुस्लिम समुदाय के लोगों पर अत्याचार, असम हिंसा, कई शहरों में प्रदर्शन बेहद संवेदनशील मामले है जिन्हें सोशल मीडिया के द्वारा फैलाया गया था। साइबरबुलिंग, साइबर क्राईम, आयु अनुचित सामग्री, परिवार और दोस्तों से दूरी बढ़ी, अन्य गतिविधियों में रूचि की कमी ,शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य समस्याएं , लत लगना, हैकिंग आदि सोशल मीडिया के नकारात्मक प्रभाव है।

निष्कर्ष –

निष्कर्ष तौर पर कहा जा सकता है कि आज के इस दौर में सोशल मीडिया प्रत्येक व्यक्ति के लिए अपने विचार प्रस्तुत करने का खुला मंच है। सोशल मीडिया के द्वारा जहाँ एक ओर लोगों में जागरुकता आयी

वही दूसरी ओर समाज विरोधियों ने इसका गलत प्रयोग भी किया हैं। सोशल मीडिया का विकास तेजी से हो रहा है जिसकी जनमानस को आदत हो गई है। सोशल मीडिया के सकारात्मक पहलू के साथ–साथ इसके उपयोग के द्वारा समाज में बढ़ते साइबर क्राईम को भी नजरअंदाज नही किया जा सकता है। वर्तमान समय में आवश्कयता है सोशल मीडिया का उपयोग करने वालों के प्रति जागरूकता की जिससे व्यक्तियों के द्वारा उसका गलत प्रयोग न करके उसके सकारात्मक पहलुओं पर ध्यान दिया जायें।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः–

1. कुमार सु. (2004). इंटरनेट पत्रकारिता, नई दिल्ली, तक्षशिला प्रकाशन

2- India- New Delhi- Sage Publications

3- Journalism in India- New Delhi- Sage Publications-

4. सोनी, सुमन (2009). नीवन मीडिया प्रविधियों, जयपुर बुक एनक्लेव,

5. आर्या, नागेश (2011). आधुनिक प्रभाव एवं कार्य जयपुर

6- Sharma- वि. (2011). Media Achivers] Jaipur Publication Harshloack Publication

7- Wikipedia-

अनुसूचित जातियों का सामाजिक - सांस्कृतिक रूपांतरण : आवश्यकता एवं महत्व

रवि दास
शोध छात्र समाजशास्त्र विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
rayravidas@gmail.com
डॉ जयप्रकाश यादव
एसोसिएट प्रोफेसर समाजशास्त्र विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,वाराणसी
apkajay@gmail.com

सारांश

भारत में अनुसूचित जातियों का सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण एक जटिल और दीर्घकालिक प्रक्रिया रही है, जो न केवल सामाजिक और सांस्कृतिक बदलाव से जुड़ी है, बल्कि राजनीति, शिक्षा, और आर्थिक दृष्टिकोण से भी प्रभावित है। भारतीय समाज में जातिवाद और भेदभाव की जड़ें बहुत गहरी हैं, जो पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, भारतीय संविधान ने अनुसूचित जातियों को समान अधिकार और संरक्षण प्रदान करने का वचन लिया, और इसके अंतर्गत कई सुधारात्मक कदम उठाए गए। हालांकि, समाज में वास्तविक परिवर्तन के लिए समय की आवश्यकता थी, और यह प्रक्रिया अभी भी जारी है।अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण, शिक्षा और रोजगार के अवसर प्रदान किए गए हैं, लेकिन उनके सामाजिक और सांस्कृतिक रूपांतरण में कई चुनौतियाँ अभी भी बनी हुई हैं। शिक्षा के क्षेत्र में कुछ सुधार हुआ है, और अनुसूचित जातियों के लिए उच्च शिक्षा के अवसर बढ़े हैं, लेकिन आज भी बड़ी संख्या में अनुसूचित जातियों के लोग शिक्षा और अन्य सामाजिक सेवाओं से वंचित हैं, खासकर ग्रामीण और पिछड़े इलाकों में। इसके अलावा, सामाजिक स्थिति में सुधार लाने के लिए जातिवाद और भेदभाव को समाप्त करना अत्यंत महत्वपूर्ण है, जो कि अभी भी समाज के विभिन्न हिस्सों में व्याप्त हैं।आर्थिक रूप से, अनुसूचित जातियाँ अभी भी निम्न श्रेणी के कामों में लगी हुई हैं और उनके जीवन स्तर में बड़ा बदलाव नहीं आया है। सरकारी योजनाओं के बावजूद, इन जातियों को समाज में समान दर्जा मिलने में कठिनाई हो रही है। इसके बावजूद, अनुसूचित जातियों का राजनीतिक प्रतिनिधित्व बढ़ा है और उन्होंने राजनीतिक भागीदारी में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है।इन सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए, यह निष्कर्ष निकलता है कि अनुसूचित जातियों का सामाजिक और सांस्कृतिक रूपांतरण अभी भी अधूरा है। इसके लिए निरंतर सुधारात्मक प्रयासों की आवश्यकता है, जो न केवल सरकारी योजनाओं के माध्यम से बल्कि समाज के प्रत्येक वर्ग में जागरूकता और समानता की भावना के माध्यम से संभव हो सकते हैं। अगर समाज और सरकार मिलकर इस दिशा में प्रयास करें, तो अनुसूचित जातियों का सामाजिक और सांस्कृतिक रूपांतरण एक सशक्त और समान समाज की दिशा में अग्रसर हो सकता है।

मुख्य शब्द- अनुसूचित जातियाँ, सामाजिक रूपांतरण. सांस्कृतिक बदलाव ,जातिवाद ,भेदभाव,आरक्षण,शिक्षा आर्थिक , सामाजिक समानता, संविधानसामाजिक जागरूकता,सरकारी योजनाएँ,सामाजिक न्याय, दलित सशक्तिकरण,।

प्रस्तावना

भारत एक बहुसांस्कृतिक और बहुधार्मिक देश है, जहाँ समाज विभिन्न वर्गों, जातियों और समुदायों में विभाजित है। ऐतिहासिक रूप से अनुसूचित जातियों (SC) को सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक रूप से हाशिए पर रखा गया, जिससे वे सदियों तक उत्पीड़न और भेदभाव का शिकार हुए। हालांकि, संविधान में दिए गए विशेष प्रावधानों और सरकारी नीतियों के चलते उनकी स्थिति में सुधार हुआ

है, फिर भी सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण की आवश्यकता बनी हुई है।सामाजिक रूपांतरण का अर्थ केवल आर्थिक उत्थान या शैक्षिक उन्नति से नहीं, बल्कि सामाजिक सम्मान, समानता और आत्मसम्मान की भावना को विकसित करने से है। अनुसूचित जातियों को समान अधिकार, अवसर और समाज में एक प्रतिष्ठित स्थान दिलाने के लिए उनके सांस्कृतिक उन्नयन और सामाजिक सशक्तिकरण की अत्यधिक आवश्यकता है।आज भी अनेक स्थानों पर अनुसूचित जातियों के साथ भेदभाव जारी है, जिससे उनकी सामाजिक स्वीकृति में बाधाएँ आती हैं। परंपरागत पेशों से मुक्ति, शिक्षा के प्रति जागरूकता, आधुनिकता का समावेश और सांस्कृतिक उत्थान उनके सामाजिक रूपांतरण के महत्वपूर्ण पहलू हैं। इस संदर्भ में, केवल सरकारी योजनाएँ और आरक्षण ही पर्याप्त नहीं, बल्कि समाज में मानसिकता परिवर्तन भी आवश्यक है।

ग्रामीण समाज में पारिवारिक संरचना परंपरागत रूप से संयुक्त परिवार प्रणाली पर आधारित रही है, जहाँ एक ही छत के नीचे कई पीढ़ियाँ एक साथ रहती थीं। किंतु औद्योगीकरण, शहरीकरण और शिक्षा के प्रसार ने परिवारिक व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन किए हैं। अब एकल परिवारों की संख्या बढ़ रही है, विशेष रूप से युवाओं के नौकरी और बेहतर जीवनशैली की तलाश में शहरों की ओर पलायन करने के कारण। पारिवारिक संबंधों में भावनात्मक जुड़ाव तो बना हुआ है, लेकिन आर्थिक स्वायत्तता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के प्रति झुकाव अधिक हो गया है।वैवाहिक प्रथा में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं। पहले विवाह पारिवारिक और सामाजिक संबंधों को मजबूत करने का माध्यम होते थे, जिसमें माता-पिता की सहमति ही सबसे महत्वपूर्ण मानी जाती थी। किन्तु अब प्रेम विवाह और अंतरजातीय विवाह की स्वीकृति बढ़ रही है, जिससे विवाह के पारंपरिक स्वरूप में बदलाव आया है। साथ ही, दहेज प्रथा और बाल विवाह जैसी कुरीतियों में भी कमी आई है, हालांकि कुछ क्षेत्रों में यह अभी भी विद्यमान हैं।परंपराओं की बात करें तो धार्मिक और सांस्कृतिक उत्सवों का स्वरूप बदला है। जहाँ पहले रीति-रिवाजों का पालन कठोरता से किया जाता था, वहीं अब इनका अधिक लचीला रूप देखने को मिलता है। शिक्षा और संचार माध्यमों के प्रभाव से अंधविश्वासों में कमी आई है और वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित हो रहा है। हालाँकि, पारंपरिक त्योहारों और सांस्कृतिक आयोजनों को संरक्षित रखने की प्रवृत्ति अभी भी बनी हुई है, जिससे आधुनिकता और परंपरा के बीच संतुलन स्थापित हो रहा है।

इस शोधपत्र में अनुसूचित जातियों के सामाजिक और सांस्कृतिक रूपांतरण की आवश्यकता, उसके महत्व और इस दिशा में किए जा रहे प्रयासों का विश्लेषण किया जाएगा। साथ ही, यह भी समझने का प्रयास किया जाएगा कि किस प्रकार सामाजिक समरसता को बढ़ावा देकर एक न्यायसंगत और समानता पर आधारित समाज की स्थापना की जा सकती है।

साहित्य पुनरावलोकन

अनुसूचित जातियों के सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण को समझने के लिए विभिन्न विद्वानों और शोधकर्ताओं ने अध्ययन किए हैं। इस विषय पर लिखी गई महत्वपूर्ण पुस्तकों से हमें यह समझने में सहायता मिलती है कि अनुसूचित जातियों की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन कैसे आया और आगे क्या संभावनाएँ हैं। यहाँ प्रमुख पुस्तकों की साहित्य समीक्षा प्रस्तुत की जा रही है:

1. "जाति का उन्मूलन"डॉ. भीमराव अंबेडकर(1936):

यह पुस्तक भारतीय समाज में जाति व्यवस्था के प्रभाव और इसके उन्मूलन की आवश्यकता पर केंद्रित है। डॉ. अंबेडकर का तर्क है कि जाति व्यवस्था केवल एक सामाजिक बुराई नहीं है, बल्कि यह समाज की प्रगति में एक बड़ी बाधा है। वे मानते थे कि जब तक जाति प्रथा बनी रहेगी, तब तक अनुसूचित जातियों का पूर्ण रूपांतरण संभव नहीं होगा। पुस्तक में उन्होंने हिंदू धर्मग्रंथों की आलोचना करते हुए जातिवाद के मूल कारणों की व्याख्या की और इस सामाजिक ढांचे को तोड़ने के उपाय सुझाए। अंबेडकर का विचार था कि शिक्षा, संगठन और संघर्ष के माध्यम से अनुसूचित जातियाँ अपने अधिकार प्राप्त कर सकती हैं।

2. "भारत में जाति"लेखक: जी. एस. घुर्ये(1932):

जी. एस. घुर्ये भारत में जाति व्यवस्था के संरचनात्मक और ऐतिहासिक पक्षों का विश्लेषण करते हैं। वे मानते हैं कि जाति व्यवस्था केवल सामाजिक ढांचा नहीं, बल्कि सांस्कृतिक परंपराओं से जुड़ा एक जटिल तंत्र है। उनकी पुस्तक में वर्णन किया गया है कि

कैसे जातिगत भेदभाव ने अनुसूचित जातियों को समाज से अलग-थलग कर दिया। हालाँकि, वे यह भी स्वीकार करते हैं कि आधुनिक शिक्षा, औद्योगीकरण और लोकतंत्र ने इस भेदभाव को कमजोर करने में मदद की है। यह पुस्तक अनुसूचित जातियों के सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण की प्रक्रिया को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझने के लिए उपयोगी है।

3. पुस्तक: "दलित: अतीत, वर्तमान और भविष्य" गोपाल गुरु और अनीता भटनागर(2005),

यह पुस्तक अनुसूचित जातियों की सामाजिक और राजनीतिक स्थिति का समकालीन विश्लेषण प्रस्तुत करती है। इसमें दलित चेतना, सामाजिक आंदोलनों और सांस्कृतिक पुनरुत्थान की प्रक्रियाओं पर विशेष ध्यान दिया गया है। लेखक दलित साहित्य, राजनीति और समाज में आए परिवर्तनों पर प्रकाश डालते हैं और बताते हैं कि किस प्रकार अनुसूचित जातियाँ अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो रही हैं। पुस्तक में यह भी बताया गया है कि आरक्षण और अन्य सरकारी योजनाओं ने अनुसूचित जातियों के सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण में क्या भूमिका निभाई है और आगे किन चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है।

इन पुस्तकों से स्पष्ट होता है कि अनुसूचित जातियों का सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण एक जटिल और बहुआयामी प्रक्रिया है। अंबेडकर ने जातिवाद को खत्म करने पर जोर दिया, घुर्ये ने जाति व्यवस्था की ऐतिहासिकता को समझाया, जबकि गोपाल गुरु और अनीता भटनागर ने समकालीन दलित मुद्दों पर प्रकाश डाला। इन पुस्तकों से यह निष्कर्ष निकलता है कि सामाजिक परिवर्तन के लिए शिक्षा, राजनीतिक चेतना और सामाजिक जागरूकता अत्यंत आवश्यक हैं।

यहाँ कुछ समाजशास्त्रियों के कथन दिए गए हैं, जो अनुसूचित जातियों के सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण और जातिवाद पर आधारित हैं। इन विद्वानों के विचारों से अनुसूचित जातियों की स्थिति और उनके रूपांतरण के प्रयासों को बेहतर समझा जा सकता है।

1. गि. एस. घुर्ये (1932)

"जाति भारतीय समाज की एक स्थायी विशेषता है, जो सामाजिक ढांचे को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हालांकि, शिक्षा और सामाजिक सुधारों ने जातिवाद के खिलाफ कुछ सुधार किए हैं, लेकिन यह समस्या आज भी कायम है।"

2. डॉ. भीमराव अंबेडकर (1946)

"जातिवाद सिर्फ एक सामाजिक समस्या नहीं है, बल्कि यह एक गंभीर राजनीतिक और सांस्कृतिक मुद्दा है। इसके उन्मूलन के लिए संवैधानिक प्रावधानों के साथ-साथ सामाजिक मानसिकता में भी बदलाव लाना आवश्यक है।"

3. राम मनोहर लोहिया (1963)

"जातिवाद भारतीय समाज की मानसिकता का हिस्सा है। अगर हम समाज को प्रगति और समरसता की ओर ले जाना चाहते हैं, तो जातिवाद को पूरी तरह समाप्त करना होगा। यह केवल एक क़ानूनी या राजनीतिक प्रक्रिया नहीं, बल्कि मानसिकता में बदलाव का भी सवाल है।"

4. एम. एन. श्रीनिवास (1952):

"जातिवाद भारतीय समाज में गहरी जड़ें जमाए हुए है, लेकिन समाज में सामाजिक और सांस्कृतिक बदलावों के कारण इसे चुनौती दी जा रही है। खासतौर पर आधुनिकता और शिक्षा के प्रभाव से जातिवाद में कमी आ रही है।"

5. अलेक्जेंडर लीफ (1930):

"जातिवाद एक सामाजिक परिप्रेक्ष्य से जन्मा है, जिसमें न केवल धार्मिक और सांस्कृतिक घटक शामिल हैं, बल्कि यह समाज के आर्थिक और राजनीतिक ढांचे का हिस्सा भी बन चुका है। इसके उन्मूलन के लिए संरचनात्मक बदलाव जरूरी हैं।"

इन विद्वानों के कथन यह दर्शाते हैं कि जातिवाद की समस्या भारतीय समाज में एक गहरी और स्थायी समस्या रही है, लेकिन शिक्षा, जागरूकता, कानूनी सुधार और मानसिकता में बदलाव से इसका रूपांतरण संभव है।

उद्देश्य:

1. प्रस्तुत पत्र का प्रथम उद्देश्य अनुसूचित जातियों के सामाजिक- सांस्कृतिक रूपांतरण के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन करना हैं।

2. प्रस्तुत शोध पत्र का द्वितीय उद्देश्य अनुसूचित जातियों में होने वाले सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण की आवश्यकता एवं महत्व का अभिज्ञान करना है।

उपकल्पना:

1. अनुसूचित जातियों के सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण में शिक्षा, जागरूकता और सरकारी नीतियों का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य:

भारत में जाति व्यवस्था प्राचीन काल से सामाजिक संरचना का अभिन्न अंग रही है। इस व्यवस्था ने समाज को विभिन्न वर्गों में विभाजित कर दिया, जिसमें अनुसूचित जातियाँ (SC) सबसे निचले पायदान पर रखी गईं। सदियों तक ये जातियाँ सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से उपेक्षित रहीं। हालाँकि, समय के साथ सामाजिक सुधार आंदोलनों, ब्रिटिश शासन के दौरान आए परिवर्तनों और स्वतंत्रता के बाद संवैधानिक प्रयासों ने अनुसूचित जातियों के सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण की नींव रखी। इस ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को समझना आवश्यक है ताकि यह ज्ञात हो सके कि कैसे और किन परिस्थितियों में अनुसूचित जातियों की स्थिति में परिवर्तन हुआ।

प्राचीन भारत में अनुसूचित जातियों की स्थिति:

वैदिक काल से ही भारतीय समाज वर्ण व्यवस्था पर आधारित था। इस व्यवस्था में ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्य और शूद्रों के चार प्रमुख वर्ग थे। शूद्रों को समाज में सबसे निम्न स्थान प्राप्त था, और उन्हें शिक्षा, धार्मिक कार्यों और सामाजिक प्रतिष्ठा से वंचित रखा गया। धीरे-धीरे, समाज में अस्पृश्यता की अवधारणा विकसित हुई, जिसके कारण कुछ जातियों को समाज से पूरी तरह अलग कर दिया गया। यही वर्ग बाद में अनुसूचित जातियों के रूप में पहचाना गया।धार्मिक ग्रंथों में भी जातिगत भेदभाव को मान्यता दी गई। उदाहरण के लिए, मनुस्मृति में वर्ण व्यवस्था को कठोर रूप से स्थापित किया गया। इस काल में अनुसूचित जातियों को अत्यंत निम्न कार्यों जैसे सफाई, पशु चमड़े का काम, शव दाह आदि तक सीमित रखा गया। उनके सामाजिक संपर्क पर भी कड़े प्रतिबंध थे, जिससे वे समाज के मुख्यधारा से कट गए।

मध्यकालीन भारत और भक्ति आंदोलन:

मध्यकाल में जाति व्यवस्था कठोर बनी रही, लेकिन भक्ति आंदोलन ने इसमें कुछ हद तक बदलाव लाने का प्रयास किया। संत कबीर, गुरु नानक, रविदास, चैतन्य महाप्रभु और तुकाराम जैसे संतों ने जातिवाद का विरोध किया और समानता तथा भक्ति पर बल दिया। उन्होंने यह संदेश दिया कि ईश्वर के समक्ष सभी समान हैं, और किसी को भी जाति के आधार पर नीचा नहीं समझा जाना चाहिए।हालाँकि, इस काल में भी अनुसूचित जातियों को सामाजिक भेदभाव और शोषण का सामना करना पड़ा। मुस्लिम शासन के दौरान कुछ लोगों को इस्लाम धर्म अपनाने का अवसर मिला, जिससे वे जातिगत अत्याचारों से बच सके, लेकिन व्यापक स्तर पर उनकी स्थिति में कोई बड़ा बदलाव नहीं आया।

ब्रिटिश काल और सामाजिक सुधार आंदोलन:

ब्रिटिश शासन के दौरान भारतीय समाज में कुछ महत्वपूर्ण बदलाव हुए। ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति ने जातिगत व्यवस्था को प्रत्यक्ष रूप से खत्म करने का प्रयास नहीं किया, लेकिन उनके द्वारा लाए गए कानूनी सुधारों और शिक्षा व्यवस्था के कारण अनुसूचित जातियों को सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन का अवसर मिला।

1. सामाजिक सुधार आंदोलन:

19वीं और 20वीं शताब्दी में कई सामाजिक सुधारकों ने जातिवाद और अस्पृश्यता के खिलाफ आवाज उठाई।

राजा राममोहन राय – उन्होंने जातिवाद और सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ आंदोलन किए।

ज्योतिबा फुले – उन्होंने दलित शिक्षा पर बल दिया और 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना की।

स्वामी विवेकानंद – उन्होंने जातिगत भेदभाव का विरोध किया और सभी के लिए समानता की बात कही।

महात्मा गांधी – उन्होंने 'हरिजन आंदोलन' चलाया और अस्पृश्यता को समाप्त करने की दिशा में कार्य किया।

2. ब्रिटिश सरकार की नीतियाँ:

ब्रिटिश प्रशासन ने शिक्षा को बढ़ावा दिया, जिससे दलित समुदायों के कुछ वर्गों को लाभ मिला। 1850 में एक कानून पारित किया गया, जिसने धर्मांतरण करने वाले लोगों को पैतृक संपत्ति से बेदखल करने की प्रथा को समाप्त किया। 1932 में, पूना पैक्ट के माध्यम से अनुसूचित जातियों को राजनीतिक प्रतिनिधित्व का अधिकार मिला।

स्वतंत्र भारत में अनुसूचित जातियों का रूपांतरण:

स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान ने अनुसूचित जातियों को सामाजिक और राजनीतिक समानता देने के लिए कई महत्वपूर्ण प्रावधान किए।

1. संवैधानिक अधिकार और कानूनी संरक्षण:

अनुच्छेद 15 और 17 – जाति आधारित भेदभाव और अस्पृश्यता को समाप्त किया गया।

अनुच्छेद 46 – अनुसूचित जातियों के सामाजिक-आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए सरकार को निर्देश दिए गए।

अनुच्छेद 330 और 332 – अनुसूचित जातियों के लिए लोकसभा और विधानसभा में आरक्षण की व्यवस्था की गई।

2. शिक्षा और आर्थिक सुधार:

सरकार ने अनुसूचित जातियों के लिए शिक्षा में आरक्षण, छात्रवृत्ति योजनाएँ, विशेष विद्यालयों और तकनीकी शिक्षा के अवसर प्रदान किए। इसके अलावा, विभिन्न सरकारी नौकरियों और योजनाओं में आरक्षण दिया गया, जिससे उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ।

3. सामाजिक जागरूकता और सांस्कृतिक परिवर्तन:

समाज में धीरे-धीरे जाति आधारित भेदभाव कम हुआ। दलित साहित्य और आंदोलनों के माध्यम से अनुसूचित जातियों ने अपनी आवाज बुलंद की। बाबा साहेब अंबेडकर ने बौद्ध धर्म को अपनाकर एक नए सामाजिक परिवर्तन की नींव रखी।

अनुसूचित जातियों का सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण एक लंबी प्रक्रिया रही है, जो प्राचीन काल से लेकर आधुनिक समय तक विभिन्न चरणों में विकसित हुई है। भले ही संवैधानिक अधिकार और सरकारी नीतियाँ उनके उत्थान के लिए बनाई गई हैं, लेकिन मानसिकता में बदलाव और सामाजिक समरसता की आवश्यकता अभी भी बनी हुई है।ऐतिहासिक दृष्टिकोण से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा, सामाजिक जागरूकता और कानूनी अधिकारों के माध्यम से अनुसूचित जातियाँ धीरे-धीरे अपने अधिकार प्राप्त कर रही हैं। लेकिन पूर्ण सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण तभी संभव होगा जब समाज जातिविहीन और समानता आधारित हो। इसके लिए सरकार, समाज और स्वयं अनुसूचित जातियों को मिलकर निरंतर प्रयास करने होंगे ताकि वास्तविक सामाजिक परिवर्तन हो सके।

जब हम समाज या सामाजिक संरचना की बात करते हैं, तो हम इसके विभिन्न घटकों का उल्लेख करते हैं, जैसे कि परिवार, शिक्षा, धर्म, संस्कृति, जाति, अर्थव्यवस्था, राजनीति आदि। इन घटकों का आपस में संबंध और प्रभाव समाज के कुल ढांचे को प्रभावित करते हैं

1. जाति व्यवस्था – भारतीय समाज में जाति व्यवस्था एक महत्वपूर्ण सामाजिक घटक है, जो व्यक्तियों और समूहों को विभिन्न वर्गों में बाँटता है। यह व्यवस्था पारंपरिक तौर पर जन्म आधारित होती है, और समाज में असमानताएँ उत्पन्न करती है।

2. सामाजिक वर्ग – समाज में विभिन्न वर्गों का अस्तित्व होता है, जैसे उच्च वर्ग, मध्य वर्ग, निम्न वर्ग, आदि। इन वर्गों का निर्धारण आर्थिक स्थिति, शिक्षा, पेशा और सामाजिक स्थिति के आधार पर होता है।

3. धर्म – भारतीय समाज में धर्म एक प्रमुख सामाजिक घटक है, जो सामाजिक मूल्य और आस्थाएँ निर्धारित करता है। विभिन्न धर्मों का पालन करने वाले समूहों के बीच सामाजिक अंतर और भेदभाव उत्पन्न हो सकते हैं।

4. शिक्षा – शिक्षा एक महत्वपूर्ण घटक है जो समाज में समानता और सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण को बढ़ावा देता है। शिक्षा से व्यक्तियों को बेहतर जीवन जीने के अवसर मिलते हैं और यह सामाजिक गतिशीलता का मार्ग प्रशस्त करती है।

5. राजनीति और कानून – समाज में राजनीति और कानूनी संरचनाएँ भी महत्वपूर्ण घटक हैं। ये समाज में समानता, अधिकारों और न्याय के वितरण को प्रभावित करते हैं और जातिवाद जैसे सामाजिक मुद्दों को नियंत्रित करने में भूमिका निभाते हैं।

आवश्यकता :

अनुसूचित जातियों का सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण भारतीय समाज में समानता और समावेशिता लाने के लिए अत्यंत आवश्यक है। ऐतिहासिक रूप से ये जातियाँ सामाजिक भेदभाव, आर्थिक पिछड़ेपन और शैक्षिक असमानता का सामना करती आई हैं। हालांकि, संविधान ने उन्हें विशेष अधिकार और आरक्षण प्रदान किया है, फिर भी सामाजिक सुधार और समरसता की दिशा में अभी भी कई चुनौतियाँ बनी हुई हैं।

1. सामाजिक समानता: अनुसूचित जातियाँ आज भी कई क्षेत्रों में भेदभाव का सामना कर रही हैं। उन्हें समाज की मुख्यधारा में लाने और समान अवसर प्रदान करने के लिए सामाजिक परिवर्तन आवश्यक है।

2. शिक्षा और जागरूकता: समाज में जागरूकता बढ़ाने और शिक्षा को सुलभ बनाने से अनुसूचित जातियों की सामाजिक स्थिति मजबूत होगी। इससे वे आत्मनिर्भर बनकर अपने अधिकारों की रक्षा कर सकेंगी।

3. आर्थिक सशक्तिकरण: सामाजिक रूपांतरण के बिना आर्थिक प्रगति संभव नहीं है। यदि उन्हें समान अवसर और संसाधन मिलें, तो वे गरीबी से बाहर निकलकर समाज में अपना योगदान दे सकते हैं।

4. भेदभाव और छुआछूत का उन्मूलन: जातिगत भेदभाव और छुआछूत जैसी प्रथाएँ समाज के विकास में बाधक हैं। इनके उन्मूलन के लिए सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन आवश्यक है।

5. राजनीतिक भागीदारी: अनुसूचित जातियों की राजनीतिक जागरूकता और भागीदारी बढ़ाने से समाज में उनकी स्थिति सशक्त होगी और नीतियों में उनकी प्रभावी भागीदारी सुनिश्चित होगी।

इन कारणों से अनुसूचित जातियों के सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण की आवश्यकता न केवल उनके उत्थान के लिए, बल्कि एक समतामूलक और न्यायसंगत समाज के निर्माण के लिए भी महत्वपूर्ण है।

महत्व :

अनुसूचित जातियों का सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण केवल उनके उत्थान तक सीमित नहीं है, बल्कि यह संपूर्ण समाज के विकास और राष्ट्रीय एकता के लिए भी आवश्यक है। भारतीय समाज में लंबे समय तक जातिगत भेदभाव और छुआछूत की प्रथाएँ प्रचलित रही हैं, जिससे अनुसूचित जातियाँ सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ी रहीं। उनका समुचित विकास और समाज की मुख्यधारा में समावेश एक समतामूलक समाज के निर्माण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

1. सामाजिक समरसता और समानता: सामाजिक रूपांतरण से अनुसूचित जातियों को समाज में समान अधिकार और अवसर मिलते हैं, जिससे समरसता और समावेशिता बढ़ती है। यह जातिगत भेदभाव और छुआछूत जैसी कुप्रथाओं को समाप्त करने में सहायक होता है।

2. आर्थिक विकास: अनुसूचित जातियों को शिक्षा, रोजगार और उद्यमिता के अधिक अवसर मिलने से उनका आर्थिक सशक्तिकरण होता है। जब समाज के सभी वर्ग आर्थिक रूप से मजबूत होंगे, तो संपूर्ण राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को भी लाभ मिलेगा।

3. शिक्षा और जागरूकता: सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण से अनुसूचित जातियों को उच्च शिक्षा और ज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ने के अवसर मिलते हैं। इससे न केवल उनकी स्थिति में सुधार होता है, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी एक नई दिशा मिलती है।

4. राजनीतिक भागीदारी और प्रतिनिधित्व: अनुसूचित जातियों के जागरूक होने से उनकी राजनीतिक भागीदारी बढ़ती है, जिससे वे अपनी समस्याओं को प्रभावी ढंग से सरकार और प्रशासन तक पहुँचा सकते हैं। इससे नीतियों और योजनाओं में उनकी भागीदारी सुनिश्चित होती है।

5. सामाजिक न्याय और मानवाधिकार: अनुसूचित जातियों के सशक्त होने से सामाजिक न्याय की अवधारणा साकार होती है। उन्हें उनके संवैधानिक अधिकारों का लाभ मिलता है, जिससे समाज में शोषण और अन्याय की प्रवृत्ति कम होती है।

6. राष्ट्रीय एकता और समग्र विकास: जब सभी जातियों और समुदायों को समान अवसर मिलते हैं, तो सामाजिक सौहार्द्र बढ़ता है और राष्ट्रीय एकता को मजबूती मिलती है। इससे समाज में सकारात्मक बदलाव आते हैं और एक प्रगतिशील राष्ट्र का निर्माण संभव होता है।

इस प्रकार, अनुसूचित जातियों का सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण केवल उनके विकास के लिए नहीं, बल्कि एक समतावादी, न्यायसंगत और प्रगतिशील समाज के निर्माण के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

समाजशास्त्र एक ऐसा विज्ञान है जो समाज और उसमें घटित होने वाली सामाजिक प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है। जब हम अनुसूचित जातियों के सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण की बात करते हैं, तो यह एक गहरे सामाजिक बदलाव को दर्शाता है, जिसमें जातिगत भेदभाव और असमानताओं को खत्म करके समानता, न्याय और अवसरों की दिशा में बदलाव आता है। समाजशास्त्रियों का मानना है कि सामाजिक रूपांतरण किसी समाज के सामाजिक ढांचे, मान्यताओं और सांस्कृतिक मूल्यों में बदलाव लाता है। विशेष रूप से अनुसूचित जातियों के संदर्भ में यह रूपांतरण जातिवाद, सामाजिक बहिष्कार और शोषण की प्रक्रिया को समाप्त करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।समाजशास्त्र में इस रूपांतरण को एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है, जो शिक्षा, कानूनी सुधारों, सामाजिक जागरूकता और राजनीतिक सशक्तिकरण के माध्यम से घटित होता है। यह प्रक्रिया तब संभव होती है जब समाज के प्रत्येक वर्ग के बीच समानता और सामाजिक न्याय की भावना को बढ़ावा मिलता है। अनुसूचित जातियों के उत्थान के लिए संघर्ष, उनकी अधिकारों के प्रति जागरूकता और उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार की दिशा में किए गए प्रयासों को सामाजिक परिवर्तन के रूप में देखा जा सकता है। समाजशास्त्रियों का यह भी मानना है कि जब कोई समुदाय अपनी सामाजिक स्थिति में बदलाव लाने के लिए संघर्ष करता है, तो यह बदलाव केवल उस समुदाय तक सीमित नहीं रहता, बल्कि समग्र समाज पर भी प्रभाव डालता है।सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी समाज या समुदाय की सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक धारा, मान्यताएँ, परंपराएँ और व्यवहार में बदलाव होता है। यह बदलाव मुख्यतः बाहरी प्रभावों, शिक्षा, कानूनी सुधारों, सामाजिक आंदोलनों और सांस्कृतिक पुनरुत्थान के कारण होता है। समाज में उत्पन्न होने वाली असमानताएँ और भेदभाव सामाजिक रूप से स्वीकार्य नहीं रहते और इनका सामना करने के लिए विभिन्न बदलावों की आवश्यकता होती है।

अनुसूचित जातियों का सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण का मतलब है, उन जातियों के सामाजिक स्थिति, आस्थाएँ और जीवनशैली में बदलाव लाना जो ऐतिहासिक रूप से भेदभाव और शोषण का शिकार रही हैं। यह रूपांतरण तब संभव होता है जब अनुसूचित जातियाँ शिक्षा, राजनीतिक अधिकार, रोजगार, और सामाजिक समावेशिता के अवसरों तक पहुंच प्राप्त करती हैं। भारतीय संविधान ने अनुसूचित जातियों को विशेष अधिकार दिए हैं, जिससे उनकी सामाजिक स्थिति में सुधार संभव हुआ है। इसके अतिरिक्त, सामाजिक सुधार आंदोलनों, विशेष रूप से महात्मा गांधी और बाबा साहेब अंबेडकर जैसे नेताओं द्वारा चलाए गए आंदोलनों ने इन समुदायों के रूपांतरण में महत्वपूर्ण योगदान किया। यह रूपांतरण एक निरंतर प्रक्रिया है, जिसमें समय के साथ समाज की मानसिकता में बदलाव और अधिक समानता की भावना उत्पन्न होनी चाहिए।

समाजशास्त्र में इस रूपांतरण की परिभाषा के अंतर्गत यह माना जाता है कि सामाजिक परिवर्तन केवल बाहरी या भौतिक सुधारों तक सीमित नहीं होता, बल्कि यह मानसिकता, मूल्यों और दृष्टिकोणों में बदलाव का भी परिणाम होता है।

निष्कर्ष एवं सुझाव :

अनुसूचित जातियों का सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है, जो भारतीय समाज के विविध पहलुओं से जुड़ी हुई है। भारतीय संविधान ने इन जातियों को समान अधिकार, संरक्षण और विशेष सुविधाएं प्रदान की हैं, लेकिन वास्तविक सामाजिक और सांस्कृतिक बदलाव की प्रक्रिया धीमी रही है। शैक्षिक, राजनीतिक और आर्थिक दृष्टिकोण से सुधार हुआ है, लेकिन जातिवाद, भेदभाव और अस्पृश्यता की मानसिकता अब भी समाज के कई हिस्सों में गहरी जड़ें जमाए हुए हैं।शैक्षिक क्षेत्र में अनुसूचित जातियों को आरक्षण की सुविधा मिली है, जिसके कारण उनके शिक्षा में भागीदारी में वृद्धि हुई है, और कुछ हद तक सामाजिक रूपांतरण की दिशा में सुधार हुआ है। हालांकि, ये सुधार ज्यादातर शहरी और विकसित क्षेत्रों तक सीमित हैं, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी अनुसूचित जातियों को शिक्षा और अन्य अवसरों का समान लाभ नहीं मिल पा रहा है। इसके अलावा, जातिवाद के कारण सामाजिक मान्यता और सम्मान में कमी के कारण वे समाज में निचली स्थिति में बने हुए हैं।आर्थिक रूप से भी, अनुसूचित जातियों को आरक्षण और सरकारी योजनाओं के माध्यम से कुछ मदद मिली है, लेकिन यह मदद हमेशा पर्याप्त नहीं रही है। अनेक अनुसूचित जाति के लोग आज भी निम्न श्रेणी के कामों में लगे हुए हैं और उनकी सामाजिक स्थिति में कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं हुआ है। शहरीकरण और औद्योगिकीकरण के बावजूद, अनेक क्षेत्रीय और ग्रामीण समुदायों में जातिवाद के कारण उनका समुचित विकास अवरुद्ध हो रहा है।

राजनीतिक क्षेत्र में, अनुसूचित जातियों के अधिकारों की सुरक्षा और उनके प्रतिनिधित्व को लेकर महत्वपूर्ण कदम उठाए गए हैं। संसद और राज्य विधानसभाओं में आरक्षित सीटों के माध्यम से इन जातियों को राजनीतिक भागीदारी मिली है, लेकिन उनका सही प्रतिनिधित्व और उनके मुद्दों को प्रभावी ढंग से उठाने के लिए और अधिक प्रयासों की आवश्यकता है। राजनीतिक दलों को इन समुदायों के मुद्दों पर गंभीरता से ध्यान देना चाहिए।समाज में जातिवाद और भेदभाव की मानसिकता को समाप्त करने के लिए शिक्षा, जागरूकता और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण की आवश्यकता है। यदि समाज के प्रत्येक वर्ग को समानता, सम्मान और न्याय का अनुभव होता है, तो हम एक समान और समरस समाज की दिशा में कदम बढ़ा सकते हैं।कुल मिलाकर, अनुसूचित जातियों का सामाजिक-सांस्कृतिक रूपांतरण अधूरा है, और इसके लिए कानूनी, सामाजिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से निरंतर प्रयासों की आवश्यकता है। यदि सभी समाजिक और राजनीतिक संस्थाएँ, साथ ही नागरिक समाज मिलकर काम करें, तो अनुसूचित जातियों के अधिकारों की रक्षा की जा सकती है और उनके जीवन स्तर में सुधार लाया जा सकता है। यह सुधार एक दीर्घकालिक प्रक्रिया है, जो सामूहिक प्रयासों और इच्छाशक्ति से संभव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. Ambedkar, B. R. (2014). The Problem of the Rupee: Its Origin and Its Solution. Education Department of Government of Maharashtra.

2. Jaffrelot, C. (2003). India’s Silent Revolution: The Rise of the Lower Castes in North India. Permanent Black.

3. Deshpande, S. (2009). The Legacy of B.R. Ambedkar and the Politics of Dalit Empowerment. Economic and Political Weekly, 44(30), 19-21.

4. Ghurye, G. S. (1969). Caste and Class in India. Popular Prakashan.

5. Oommen, T. K. (1997). Nation, Civil Society, and Social Movements: Essays in Political Sociology. Sage Publications.

6. Singh, K. (2005). The Sociology of Indian Society. 2nd ed. Himalaya Publishing House.

7. Verma, R. (2001). Dalits in Indian Society: Their Struggle for Equality. Rawat Publications.

8. Upadhyay, S. (2003). Social Transformation in India: Understanding Dalit Empowerment. Oxford University Press.
9. Beteille, A. (1992). The Idea of Natural Inequality and Other Essays. Oxford University Press.
10. Shah, A. M. (1998). The Structure and Change of Indian Society. HarperCollins India.
11. Kumar, A. (2008). Dalit Politics and the Indian State: From Political Mobilization to Representation. Social Scientist, 36(9/10), 31-44.
12. Thorat, S., & Newman, K. S. (2010). Caste and Economic Discrimination: Causes and Consequences. Economic and Political Weekly, 45(28), 73-78.

Predictors of Selection in Professional Course of Teaching

Prof. Surendra Pal
Department of Teacher Education
D.A.V. (P.G.) College, Muzaffarnagar, U.P.
Prof. Rakesh Kumar Sharma
Department of Education
C.C.S. University, Meerut
&
Mr. Praveen Kumar
Research Scholar
C.C.S. University, Meerut

Abstract

Every profession has got certain characteristics that are conducive for its effectiveness. At the same time, it has other aspects that lead to dissatisfaction in the profession. Teaching profession is also not an exception. If the teacher attains adequate cognitive and affective characteristics, they will be in the position to fulfil the educational objectives and national goals. The teacher has a powerful and abiding influence in the formation of the character of future citizen.

Now a day there is a general feeling that the teachers are not performing well in their jobs. There seems to be growing discontentment on the part of the teachers towards their job as a result of which standards of education is declining. One of the major reasons for this dissatisfaction is because the students are not entering in professional course by their choice. All the professional courses need specific characteristics like personality, intelligence, achievement, level of aspiration, aptitude, socio-economic status etc. If we know the characteristics of particular profession then we can make a better selection and obviously a better nation. Due to this very reason, in a project sanction by the U.P. Govt. Higher Education Department, Lucknow, researchers felt the need to study the different selecting characteristics of students studying in professional course of teaching.

Key Words: Professional course, Predictors of Selection, Teaching Profession, Psychological Traits

Introduction:

In the present digital era, no doubt that science on one hand has made our lives comfortable and smooth but on the other hand it has generated some seemingly inevitable problems. The problems of today, are not like which our forefathers have faced. The present modern age is an entirely technical age with numerous hazards. The scientific development of civilization has opened up multifaced requirements of life and thus created a vast scope for jobs to manage them which definitely was missing in early days. Still not withstanding this fact but related to this, the main problem of today being faced by our youth is lack of proper guidance to them in preparing them for the right job.

Furthermore, people working in various organizations feel frustrated for their potentialities being underutilized. As a result, strikes have become a common feature in every private or public sector organization. Obviously enough, the process of such activities has left such an adverse effect on the country that whole economy, the backbone of any nation, is jeopardized and further threatened to today's world of competitiveness there is not a single man who is devoid of ambition in some or the other form. A great deal of individual variation is found with regard to goal setting behaviour. Persons with an equal amount of ability may differ significantly in their performance.

The attainment of these higher ideals and the satisfaction of the task and social needs of the students depends upon number of factors. These factors play crucial role in determining the career.

One of the important potential determinants of human behaviour is personality. The way in which human beings behave in different situation of life is certainly the output of distinct organizations of different traits of personality. The unique composition of the personality traits determines largely the vocational preference of the individuals. It is more than evident that a teacher having good characteristics or one with a wholesome and integrated personality can always overcome any amount of difficulty and inadequacy in the system and successfully manipulate or even innovate and invent his own methodology, so as to attain the teaching goals most efficiently.

Beside personality traits, there are other factors which have an impact on the choice of a vocation of an individual viz. level of aspiration, socio economic status, intelligence and academic achievements. In the present research paper, the researchers make an attempt to identify the predictors of selection in professional course of teaching.

Objectives of the Study:

The study was design to realize the following objectives:

1. To assess the prediction ability of the cognitive factors (Intelligence & Academic Achievement), affective factors (Personality & Level of aspiration) and socio-economic status for the selection in professional course of teaching.
2. To assess the magnitude of various cognitive and affective factors that contributes to predict the selection in professional course of teaching.

Hypotheses of the Study:

On the basis of above objectives following hypotheses are formulated for the present study:

1. The higher a learner is on Cognitive, Affective and Socio-economic status greater are the chances of his selection in professional course of teaching.
2. Both cognitive and affective factors equally contribute to predict the selection in professional courses of teaching.

Research Methodology:

The purpose of study in hand was to make an inquiry for various cognitive and effective predictors that contributes in the selection of students in professional course of teaching. In this regard the methodology of the research is explained in the following heads:

Method:

The purpose of the study in hand is to make an enquiry into the predictors in selection of students in the vocational course of teaching. For this "Normative survey method of research" was chosen in preference to other possible methods. The criterion for selecting this method was that most of the researchers are of the view that in an enquiry type of study "Normative Survey Method" yields better results.

Population:

The population for the study is all the pupil teachers of B.Ed. programme associated with CCS university, Meerut.

Sample:

By cluster random sampling method, a sample of 500 pupil teachers was selected for the data collection from different colleges running B.Ed. programme and are affiliated to CCS University, Meerut.

Tools Used:

Following tools are used to measure the magnitude of various dependent and criterion variable:

Dependent Variable:

1. Intelligence: Test of General Intelligence for college students developed by Dr. K.S. Misra and Dr. S.K. Pal
2. Personality: Hindi translation of Big Five Personality Inventory developed by Oliver P. John and Sanjay Srivastava
3. Level of Aspiration: Level of Aspiration Measure by Dr. Mahesh Bhargava & Prof. M.A. Shah
4. Socio-economic status Scale Questionnaire developed by the researchers himself.

Criterion Variable:

5. Academic Achievement: Marks in state level B.Ed. Entrance test of U.P. Government.

Statistical Technique Used:

For testing the operational hypotheses of the projects as well as for achieving the objectives following measures will be used to analyse and interpret the result. They are:

Mean, Standard Deviation. ‘t’ Test, Normal Probability Curve, Aitkin’s method of Multiple correlation

Analysis of the Data:

The information gathered by various tools are tabulated, raw data were converted into group data and organised with respect to various predictors intelligence, level of aspiration, achievement, socioeconomic status and personality. After this, the group data are subject to statical treatment in the form of mean and standard deviation the calculated mean and standard deviation is shown in the table below:

Table-1: Mean and Standard Deviation of Various Predictors

S. No.	Variables	noted by	Mean	S.D.(σ)
1.	elligence	1	38.44	7.37
2.	rsonality	2	133.06	33.34

3.	vel of Aspiration	3	2.72	3.18
4.	cio-economic Status	4	73.16	15.99
5.	ademic Achievement	c	202.66	41.44

The Table-1 depicts the calculated mean and Standard deviation of all the five variables. When they are compered with the norms as given in the standardized test manual it was found that magnitude of all the variables fall in the category of average. Also, the standard deviation is not too high we can interpret the result that the students of B.Ed. possess average Intelligence, Level of aspiration, Academic Achievement, Socio-economic status and Personality trait.

In the next step, the coefficient of correlation was calculated between criterion variable and four dependent variables also between the two dependant variables. The calculated are between these variables are shown below:

Table-2 Co-efficient of Correlation between different variables

No.	**o-efficient of Correlation**	**Value of 'r'**
1.	$r_{c.1}$	0.68
2.	$r_{c.2}$	0.31
3.	$r_{c.3}$	0.41
4.	$r_{c.4}$	0.26
5.	$r_{1.2}$	0.29
6.	$r_{1.3}$	0.48
7. 8.	$r_{1.4}$	0.21
9.	$r_{2.3}$	0.41
10.	$r_{2.4}$	0.23
11.	$r_{3.4}$	0.27

From the Table-2 above it is clear that the co-efficient of correlation is highest in between Academic Achievement and Intelligence and is least between Academic achievement and Socio-economic status. The other correlation co-efficient are as mentioned in the table. These co-efficient of correlation are used to calculate variance, F-Value and multiple regression equation, their results are shown below:

Variance: The variance equation and its value is given as:

$$R^2_{c.1234} = b_1 r_{c.1} + b_2 r_{c.2} + b_3 r_{c.3} + b_4 r_{c.4}$$

$$R^2_{c.1234} = 0.49$$

F-value: The formula of F and its calculated value is:

$$F = \frac{R^2}{1 - R^2} \times \frac{N - K - 1}{K}$$

$$\mathbf{F}= 94.925 \quad \text{with } df(4, 494)$$

The obtained 'F' value is greater than table value 3.41 at 0.01 level of significance. It may be Interpreted that F-value is highly significant. It can be further said that the variance ($R^{2)}$ is 49% i.e. nearly 50% variance of criterion variable may be predicted by joint four predicates intelligence, personality, Level of aspiration and Socio-economic Status of the students of B.Ed.

Multiple Regression equation:

Multiple Regression equation after calculating the constant A is given by:

$$\boldsymbol{X_c} = 3.38\boldsymbol{X_1} + 0.104\boldsymbol{X_2} + 2.75\boldsymbol{X_3} + 0.246\boldsymbol{X_4} + 33.42$$

It appears from the regression equation thus that X1 predictor contribution is greatest followed by X3 and then X4 and the lowest is X2 as we can say that intelligence is the first best predictor and country contributes the lowest

Conclusions:

With reference to the analysis at a glance we conclude that all the Mean and Standard Deviation fall under the category of average and the Standard Deviation is not too high it is safe to interpret that the students entering in professional course of teaching possesses average magnitude of Intelligence, Personality, Level of Aspiration, Academic Achievement and Socio-economic status.

After the analysis it was also interpreted that the four variable Intelligence, Level of Aspiration, Socio-economic status and Personality jointly contributes approximately 50% in the selection of students for professional course of Teaching. Furthermore, the intelligence is the first-best predictor and contributes highest in selection probability of the students while Personality contributes lowest among the four variables. Level of aspiration being the second-best predictors and Socio-economic Status being the third-best predictor in selection of students for professional course of teaching.

Educational Implications:

There is no exaggeration in saying that the findings of the project made will be of immense importance to help the aspiring students, parents, teachers, counsellors and all those who are directly or indirectly concerned with the system of education. The educational implication can be stated as follows:

1. The findings of this project will be useful for Teacher-Trainee and Teacher-Educators to develop insight in them.
2. Training institutions will be greatly benefited by making it a point to assess these aspects of pupil-teachers at the time of admission so that individual with proper characteristics may be selected for teacher-training course.
3. The guidance worker can use the result obtained of this project to analyse the problem faced by the teacher-educators and teacher-trainee. A counsellor may be able to redesign the most appropriate intervention programmes which if implemented carefully, may help these teachers reconstruct their life process with a better future.

4. The findings will have implication for policy planning also, by making several recommendations and introduce programmes to reduce the maladjustment and to improve course structure.
5. The findings will also be useful for clinical purpose. By observing the trainee behaviour, the supervisor or mentor can assess the level of dissatisfaction and remedial efforts may be made to remove or minimize the same.

Delimitations of the study:

The study in hand has been delimited with respect to following:

1. The study has been conducted for one profession course only i.e. Teaching.
2. The study has been delimited to the B.Ed. pupil-teachers of CCS University, Meerut.
3. The study has been confined to the contribution of two cognitive characteristics only i.e. intelligence and achievement.
4. The study has been confined to the contribution of two affective characteristics only i.e. Personality and Level of Aspiration.
5. The study has been confined to socio-economic status of the family of students.
6. The study has been delimited to 500 students only.
7. The study has been confined to only those B.Ed. Students which are studying either in Govt. College or Grants-in-Aid college of U.P. Government under C.C.S. University, Meerut. It does not include the self-finance institutions running B.Ed. Course.

Acknowledgement:

This research paper is an outcome of the project sanctioned & funded by **Department of Higher Education, U.P. Government**, Lucknow vide letter no. - Govt. Order No.- 23/2022/116/Seventy-4-2022-4(28)/2021, Serial No. 06 dated 31/03/2022 to P.I. Dr. Surendra Pal and Co-P.I. Dr. Rakesh Kumar Sharma for the research topic "**Analysis of Predictors for the Selection in Professional course of Teaching."**

References:

1. Aiken, L.R. (2000), Psychological Testing and Assessment (10th ed.), Boston: Allyn and Bacon.
2. Best, John W. (2018), Research in Education (Tenth Edition), Indian Print: Pearson India Education Services Pvt. Ltd.
3. Bhatnagar, R.P. and Poonam Rani Bhatnagar (1989), Experimental Designs of Research in Behavioral Sciences, Meerut: Rajhans Publications.
4. Eysenck, H.J. (1970), The Structure of Human Personality, London: Methuen.
5. Garrett, Henry E. (2004), Statistics in Psychology and Education, (Eleventh Indian Edition), Bombay: Paragon International Publishers.
6. Ghosh, B.N. (1982); Scientific Methods and Social Research, New Delhi: Sterling Publishers Pvt. Ltd.
7. Guilford, J.P. and Benjamin Fruchter (1978), Fundamental Statistics in Psychology and Education, (International Students Edition), Tokyo: McGraw-Hill Kogakusha Ltd.

8. Gupta, S.P. (2006); Job Satisfaction among Teachers, (Second Edition) Allahabad: Sharda Pustak Bhawan.
9. Kerliger, Fred. N. (1983), Foundations of Behavioural Research, (Second Indian Reprint), New Delhi: Surjeet Publications.
10. Kothari, C.R. (2006); Quantitative Techniques, (Second Print), New Delhi: Vikas Publishing House Pvt. Ltd.
11. Kothari, C.R. (2009), Research Methodology-Methods and Techniques, Second Revised Edition, New Delhi: New Age International Pvt. Ltd.
12. Lindquist, E.F. (1970), Statistical Analysis in Educational Research, (Indian Reprint) Calcutta: Oxford and IBH Publishers Co.
13. Srivastava, J.P. (1980); Non-Cognitive Factors in Academic Achievement. (First Indian Reprint) Meerut: Anu Books.
14. Sharma, R.A. (2015), Advanced Statistics in Education and Psychology, Meerut: R. Lall Book Depot.
15. Yadav, M. S. and S.K. Mitra (1980); Educational Research Methodological Perspective. Baroda: CASE.
16. Young, Pauline V.(1960), Scientific Social Surveys and Research. (Third Edition), New York: Prentice-Hall.

****

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

भारतीय शिक्षा के विभिन्न कालखंडों में प्रचलित शैक्षिक दर्शन का अध्ययन

डॉ० विपिन तेवतिया
शोधकर्ता, अध्यापक शिक्षा विभाग
डी०ए०वी० कॉलेज, मुजफ्फरनगर, उ०प्र०
डॉ० चमन कौर
असिस्टेंट प्रोफेसर, बी०एड० विभाग
श्री लाल बहादुर शास्त्री डिग्री कॉलेज, गोण्डा, उ०प्र०

सारांश

शिक्षा दर्शन का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि यह शिक्षा की एक व्यापक प्रणाली का निर्माण करने में सहायक है, विभिन्न अवधियों के दौरान, भारत ने विकास के विभिन्न चरणों को देखा है। वैदिक कालीन शिक्षा, मध्यकालीन शिक्षा, आधुनिक शिक्षा, यथार्थवादी, व्यावहारिक, आदर्शवादी और विभिन्न प्रवृत्तियों के प्रभाव से शिक्षा में नई प्राथमिकताएँ उभरी हैं और विभिन्न विचारों वाली शैक्षणिक संस्थाएं विकसित हुई हैं। शैक्षिक दार्शनिक ढांचे के बुनियादी सिद्धांतों की मुख्य कल्पना यह है कि शिक्षा की भूमिका कौशल विकसित करना, छात्रों को आत्मनिर्भर, रचनात्मक, जागरूक और स्थानीय संदर्भ में परिपक्व बनाना है। इससे राष्ट्र में लोकतांत्रिक उत्साह का निर्माण होगा और इसके धर्मनिरपेक्ष ताने–बाने को मजबूत किया जा सकेगा, जिसकी प्राप्ति का संकल्प हमने संविधान में लिया है। समाज के लोकतांत्रिक, सामाजिक परिवर्तन में योगदान देने के लिए, विभिन्न शैक्षिक संस्थानों द्वारा प्रस्तावित दार्शनिक विचार, आदर्शों और उनके रोजमर्रा के कामकाज के बीच विभिन्न शैक्षणिक अंतराल बने हुए हैं। दार्शनिकों का मानना है कि भारतीय शिक्षा दर्शन मानक रूप से भारतीय शिक्षा में सामाजिक परिवर्तन के सकारात्मक मतों की विचारधारा एवं परंपरा का विस्तार कर सकता है। भारतीय शैक्षिक दर्शन शिक्षा के प्रति, शिक्षकों और शिक्षार्थियों में एक प्रभावी एकीकृत दृष्टिकोण को विकसित करने और रचनात्मक रुप से समाज की आंतरिक क्षमता को आकार देने में एक मजबूत आधार को प्राप्त करने में सहायता कर सकता है। यह शोध पत्र सिद्धांत और क्रिया में शिक्षा के एक व्यापक दर्शन को प्राप्त करने के लिए अंतराल की शैक्षिक चुनौतियों को प्रस्तुत करता है।

मूलशब्दः– शैक्षिक दर्शन, वैदिक शिक्षा, बौद्ध शिक्षा, जैन शिक्षा, इस्लामी शिक्षा, आधुनिक शिक्षा।

प्रस्तावना :– भारतीय शिक्षा प्रणाली के परिदृश्य ने मात्रात्मक और गुणात्मक दोनों ही दृष्टि से मौलिक संरचनात्मक परिवर्तन देखा है, आज के वैश्वीकरण युग में, ज्ञान तीव्र गति से एक ऐसा माध्यम बन गया है जो राष्ट्रों की उन्नति में सहायक है। शिक्षा की दार्शनिक मौलिक संरचनात्मकता व्यक्तियों के लिए मूल्यों और गुणों के समूह को स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान देती है, जबकि ज्ञान आधारित दार्शनिक विश्लेषणों का विकास शैक्षणिक विचारधारा या सामाजिक सांस्कृतिक संदर्भ में अन्य विचारकों से भिन्न होता है। किसी राष्ट्र की शिक्षा प्रणाली का शैक्षिक दर्शन, आधुनिक वैश्विक परिदृश्य में सफल होने के लिए एक राष्ट्र को अपनी पूर्ण क्षमता से स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारतीय शैक्षिक दर्शन की पृष्ठभूमि, भारतीय जीवन दर्शन और विचारों की मुख्य विशेषताएं आध्यात्मिक मूल्यों की खोज पर आधारित हैं, जो अस्तित्व की एकता, मनुष्य की दिव्यता, पंथों और धर्मों के सामंजस्य पर बल देती हैं, वहीं दूसरी ओर, शैक्षिक दर्शन की पश्चिमी परंपराएँ समाज में उसकी उपयोगिता के अनुसार मनुष्य के मूल्य को मापने के लिए जीवन के व्यावहारिक दृष्टिकोण पर बल देती हैं। भारतीय शिक्षा दर्शन सार्वभौमिक मानवता और आध्यात्मिकता की भावना उत्पन्न करने के सार को महत्व देता है। भारतीय शिक्षा दर्शन में सार्वभौमिक

मानवता की भावना की प्राप्ति द्वारा जीवन के प्रतिरूप को विकसित करने की आवश्यकता पर बल दिया है। वर्तमान की आधुनिक दुनिया में बदलावों का सामना करने और इक्कीसवीं सदी में शिक्षार्थी की शैक्षिक आवश्यकताओं के अनुकूल होने के लिए, भारतीय शिक्षा दर्शन को उचित संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता है। अतीत और वर्तमान के बीच सम्बन्धों को बेहतर बनाने के लिए शिक्षार्थियों को भविष्य के लिए तैयार करना और उन्हें सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं में विविधता का उत्सव मनाने की आवश्यकता की ओर उन्मुख करना भारतीय शिक्षा दर्शन की पृष्ठभूमि का मुख्य आधार है। वर्तमान भारतीय शैक्षिक संस्थानों को विज्ञान, आध्यात्मिकता और प्रौद्योगिकी के बीच अन्तर–सम्बन्ध बनाए रखने के लिए रचनात्मक भूमिका निभानी होगी। इस परिप्रेक्ष्य के साथ, प्रस्तुत शोध पत्र भारत में शैक्षिक दर्शन के वर्तमान में अभिप्राय का अन्वेषण करने का प्रयास करता है। शोध के खंडों में, शोध का उद्देश्य व्यापक ऐतिहासिक अवधियों में शैक्षिक दर्शन में प्रवृत्तियों की विशिष्ट विशेषताओं को प्रस्तुत करना है।

शोध का औचित्य :– प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता ने भारतीय शिक्षा के विभिन्न कालखंडों में प्रचलित शैक्षणिक दर्शन का अध्ययन किया है। यह शोध भारतीय शिक्षा के विभिन्न कालखंडों में प्रचलित शैक्षणिक दर्शन का अध्ययन कर शोध की उपयोगिता को ज्ञात करके शिक्षार्थियों को भविष्य के लिए तैयार करने में शैक्षणिक दर्शन की भूमिका को और अधिक प्रभावशाली बनाने में सहायक होगा एवं शिक्षार्थियों को नवीन विचार धारण करने के लिए प्रेरित करेगा।

प्रस्तुत शोध पत्र के उद्देश्यः

शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य भारतीय शिक्षा के विभिन्न कालखंडों में प्रचलित शैक्षणिक दर्शन का विश्लेषनात्मक अध्ययन करना है।

शोध विधिः– प्रस्तुत शोध विश्लेषनात्मक एवं वर्णात्मक विधि पर आधारित है इस शोध में पूर्णतः द्वितीय आंकडों का प्रयोग किया गया है। इसमें विभिन्न शोध पत्रों, पत्र–पत्रिकाओं, लेखों एवं पुस्तकों का सन्दर्भ लेते हुए, वर्णात्मक व्याख्या एवं निष्कर्ष निकाले गये हैं।

व्याख्याः– भारतीय शैक्षणिक दर्शन अन्य सभी देशों की तरह, समाजों के ऐतिहासिक परिवर्तनों, भारत एवं भारतीय संदर्भ के बाहर से विभिन्न समुदायों के विषम विचारों के प्रवाह के कारण विविध शैक्षिक दर्शन से प्रभावित रहा है। यह स्वतंत्रता–पूर्व से स्वतंत्रता–पश्चात युग तक के विभिन्न दृष्टिकोणों की वर्णात्मक व्याख्या करता है। शिक्षा के दार्शनिक विचारों के विभिन्न स्रोत, सामग्री के विकास, शिक्षण और दर्शन के माध्यम से एक शिक्षार्थी की आंतरिक क्षमता को आकार देने में शिक्षकों के भविष्यगत एकीकृत दृष्टिकोण को सम्मलित करने के संदर्भ में परिवर्तनों पर प्रकाश डालता है। प्रस्तुत शोध का विश्लेषनात्मक अध्ययन करने के उपरान्त शोधार्थी ने भारतीय शिक्षा के विभिन्न कालखंडों में प्रचलित शैक्षणिक दर्शन के अध्ययन की वर्णात्मक व्याख्या की है। जिससे इसे शिक्षा प्रणाली के साथ जोड़कर, सभी भावी शिक्षार्थियों में एक लोकतांत्रिक दृष्टि, वैज्ञानिक स्वभाव और न्यायपूर्ण समाज की आवश्यकता को स्थापित किया जा सके। भारतीय शिक्षा दर्शन से प्रभावित विशिष्ट शिक्षाविदों ने भारतीय शिक्षा दर्शन की एक अलग भूमिका को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। शिक्षा के इन दर्शनों ने वैकल्पिक शैक्षिक दृष्टिकोण के रूप में आदर्शों, दर्शन, संस्कृति, शैक्षिक मूल्यों का पुनर्निर्माण करने और भारतीय शिक्षा प्रणाली के बीच की दूरियों को कम करने का प्रयास किया है।

वैदिक कालः– प्राचीन भारत में वेदों का मानव के जीवन में बहुत महत्व था, उन्हें पवित्र ग्रंथ माना जाता था जो मानव को उनके जीवन का सही मार्ग दिखाते थे। भारत की पहली शिक्षा प्रणाली वैदिक शिक्षा प्रणाली थी, जहाँ सभी वर्ण के बच्चों को गुरुकुल में उनके जीवन के दौरान वेदों की शिक्षा दी जाती थी। वैदिक शिक्षा के दौरान चार वेदों, अर्थात् ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद का अध्ययन किया जाता था।

वैदिक शिक्षा, जैसा कि अधिकांश लोग समझते हैं, शिक्षा का धार्मिक रूप नहीं है। गुरुकुल के समय में छात्रों को निःशुल्क शिक्षा दी जाती थी, तथा गुरु (शिक्षक) और शिष्य (छात्र) एक ही स्थान (गुरुकुल) में रहते थे। वैदिक शिक्षा प्रणाली वैदिक ग्रंथों की समझ पर केंद्रित थी, तथा यह धार्मिक तटस्थता की ओर अधिक इशारा करती थी। इसके अलावा, इसने छात्रों के बीच स्वतंत्रता का अभ्यास किया। वैदिक शिक्षा की विशेषताएं इसे 21वीं सदी में भी प्रासंगिक बनाती हैं– भारतीय शिक्षा के वैदिक काल ने मनुष्य की समग्र समृद्धि और आध्यात्मिक कल्याण पर बल दिया, जिसमें मानव जाति की दिव्यता के दार्शनिक और आध्यात्मिक पहलुओं को स्वीकार किया गया। इस अवधि के दौरान, सीखने को जीवन के उच्चतम लक्ष्य मुक्ति या मुक्ति की प्राप्ति के साधन के रूप में खोजा गया था, जिसे अक्सर हिंदू धार्मिक प्रवचनों का एक आवश्यक पहलू माना जाता है। वैदिक काल के वैकल्पिक दृष्टिकोण भी थे जो इस तथ्य पर बल देते थे कि शिक्षा को नैतिक चरित्र के विकास से संबंधित होना चाहिए जिससे बौद्धिक क्षमताओं को प्राप्त करने के एक विशेष साधन के रूप में विकसीत किया जा सके।

वैदिक कालीन प्राचीन भारत के शैक्षिक दर्शन में, शिक्षक के प्रति सम्मान को सर्वोच्च महत्व का गुण माना जाता था। वेदों का ज्ञान देने वाले शिक्षक को एक धुरी के रूप में स्वीकार किया गया। वैदिक शैक्षिक दर्शन में मोक्ष या मुक्ति की प्राप्ति का अत्यधिक महत्व था। उपनिषद में शैक्षिक दर्शन सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं से अधिक निकटता से जुड़ा हुआ है। इस शैक्षिक दर्शन ने व्यक्ति के सर्वांगीण विकास पर बल दिया, व्यक्तित्व और चरित्र के विकास को प्राथमिकता दी, राष्ट्रीय एकीकरण के प्रति जवाबदेही, सामाजिक भूमिकाओं और स्थिति का ज्ञान और व्यक्ति की व्यावसायिक दक्षता का विकास किया। अधिकांश संदर्भों से ज्ञात होता है कि शिक्षा का माध्यम संस्कृत या क्षेत्रीय भाषाएँ थी एवं इस काल की शैक्षणिक विधियों में प्रश्न पूछना, आगमन और निगमन, चर्चा, विवरण, चित्रण, व्यावहारिक और कथात्मक प्रदर्शन सम्मलित थे। छात्र को चार आश्रमों या जीवन चरणों ब्रह्मचर्य (विद्यार्थी जीवन), गृहस्थ (गृहस्थ जीवन), वानप्रस्थ (वन भ्रमणकर्ता/वनवासी जीवन), तथा संन्यास (त्यागी जीवन) के सामाजिक ताने–बाने में जीवन व्यतीत करना होता था। वैदिक काल में शैक्षिक दर्शन मोक्ष या मुक्ति प्राप्त करने के जीवन चरणों से प्रभावित था, जिससे व्यक्ति को अपने अन्दर आध्यात्मिक क्षेत्र को प्रकट करके आत्म–साक्षात्कार में संलग्न होने की प्रक्रियाओं को समझने में मदद प्राप्त हो सके। वैदिक काल में, इस बात पर बल दिया गया कि शिक्षा का मूल उद्देश्य छात्रों को पहले चरण की शिक्षा देने के साथ ही समाप्त नहीं हो जाता बल्कि इससे उन्हें जीवन के अन्य चरणों की ओर बढ़ने में मदद मिलनी चाहिए।

बौद्ध काल एवं जैन काल :– इस काल के शैक्षिक परिवर्तनों में बौद्ध धर्म एवं जैन धर्म का प्रभाव देखा गया। धर्म के नियम जैसे मूल सिद्धांतों के आधार पर, इस काल के विद्यालयों में ज्ञानात्मक, सत्तामूलक और आध्यात्मिक वास्तविकताओं में अंतर पाया गया है। बौद्ध शिक्षा प्रणाली वह शैक्षणिक पद्धति है जो 5वीं शताब्दी से विद्यमान भगवान बुद्ध के जीवन के अनुभवों पर आधारित है। यह शिक्षा प्रणाली शिक्षार्थी के नश्वर, मानसिक और शारीरिक विकास पर ध्यान केंद्रित करती है। इसका उद्देश्य जीवन के सभी क्षेत्रों में शिक्षार्थी के सर्वांगीण समग्र विकास को महत्वपूर्ण बनाना है। भारतीय संदर्भ में बौद्ध धर्म ने मोक्ष की लौकिक भावना को समझना महत्वपूर्ण माना है। भारतीय शैक्षिक दर्शन के विस्तार से विश्वविद्यालयों के रूप में उनकी अभिव्यक्ति को विश्व स्तर पर स्वीकार किया गया, उदाहरण के लिए, बौद्ध युग के दौरान के विश्वविद्यालयों और शिक्षा प्रणाली को सार्वभौमिक प्रसिद्धि प्राप्त करने का विशेषाधिकार प्राप्त हुआ। शिक्षा के अंतिम लक्ष्य के रूप में चार महान सत्यों (आर्यसत्य) पर बल दिया गया। संसार, जीवन और मुक्ति के बीच सम्बन्धों को निम्न रूपों में समझाया गया, संसार दुखों (दुख) से भरा है और दुखों का कारण अज्ञान (सुखमय जीवन) है, मुक्ति प्राप्त करने के लिए दुखों का निवारण (दुख निरोध) महत्वपूर्ण है और शिक्षार्थी को

दुखों से छुटकारा पाने के तरीकों (दुख–निरोध–मार्ग) के बारे में ज्ञात होना चाहिए। इस शिक्षा का उद्देश्य निर्वाण प्राप्त करना था और सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली इसी के अनुरूप स्थापित की गई थी। इस प्रणाली में शिक्षा के आध्यात्मिक, आर्थिक और सामाजिक उद्देश्य पर बल दिया गया। शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों के संदर्भ में, पढ़ना, लिखना और बुद्धि का व्यापक विकास करना महत्वपूर्ण होता था। शिक्षण और सीखने की विधियों में वाद–विवाद, चर्चा, व्याख्यान, प्रश्न–उत्तर, विचार–विमर्श और इसी तरह की विधियाँ शामिल थी। इसके अलावा, चिंतन, ध्यान और स्वाध्याय पर जोर दिया गया, विभिन्न मठों और विहारों ने विद्यार्थियों के बौद्धिक कौशल को प्रशिक्षित करने के लिए तर्क विधि को भी शामिल किया।

जैन शिक्षा का इतिहास मुख्य रूप से सत्य सापेक्षवादी और बहुलवादी है। कुछ लोगों के लिए जो सत्य है, वह दूसरों के लिए सत्य नहीं हो सकता। इसलिए, ज्ञान को अलग–अलग दृष्टिकोण से देखा जा सकता है। छात्रों को वस्तुओं को अलग–अलग दृष्टिकोण से देखना सिखाया जाना चाहिए। उन्हें खुले मस्तिष्क का होना चाहिए और अलग–अलग विचार को स्वीकार करने के लिए तैयार रहना चाहिए। शिक्षा से आत्मज्ञान होना चाहिए, छात्रों को अंक या अच्छी रिपोर्ट के लिए पढ़ाई नहीं करनी चाहिए। उन्हें अपने मस्तिष्क को व्यापक बनाने और अपनी विचार को व्यापक बनाने के लिए पढ़ाई करनी चाहिए। पढ़ाई का उद्देश्य नया ज्ञान प्राप्त करना और खुद का विकास करना होना चाहिए। छात्रों को अपनी कमियों और बुरे व्यवहारों का एहसास होना चाहिए। छात्रों को उन बुरी आदतों से दूर रहना चाहिए जो उन्होंने बुरे व्यवहारों से सीखी हैं। उन्हें उन बुरे व्यवहारों को दूर करने और उनकी जगह अच्छे व्यवहार अपनाने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। शिक्षा में अहिंसा को एक ऐसे सद्गुण के रूप में विकसित किया जाना चाहिए, जिसका न केवल अभ्यास किया जाए, बल्कि उसकी आकांक्षा भी की जाए, बल्कि उसे सामाजिक रूप से भी अपनाया जाए। जैन धर्म में नौ सिद्धांतों की शिक्षा दी जाती है, जिन्हें नौ श्रेणियां कहा जाता है, ताकि आत्मा और पदार्थ के बीच की साझेदारी समाप्त हो जाए। शुरुआत में चौत्य, बसदी और मठ धार्मिक केंद्र थे, लेकिन बाद में यह शैक्षणिक केंद्रों के रूप में विकसित हुए। जैन धर्म ने मातृभाषा के माध्यम से सार्वभौमिक शिक्षा को महत्त्व दिया और समय के साथ सह–शिक्षा पर भी बल दिया। पुरुषों और महिलाओं दोनों को मठों में रहने और जैन धर्मग्रंथों का अध्ययन करने की अनुमति थी। जैन शिक्षा को उस समय के कई शाही राजवंशों जैसे कदंब, गंग, बादामी के चालुक्य, राष्ट्रकूट और होयसल से बढ़ावा मिला। बौद्ध धर्म और जैन धर्म, सामान्यतः एक व्यक्तिगत ईश्वर को मानवीकृत करने, नैतिकता पर अधिक बल देने की आकांक्षा रखते हैं।

इस्लामी शिक्षाः– इस्लामी शिक्षा की परंपरा में धर्मग्रंथ और उसके अध्ययन की केंद्रीयता ने इस्लाम के इतिहास में लगभग सभी समय और स्थानों में शिक्षा को धर्म का केंद्रीय स्तंभ बनाने में मदद की, इस्लामी शिक्षा में कुरान ज्ञान का इष्टतम स्रोत है। कुरान की परंपराओं को पढ़ाने के लिए प्राथमिक विद्यालय के रूप में मकतबों, मदरसों मस्जिदों, दरगाहों यहां तक कि निजी घरों, खानगाहों, दुकानों का भी प्रयोग किया गया। सत्तारूढ़ अभिजात वर्ग ने उलेमाओं का समर्थन और सहयोग हासिल करने के प्रयास में मकतबों और मदरसों के रूप में धार्मिक शिक्षा के संस्थान स्थापित करने शुरू कर दिए। जिससे इस्लामी शिक्षा को फैलाने और साझा सांस्कृतिक परियोजना में विविध इस्लामी समुदायों को एकजुट करने में मदद मिली। इस्लामी शिक्षा प्रणाली से प्राप्त शैक्षिक दर्शन का उद्देश्य कुरान के प्रवचनों को सीखना और सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक सामंजस्य के लिए विकास पर ध्यान केंद्रित करना था। इस्लामी ज्ञान और व्यवहारिक विशेषज्ञता की प्राप्ति के बीच सम्बन्ध स्थापित किया गया, विभिन्न प्रकार के शिल्प और इमारत बनाने की शिक्षा पाठ्यक्रम का अंग थी। इस्लामी सिद्धांतों के आधार पर, शिक्षा को महत्त्व दिया गया, कई दस्तावेजों से पता चलता है कि मध्ययुगीन संस्थानों के सामान्य पाठ्यक्रम में दर्शन, गणित, तर्कशास्त्र,

साहित्य, इतिहास, भूगोल, चिकित्सा, कृषि, व्याकरण जैसे विविध विषय शामिल थे और शिक्षा संस्थानों में शिक्षा का माध्यम अरबी, फारसी और उर्दू भाषा था।

आधुनिक कालः– आधुनिक शिक्षा प्रणाली ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत प्रारम्भ हुई। लॉर्ड मैकाले ने भारत में पश्चिमी शैक्षिक दर्शन की शुरुआत की, मैकाले के शैक्षिक विचारों ने यूरोपीय साहित्य और विज्ञान के प्रचार को महत्व दिया और इससे अंततः स्थानीय भारतीय साहित्य और कलाओं की उपेक्षा हुई। भारत में ब्रिटिश शासन के दौरान, 18वीं शताब्दी से लेकर 20वीं शताब्दी के मध्य तक, शिक्षा प्रणाली में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। अंग्रेजों ने भारत में शिक्षा की एक औपचारिक प्रणाली शुरू की, इस शिक्षा का उद्देश्य भारतीयों का एक ऐसा वर्ग तैयार करना था, जो प्रशासनिक और लिपिक पदों पर काम कर सके। ब्रिटिश शिक्षा नीतियों का प्रारंभिक ध्यान ब्रिटिश अधिकारियों और मिशनरियों की शिक्षा पर था। उस समय ईसाई मिशनरियों ने भारतीय जनता को शिक्षित करने में बड़ी भूमिका निभाई थी, परन्तु ईसाई मिशनरियों का मुख्य ध्यान धर्म सिखाने और लोगों को ईसाई धर्म में परिवर्तित करने की कोशिश पर था। उन्होंने अंग्रेजी माध्यम के स्कूल स्थापित किए, जिन्हें 'एंग्लो–वर्नाक्युलर' स्कूल के रूप में जाना जाता है 1835 में लॉर्ड मैकाले ने अंग्रेजी शिक्षा अधिनियम प्रस्तुत किया और शिक्षा के लिए पश्चिमी शैक्षिक दर्शन से प्रभावित महत्वपूर्ण सिफारिशें कीं। लॉर्ड मैकाले भारतीय और प्राच्य साहित्य को बहुत महत्व नहीं देता था और मानता था कि पश्चिमी विज्ञान बेहतर है। लॉर्ड मैकाले ने कहा था कि "एक अच्छी यूरोपीय लाइब्रेरी की एक अलमारी भारत और अरब के सभी साहित्य से अधिक मूल्यवान है तथा ब्रिटिश शासन को पश्चिमी विज्ञान और साहित्य को केवल अंग्रेजी में पढ़ाने के लिए संसाधनों का उपयोग करना चाहिए। भारत में स्थापित स्कूलों और कॉलेजों में पढ़ाई के लिए अंग्रेजी भाषा का इस्तेमाल किया जाना चाहिए और जिला स्तर पर अधिक स्कूल और कॉलेज स्थापित किए जायें"। अंग्रेजों ने उच्च और मध्यम वर्ग के भारतीयों के एक चयनित समूह को शिक्षित करने का निर्णय लिया, जो व्यापक आबादी तक पश्चिमी शिक्षा पहुंचाने में मदद कर सकें।

लॉर्ड मैकाले ने भारत में अंग्रेजी शिक्षा को बढ़ावा देने पर जोर दिया, इनके अधिनियम के कारण पूरे देश में अंग्रेजी स्कूल और कॉलेज स्थापित हुए। अंग्रेजों ने कलकत्ता, बॉम्बे और मद्रास जैसे प्रमुख शहरों में भी विश्वविद्यालय स्थापित किए। इन विश्वविद्यालयों ने शिक्षा के ब्रिटिश मॉडल का पालन किया, हालाँकि शिक्षा तक पहुँच एक छोटे से कुलीन वर्ग तक ही सीमित थी। ब्रिटिश भारत के दौरान शिक्षा प्रणाली अत्यधिक केंद्रीकृत और औपनिवेशिक सरकार द्वारा नियंत्रित थी। पाठ्यक्रम ब्रिटिश मूल्यों को बढ़ावा देने के लिए तैयार किया गया था। भारतीय समाज पर ब्रिटिश शिक्षा का प्रभाव मिश्रित था। एक ओर, इसने भारतीयों को आधुनिक विचारों, विज्ञान और प्रौद्योगिकी से परिचित कराया। साथ ही, इसने भारत में आधुनिक शिक्षा प्रणाली के विकास की नींव भी रखी। दूसरी ओर, ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली ने भारतीयों में अपनी संस्कृति के प्रति हीनता की भावना उत्पन्न की, यूरोप के ब्रिटिश प्रशासकों और शिक्षाविदों ने भारत में संपूर्ण शिक्षा प्रणाली को निर्धारित और नियंत्रित किया, पश्चिमी शैक्षिक दर्शन से प्रभावित विद्वानों का मानना है कि ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली ने देश में राजनीतिक और सामाजिक जागरूकता की शुरुआत की, इस जागरूकता ने राष्ट्र के लिए सांस्कृतिक और साहित्यिक चेतना को विकसित किया, लेकिन ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली का दोहरा उद्देश्य था– इसने औपनिवेशिक महाशक्ति, यानी ब्रिटिश शासन की नींव को मजबूत किया और ईसाई धर्म के धार्मिक और दार्शनिक सिद्धांतों को मजबूत आधार प्रदान किया। भारतीय विद्वानों ने शिक्षा के ब्रिटिश दर्शन की आलोचना की है और इसे राष्ट्रीय हित के विपरीत माना है।

उपसंहारः– भारतीय शैक्षिक दर्शन बौद्धिक और संवाद के लिए एक प्रभावी आधार प्रदान करता है भारत के संदर्भ में शैक्षिक दर्शन अभ्यास की समझ को और गहरा कर सकता है। भारत की शिक्षा प्रणाली शिक्षार्थी की रुचि को संबोधित करने और शिक्षार्थी और उन शैक्षिक मूल्यों के लिए प्रासंगिक होने में असमर्थ है

जिनकी उसे तेजी से बदलती दुनिया में आवश्यकता है। भारतीय शैक्षिक दर्शन के विचारों को समझने और वर्तमान में उनकी प्रासंगिकता के लिए उनकी शैक्षिक पृष्ठभूमि की फिर से जांच करने का यह एक महत्वपूर्ण समय है। आज एक ऐसी शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता है जो न केवल शिक्षार्थी की आत्माओं को ज्ञान से पोषित करे बल्कि दूसरों के लिए सहानुभूति की भावना उत्पन्न करने को भी महत्व दे। इसके अतिरिक्त, यह छात्रों को आत्म–सुधार और व्यक्तिगत पूर्ति की ओर बढ़ने में मदद करने की आवश्यकता को केन्द्रित करे, इसी संदर्भ में विश्वविद्यालय को बौद्धिक संवादों के लिए आवश्यक परिप्रेक्ष्य प्रदान करने के लिए भारतीय शैक्षिक दार्शनिकों के शैक्षिक सिद्धांत और व्यवहार की गहरी समझ रखने की आवश्यकता है। हमारे शैक्षिक दर्शन की स्थिरता और अर्थपूर्ण सार्थकता को बढ़ावा देने के लिए गुणवत्ता, स्पष्टता और कठोरता का भी अभाव है। शैक्षिक दर्शन के क्षेत्र में विद्वानों के शोध के साथ–साथ भारतीय शैक्षिक अवसरों के प्रभावी आधार परिप्रेक्ष्य की भी कमी है और शिक्षा के दार्शनिकों के बीच संवादों की स्पष्ट स्थिति भी नही है, जो इसके विकास के लिए हानिकारक साबित हुई है। विशेष रूप से, इस अंतर ने आज की शिक्षा को प्रासंगिक, समकालीन और हमारे स्थानीय संदर्भों में निहित बनाने में विफलता का कारण बना है। अध्ययन का निहितार्थ यह शोध पत्र वर्तमान शिक्षा प्रणाली एवं भारतीय शिक्षा के विभिन्न कालखंडों में प्रचलित शैक्षणिक दर्शन पर लक्षित है। वर्तमान शिक्षा न केवल आध्यात्मिक मूल्यों की उपेक्षा करती है बल्कि मानव के लिए पर्याप्त प्रशिक्षण प्रदान करने में भी विफल रही है। छात्रों पर अंधाधुन्ध जानकारी का ढेर लगाया जाता है, यह सोचने की प्रक्रिया को उत्तेजित करने में विफल रहती है। भारतीय शैक्षिक दर्शन केवल कक्षाओं में पढ़ाए जाते हैं, लेकिन उन्हें छात्रों तक नहीं पहुँचाया जाता है; इसलिए, मानवता, नैतिकता और सहिष्णुता जैसे मूल्यों की स्थापना, आशाजनक दार्शनिक सिद्धांतों के रूप में सरकारी दस्तावेजों में अधूरे वादों के साथ बंद हो गई है। इस मोड़ पर, इन शैक्षिक दार्शनिक ढांचे के बुनियादी सिद्धांतों को बुनना महत्वपूर्ण है। इन सभी दार्शनिक समानताओं को ध्यान में रखते हुए, हमें एक ऐसी शिक्षा प्रणाली के लिए प्रयास करना है, जो समानता, धर्मनिरपेक्षता और ज्ञान की प्रधानता स्थापित करने में प्रभावी हो। आज राज्य के नागरिकों के बीच की खाई को पाटने के लिए ग्रामीण समाज के साथ जुड़ने की आवश्यकता है। यह शोध पत्र एक राष्ट्रीय शैक्षिक ढांचा तैयार करने की आवश्यकता का प्रस्ताव करता है जो शैक्षिक दर्शन के प्रति एक एकीकृत दृष्टिकोण को विकसित और प्रोत्साहित करें, भारतीय शिक्षा प्रणाली की जिम्मेदारी है कि वह भावी शिक्षार्थियों को संस्कृति और परंपरा के मूल्य को समझने के लिए तैयार करे।

संदर्भ ग्रन्थ सूचीः–

- कुमारा, एस० के० (2011). शिक्षा दर्शन का अर्थ और कार्य, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ सोशल एंड इकोनॉमिक रिसर्च।
- ग्रिफिथ्स, एम० (2014). शैक्षिक नीति निर्माण के लिए शिक्षा के दर्शन की प्रासंगिकता का पुनर्विचार, पेरुः इंकफेदर्स पब्लिशिंग कंपनी।
- चक्रवर्ती, एम० (1995). शिक्षा दर्शन की अवधारणा, रीवाः अग्रणी प्रकाशन कंपनी।
- डुपुइस, ए० एम० और गॉर्डन, आर० एल० (2010). ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में शिक्षा का दर्शन, अमेरिकाः यूनिवर्सिटी प्रेस ऑफ अमेरिका।
- बनर्जी, ए० के० और माही, एम० (1984). भारतीय शिक्षा प्रणाली, नई दिल्लीः सूर्योदय प्रकाशन।
- भट्टाचार्य, एस० (2014). भारतीय शिक्षा दर्शन की प्रासंगिकता–एक वैचारिक विश्लेषण, ओ०एस०आर० जर्नल ऑफ ह्यूमैनिटीज एंड सोशल साइंस।
- भाटिया, के० (1992). शिक्षा के दार्शनिक और समाजशास्त्रीय आधार, नई दिल्लीः अनुराधा प्रकाशन।

- राव, अनुपमा (2012). जेंडर एंड एजुकेशन, नई दिल्लीः सीरीज इश्यूज इन कंटेम्परेरी फेमिनिज्म।
- शेषाद्रि, सी० (2008). ज्ञान के क्षेत्र के रूप में शिक्षा दर्शन, नई दिल्लीः राष्ट्रीय शैक्षिक योजना और प्रशासन विश्वविद्यालय।
- शर्मा, जी० आर० (2003). समकालीन भारतीय शिक्षा दर्शन एक मूल्यांकन, प्रयागराजः अटलांटिक प्रकाशन।
- सहान, एच० और टेरज़ी, ए० आर० (2016). भावी शिक्षकों के शैक्षिक दर्शन और उनके शिक्षण–अधिगम दृष्टिकोणों के बीच संबंधों का विश्लेषण, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च एंड डेवलपमेंट।
- हेडन, एम० जे० (2021). शिक्षा दर्शन पत्रिकाओं का एक अनुभवजन्य अध्ययन, नई दिल्लीः नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इंडिया।
- त्रिपाठी, आर० (2018). शैक्षिक दर्शन और सिद्धांत, दिल्लीः मनोहर पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटर्स कंपनी।

****

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

साध्वी महिलाओं का जीवनः आध्यात्मिक साधना, सामाजिक योगदान और चुनौतियाँ

कृतिका सिंह

शोध अध्येत्री, समाजशास्त्र विभाग
जगतपुर पी0जी0 कॉलेज, जगतपुर, वाराणसी (उ.प्र.)

सारांश

भारतीय संस्कृति और परंपरा में आध्यात्मिकता का एक विशेष स्थान है, और इसके अभिन्न अंग के रूप में साधु–संतों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। पुरुष संतों के समान, साध्वी महिलाएँ भारतीय समाज में आध्यात्मिक चेतना, नैतिकता और सामाजिक सेवा का प्रसार करने में महत्वपूर्ण योगदान देती रही हैं। ''साध्वी'' शब्द संस्कृत के ''साधु'' से लिया गया है, जिसका अर्थ है ''वह जो साधना में लीन है''। साध्वी महिलाएँ सांसारिक मोह–माया से विमुख होकर आध्यात्मिक उन्नति के पथ पर अग्रसर होती हैं और समाज में धार्मिक, नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों को सुदृढ़ करने में सहायक बनती हैं।साध्वी जीवन अपनाने वाली महिलाओं के लिए सुरक्षा और सामाजिक दृिष्टकोण हमेशा से एक महत्वपूर्ण विषय रहा है। जब कोई महिला सांसारिक बंधनों को छोड़कर संन्यास या आध्यात्मिक जीवन अपनाती थी, तो उसे कई तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ता था। ये चुनौतियाँ केवल बाहरी सुरक्षा तक सीमित नहीं थीं, बल्कि समाज की सोच, पारिवारिक दबाव और सामाजिक स्वीकृति से जुड़ी थीं। प्राचीन काल में, जब कोई महिला अकेले यात्रा करती थी या एकांत में साधना करती थी, तो उसे कई प्रकार के जोखिमों का सामना करना पड़ता था। जंगलों में रहने, पहाड़ों में ध्यान करने और दूरस्थ स्थानों पर जाकर धर्म का प्रचार करने के दौरान उन्हें अपनी सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए कई उपाय अपनाने पड़ते थे।कई साध्वी महिलाएँ अकेले यात्रा करने के बजाय समूह बनाकर आश्रमों या धार्मिक संस्थानों के साथ जुड़कर जीवन व्यतीत करती थीं।साध्वी महिलाओं का जीवन त्याग, तपस्या और आत्म–अनुशासन का उदाहरण प्रस्तुत करता है। वे आध्यात्मिक साधना के माध्यम से स्वयं के आत्मिक उत्थान के साथ–साथ समाज को एक नई दिशा देने का कार्य करती हैं। इतिहास के विभिन्न कालखंडों में हमें ऐसी कई साध्वी महिलाओं के उदाहरण मिलते हैं जिन्होंने समाज में बदलाव लाने का प्रयास किया। प्राचीन काल में मैत्रेयी और गार्गी जैसी विदुषियों से लेकर मध्यकालीन संत मीराबाई और अक्का महादेवी तक, और आधुनिक युग में साध्वी ऋतंभरा, माता अमृतानंदमयी तथा अन्य कई साध्वियों ने समाज में जागरूकता फैलाने का कार्य किया है।

प्रस्तावना

प्राचीन काल से भारतीय परंपरा में महिलाओं ने आध्यात्मिक जीवन को अपनाया और कठिन तपस्या, ध्यान, योग और भक्ति के माध्यम से आत्मज्ञान प्राप्त किया। उन्होंने सांसारिक बंधनों को छोड़कर, आत्मा की मुक्ति के लिए जीवन समर्पित किया।साध्वी महिलाएँ अपने आत्म–संयम, ध्यान, योग और सेवा के द्वारा केवल आत्मोद्धार नहीं करतीं, बल्कि समाज को धर्म, शांति और प्रेम का संदेश देती हैं। उनका जीवन त्याग, समर्पण और आत्मज्ञान की मिसाल रहा है, जो आज लाखों लोगों को प्रेरित करता है।देखा जाए तो भारतीय संस्कृति में सन्यास और ब्रह्मचर्य का बड़ा महत्त्व हैं जहाँ पर साध्वी महिलाओं ने आत्मज्ञान और ईश्वर–प्राप्ति के लिए संन्यास और ब्रह्मचर्य को अपनाया। वे सांसारिक बंधनों से मुक्त होकर ध्यान, योग, तपस्या और भक्ति में लीन रही। उनका जीवन संयम, त्याग और साधना से भरा होता था, जिससे वे आत्मा की शुद्धि और मोक्ष की प्राप्ति के लिए तत्पर रहती थीं।प्राचीन काल से कई महिलाएँ आत्मज्ञान की खोज में अपने परिवार और सांसारिक सुखों का त्याग कर जंगलों, आश्रमों और गुफाओं में ध्यान करने लगीं। उन्होंने

स्वयं को ब्रह्म की खोज में समर्पित किया और कठिन व्रतों और तपस्याओं को अपनाया। ऋग्वेद में गार्गी और मैत्रेयी जैसी विदुषियों का उल्लेख मिलता है।इन महिलाओं ने आध्यात्मिकता के क्षेत्र में गहरी रुचि दिखाई और अपने ज्ञान, साधना और सेवा के माध्यम से समाज को प्रभावित किया। वैदिक युग में महिलाओं को वेदों और उपनिषदों के अध्ययन की स्वतंत्रता थी, और उन्होंने ऋषियों के साथ मिलकर ब्रह्मज्ञान के गूढ़ रहस्यों पर चर्चा की। गार्गी और मैत्रेयी जैसी विदुषियों ने ज्ञान की महत्ता को सर्वोपरि रखा और अपने चिंतन के माध्यम से समाज को नई दिशा दी। लोपामुद्रा और अपाला जैसी महिलाओं ने वेदों के मंत्रों की रचना में योगदान दिया, जिससे यह स्पष्ट होता है कि आध्यात्मिकता और धार्मिक शिक्षा में उनका महत्वपूर्ण स्थान था।**भारतीय संस्कृति और इतिहास में साध्वी महिलाओं ने आध्यात्मिकता, ज्ञान, भक्ति और समाज सुधार के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।**

साध्वी महिलाओं की आध्यात्मिक साधना :

भारतीय साध्वी महिलाओं के लिए ध्यान, योग और आध्यात्मिक साधनाएँ केवल आत्मिक उन्नति का मार्ग नहीं थीं, बल्कि उनके पूरे जीवन का आधार थीं। योग के माध्यम से वे अपने शरीर और मन पर नियंत्रण रखती थीं। वे अपनी ऊर्जा को ध्यान और भक्ति की ओर मोड़ने के लिए शारीरिक योगाभ्यास और प्राणायाम का सहारा लेती थीं। योग उनके लिए केवल शारीरिक व्यायाम नहीं था, बल्कि एक गहरी साधना थी, जिससे वे अपनी इंद्रियों को नियंत्रित कर आध्यात्मिक ऊँचाइयों तक पहुँच सकें। वे अपनी देह को तपस्या के योग्य बनाने के लिए कठिन आसनों का अभ्यास करती थीं और साधारण भोजन तथा संयमित जीवनशैली अपनाती थीं। उनकी साधना में गहरी तन्मयता होती थी, जिससे वे सांसारिक इच्छाओं से मुक्त होकर केवल आत्मिक शुद्धि की ओर बढ़ सकें।साध्वी महिलाएँ धार्मिक ग्रंथों और शास्त्रों का अध्ययन बहुत ही गहराई और समर्पण के साथ करती थीं। उनका अध्ययन केवल पढ़ने तक सीमित नहीं था, बल्कि वे उसे अपने जीवन में उतारने का प्रयास करती थीं। वे आश्रमों, मठों, गुरुकुलों और एकांत में रहकर अपने ज्ञान को बढ़ाने का प्रयास करती थीं। उनका अध्ययन गुरु के सान्निध्य में होता था, जहाँ वे वेद, उपनिषद, पुराण, गीता, योगशास्त्र, तंत्र, आगम, बौद्ध त्रिपिटक और जैन ग्रंथों का अध्ययन करती थीं। वे श्रवण, मनन और निदिध्यासन की प्रक्रिया के माध्यम से ज्ञान को आत्मसात करती थीं और बार–बार उसका अभ्यास करके उसे अपनी चेतना में स्थापित करने का प्रयास करती थीं।

साध्वी महिलाओं का सामाजिक योगदान :

साध्वी महिलाओं ने समाज में आध्यात्मिकता, शिक्षा, सेवा और जागरूकता का प्रसार किया। वे न केवल धर्म और मोक्ष के पथ पर चलीं, बल्कि समाज को नैतिकता, भक्ति और समानता का संदेश दिया। उन्होंने भक्ति आंदोलन के माध्यम से प्रेम और एकता की भावना को बढ़ाया, समाज सुधार के कार्य किए और गरीबों, असहायों की सेवा की। अपने ज्ञान और शिक्षाओं के माध्यम से महिलाओं को आत्मनिर्भर बनने की प्रेरणा दी और सामाजिक बंधनों को तोड़कर स्वतंत्रता और आत्म–साक्षात्कार की राह दिखाई।साध्वी महिलाओं ने राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आध्यात्मिक नेतृत्व के माध्यम से समाज को आध्यात्मिक चेतना, नैतिकता और सेवा के मार्ग पर अग्रसर किया। उन्होंने केवल अपने आश्रमों या स्थानीय समुदायों तक सीमित न रहकर पूरे देश और विश्व में अपनी शिक्षाओं का प्रचार–प्रसार किया। वे तीर्थ यात्राओं, प्रवचनों, सेवा कार्यों और संगठनों के माध्यम से समाज को नई दिशा देने का कार्य करती थीं।उनका नेतृत्व किसी धर्म, जाति या संप्रदाय तक सीमित नहीं था, बल्कि वे मानवता की सेवा और आत्मज्ञान के प्रसार को ही अपना मुख्य उद्देश्य मानती थीं।

संघमित्राः प्राचीन भारतीय साध्वी परंपरा की अंतरराष्ट्रीय दूत सम्राट अशोक की पुत्री और एक बौद्ध साध्वी थीं, जिन्होंने तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार हेतु श्रीलंका की यात्रा की। वे उन

पहली भारतीय महिलाओं में से थीं जिन्होंने आध्यात्मिकता को सीमाओं से परे ले जाकर उसे वैश्विक स्तर पर प्रतिष्ठित किया। उनके साथ उनके भाई महेन्द्र (महिंद) श्रीलंका गए थे, और दोनों ने मिलकर वहाँ बौद्ध धर्म की आधारशिला रखी। संघमित्रा का जीवन एक ऐसी साध्वी का आदर्श प्रस्तुत करता है जिसने न केवल आत्मिक साधना की, बल्कि बौद्ध धर्म के प्रचार, शिक्षा, संस्कृति और सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने भगवान बुद्ध के दन्त अवशेष (बुद्ध का दाँत) को श्रीलंका पहुँचाया, जो आज कोलंबो के टूथ मंदिर ;ज्मउचसम व िजीम ज्ववजीद्ध में पूज्य है। संघमित्रा की अध्यात्म–यात्रा एक मिशनरी साध्वी के रूप में थी, जो आध्यात्मिकता को केवल ध्यान, मौन या वैराग्य का मार्ग न मानते हुए, उसे समाज और राष्ट्रों के बीच सांस्कृतिक पुल बनाने का माध्यम बनाती है। वे शिक्षा, अहिंसा और करुणा के सिद्धांतों के प्रचार के लिए समर्पित रहीं।

महाप्रजापति गौतमीः बौद्ध साध्वी परंपरा की आदि प्रवर्तक और नारी आध्यात्मिक स्वतंत्रता की प्रथम उद्घोषिका भगवान बुद्ध की माता महामाया की अनुजा और उनकी दत्तक माता थीं। वे न केवल बौद्ध धर्म की प्रथम भिक्षुणी (साध्वी) मानी जाती हैं, बल्कि उन्होंने स्त्रियों के लिए आध्यात्मिक स्वतंत्रता के द्वार खोले। उनका जीवन नारी साध्वी चेतना की वह आदि छवि प्रस्तुत करता है, जिसमें वैराग्य, आत्म–संयम, और मोक्ष की समान अधिकारिता की मांग स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। महाप्रजापति गौतमी ने भगवान बुद्ध से आग्रह किया कि स्त्रियों को संघ में प्रवेश करने की अनुमति दी जाए, ताकि वे भिक्षुणी बनकर मोक्ष मार्ग पर अग्रसर हो सकें। प्रारंभ में बुद्ध ने संकोच किया, परंतु गौतमी की दृढ़ साधना, समर्पण और अनुयायिनी स्त्रियों की तीव्र आस्था को देखकर उन्होंने भिक्षुणी संघ की स्थापना की। इस प्रकार, गौतमी ने केवल स्वयं मोक्ष का मार्ग नहीं अपनाया, बल्कि समस्त स्त्री जाति के लिए धर्म और साधना के क्षेत्र में समान अधिकार का मार्ग प्रशस्त किया।

बहुत से साध्वी महिलाओं ने धार्मिक प्रवचनों और जनजागृति अभियानों के माध्यम से समाज को आध्यात्मिकता, नैतिकता और सेवा के महत्व से परिचित कराया। वे अपने विचारों को केवल मंदिरों और आश्रमों तक सीमित नहीं रखती थीं, बल्कि गाँव–गाँव, नगरों और तीर्थ स्थलों पर जाकर लोगों को धर्म और सदाचार का सही अर्थ समझाने का प्रयास करती थीं। वे धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन करती थीं और फिर अपने अनुभवों और प्रवचनों के माध्यम से लोगों को यह सिखाती हैं।

मीरा बाई (1498–1547): भक्ति युग की एक महान संतकवयित्री और आध्यात्मिक साध्वी के रूप में जानी जाती हैं। वे राजपूत कुल में जन्मी थीं, किंतु सांसारिक वैभव को त्यागकर उन्होंने श्रीकृष्ण को अपना सर्वस्व मान लिया और भक्ति मार्ग को जीवन का परम उद्देश्य बना लिया। उनका जीवन एक साध्वी महिला के उस स्वरूप को दर्शाता है जो सामाजिक बंधनों से ऊपर उठकर ईश्वर प्रेम, आत्मबल और नारी आत्मनिर्भरता की मिसाल बनती है। मीरा बाई ने धर्म और अध्यात्म को केवल पूजा–पाठ या वैराग्य तक सीमित न रखकर, उसे काव्य, संगीत और लोकचेतना से जोड़ा। उनके पद आज भक्ति साहित्य का अमूल्य हिस्सा हैं, जो आध्यात्मिक अनुरक्ति, समाज से विरोध के साहस, और आत्मा की स्वतंत्रता को अभिव्यक्त करते हैं। उन्होंने पुरुषप्रधान समाज में स्त्री के आध्यात्मिक स्वातंर्त्य की घोषणा करते हुए यह सिद्ध किया कि स्त्री अपने आत्मबल के द्वारा ईश्वर तक पहुँच सकती है।

अक्का महादेवी (12वीं शताब्दी): वैराग्य, भक्ति और साध्वी चेतना की निर्भीक प्रतीक दक्षिण भारत की महान भक्त कवयित्री और वीरशैव परंपरा की प्रमुख साध्वी मानी जाती हैं। वे कर्नाटक की लिंगायत भक्ति आंदोलन की एक क्रांतिकारी महिला संत थीं, जिन्होंने सांसारिक बंधनों और सामाजिक रूढ़ियों को त्यागकर ईश्वर को अपना पति, प्रेमी और परम लक्ष्य माना। उनका जीवन उस साध्वी चेतना का आदर्श रूप है, जिसमें भक्ति, वैराग्य और आध्यात्मिक स्वतंत्रता का पूर्ण समन्वय मिलता है। अक्का महादेवी ने पारंपरिक विवाह को

अस्वीकार कर केवल भगवान चन्नमल्लिकार्जुन (शिव) को ही अपना सर्वस्व माना। वे वस्त्र–त्याग कर नारी के शरीर को सामाजिक पहचान से मुक्त करते हुए अध्यात्म की सर्वोच्चता का प्रतीक बनीं। उन्होंने वचन शैली में रचे अपने पदों में प्रेम, आत्मा की तड़प और ईश्वर के प्रति समर्पण को अद्‌भुत काव्यात्मक अभिव्यक्ति दी। उनकी कविताओं में स्त्री–विमर्श, आत्मबल और भक्ति की गहनता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

आधुनिक युग में प्रसिद्ध साध्वी :

आधुनिक युग में साध्वी महिलाओं ने आध्यात्मिकता, समाज सेवा, शिक्षा, नारी सशक्तिकरण और पर्यावरण संरक्षण जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में अद्वितीय योगदान दिया है। इन साध्वी महिलाओं ने केवल आध्यात्मिक साधना तक ही अपने जीवन को सीमित नहीं रखा, इन्होंने योग, ध्यान, प्रवचन और जनजागृति अभियानों के माध्यम से लोगों को जागरूक किया और समाज सुधार की दिशा में आगे बढ़ाया। इन साध्वी महिलाओं ने धर्म और अध्यात्म को केवल पूजा–पाठ और व्यक्तिगत साधना तक सीमित न रखकर उसे समाज सुधार और मानवीय सेवा का एक माध्यम बनाया।

भगिनी निवेदिता (1867–1911) : अमेरिका में जन्मी भगिनी निवेदिता ने स्वामी विवेकानंद से प्रेरणा लेकर भारतीय संस्कृति, शिक्षा और आध्यात्मिकता के प्रचार में अपना जीवन समर्पित किया। उन्होंने भारत में महिलाओं की शिक्षा और सशक्तिकरण के लिए कई विद्यालय स्थापित किए। वे पश्चिमी देशों में भारतीय वेदांत और अध्यात्म का प्रचार करने वाली पहली पंथी की महिलाओं में से एक थीं।

आनंदमयी माँ (1896–1982): आधुनिक युग की आध्यात्मिक साध्वियों में आनंदमयी माँ का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनका जीवन अध्यात्म, सेवा और समाज सुधार की एक जीवंत मिसाल रहा। उनका जन्म 1896 में तत्कालीन पूर्वी बंगाल (वर्तमान बांग्लादेश) में हुआ था। बचपन से ही उनके जीवन में अलौकिकता और आध्यात्मिक चेतना की झलक दिखने लगी थी। आनंदमयी माँ ने अपने आध्यात्मिक अनुभवों और प्रवचनों के माध्यम से न केवल भारत, बल्कि विदेशों में आध्यात्मिक चेतना का प्रसार किया। वे किसी एक धर्म या संप्रदाय तक सीमित नहीं रहीं, बल्कि मानवता को एक परिवार मानते हुए सभी के कल्याण की बात करती थीं। उनका जीवन ब्रह्मचर्य, तप, ध्यान और आत्म–नियंत्रण का आदर्श रहा। उन्होंने लाखों लोगों को योग, ध्यान और आत्मबोध के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया। सामाजिक दृष्टि से आनंदमयी माँ ने महिलाओं को आध्यात्मिक उन्नति का अधिकार दिलाने, शिक्षा का प्रचार करने तथा सेवा और सहिष्णुता की भावना को फैलाने में योगदान दिया। उनके आश्रमों में शिक्षा, सेवा और साधना को समान महत्व दिया जाता था। उन्होंने यह सिद्ध किया कि साध्वी होना केवल संन्यास या वैराग्य का नाम नहीं, बल्कि सक्रिय समाज सेवा और जनकल्याण की दिशा में कार्य करने का माध्यम है। इस प्रकार, आनंदमयी माँ आधुनिक युग की उन साध्वी महिलाओं में से हैं, जिन्होंने अध्यात्म को समाज सेवा और मानव कल्याण से जोड़ते हुए आध्यात्मिक जीवन की नई परिभाषा गढ़ी।

माता अमृतानंदमयी (अम्मा) (जन्मः 1953):करुणा और सेवा की प्रतीक साध्वी जिन्हें विश्वभर में ''अम्मा'' के नाम से जाना जाता है, आधुनिक युग की अत्यंत प्रभावशाली साध्वी महिलाओं में से एक हैं। उनका जन्म 1953 में केरल के एक साधारण मछुआरे परिवार में हुआ था। बचपन से ही उनमें असाधारण करुणा, ध्यान, और ईश्वरभक्ति की झलक दिखने लगी थी। अम्मा ने अध्यात्म को केवल व्यक्तिगत मुक्ति तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उन्होंने इसे समाज सेवा, नारी सशक्तिकरण, शिक्षा और पर्यावरण संरक्षण जैसे क्षेत्रों से जोड़ा। अम्मा का प्रमुख संदेश है – "प्रेम ही मेरा धर्म है"। उन्होंने अपने लाखों अनुयायियों को न केवल आध्यात्मिक ज्ञान दिया, बल्कि सेवा, सहिष्णुता, और मानवीय एकता का मार्ग दिखाया। अम्मा की सबसे प्रसिद्ध विशेषता उनका ''दर्शन'' है, जिसमें वे हजारों लोगों को व्यक्तिगत रूप से गले लगाकर सांत्वना देती हैं। यह करुणा

और आत्मीयता का प्रतीक बन चुका है। अम्मा द्वारा स्थापित Mata Amritanandamayi Math के माध्यम से उन्होंने आपदा राहत, मुफ्त चिकित्सा, गरीबों के लिए आवास निर्माण, शिक्षा संस्थानों की स्थापना, महिलाओं के लिए स्वरोजगार योजना, और स्वच्छता अभियानों जैसे कार्य किए हैं। यह सब इस बात का प्रमाण है कि एक साध्वी केवल ध्यान और प्रवचन तक सीमित नहीं होती, बल्कि समाज को बदलने की शक्ति भी रखती है[1]।इस प्रकार, अम्मा ने आधुनिक युग में आध्यात्मिकता को करुणा, सेवा और सामाजिक परिवर्तन के साथ जोड़ा, और एक जीवित उदाहरण बनकर यह दिखाया कि अध्यात्म मानवता की सेवा का सबसे सशक्त माध्यम हो सकता है।

साध्वी ऋतंभरा (जन्मः 1964): आधुनिक युग की तेजस्विनी साध्वी जिन्हें उनके प्रभावशाली वक्तृत्व और सामाजिक कार्यों के लिए जाना जाता है, आधुनिक युग की उन साध्वी महिलाओं में से हैं जिन्होंने धर्म, संस्कृति और समाज सेवा के क्षेत्र में प्रभावशाली भूमिका निभाई है। उनका जन्म 1964 में उत्तर प्रदेश के एक पारंपरिक परिवार में हुआ था। प्रारंभिक जीवन में ही उन्होंने वैराग्य और साधना का मार्ग अपनाया और हिन्दू संस्कृति के प्रचार–प्रसार के लिए कार्य आरंभ किया। ऋतंभरा जी का प्रमुख योगदान उनके जोशीले और प्रेरणादायक प्रवचनों के माध्यम से देखने को मिलता है, जिनमें वे सांस्कृतिक चेतना, राष्ट्रीय एकता, नारी सशक्तिकरण और सनातन मूल्यों की स्थापना पर बल देती हैं। उन्होंने अनेक मंचों से युवाओं को प्रेरित किया कि वे भारतीय संस्कृति और मूल्यों की रक्षा करें और चरित्र निर्माण की दिशा में आगे बढ़ें। वे परमार्थ निकेतन और विभिन्न गौशालाओं, अनाथाश्रमों और महिला कल्याण केंद्रों के माध्यम से सेवा कार्यों में सक्रिय रही हैं। उन्होंने "वेद मंदिर" नामक संस्था की स्थापना की, जहाँ शिक्षा, आत्मनिर्भरता और भारतीय संस्कृति के संरक्षण पर बल दिया जाता है। विशेषकर महिला सशक्तिकरण के लिए उन्होंने शिक्षा, सुरक्षा और आत्मनिर्भरता को केंद्र में रखकर कई योजनाएँ शुरू कीं। साध्वी ऋतंभरा ने यह सिद्ध किया कि एक साध्वी केवल साधना और प्रवचन तक सीमित नहीं, बल्कि सामाजिक जागरण, राष्ट्र निर्माण और सेवा के कार्यों में अग्रणी भूमिका निभा सकती है।

ब्रह्मकुमारी शिवानी (जन्मः 1972): आधुनिक युग की एक प्रेरणास्रोत साध्वी जिन्हें प्रायः ''शिवानी दीदी'' के नाम से जाना जाता है, आधुनिक युग की उन प्रसिद्ध साध्वी महिलाओं में शामिल हैं जिन्होंने अध्यात्म को तकनीक और विज्ञान से जोड़ते हुए जन–जन तक पहुंचाया। उनका जन्म 1972 में पुणे, भारत में हुआ था। उन्होंने इलेक्ट्रॉनिक्स इंजीनियरिंग में शिक्षा प्राप्त की और बाद में ब्रह्मकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय से जुड़कर एक आध्यात्मिक शिक्षिका के रूप में कार्य करना प्रारंभ किया। शिवानी दीदी का प्रमुख योगदान यह रहा है कि उन्होंने आध्यात्मिकता को जटिल शब्दों और विधियों से निकालकर सरल, व्यवहारिक और दैनिक जीवन से जुड़ा बनाया। उनके टीवी कार्यक्रम "Awakening with Brahma Kumaris" के माध्यम से लाखों लोग आत्म–ज्ञान, सकारात्मक सोच, भावनात्मक बुद्धिमत्ता और तनाव प्रबंधन जैसे विषयों पर मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं। उन्होंने आध्यात्मिकता को केवल साधना या प्रवचन तक सीमित न रखकर, उसे जीवन जीने की कला बना दिया। वे नारी सशक्तिकरण की पक्षधर हैं और समाज में महिलाओं की भूमिका को आध्यात्मिक दृष्टकोण से सशक्त बनाने का कार्य कर रही हैं। उनका ध्यान विशेष रूप से मानसिक स्वास्थ्य, संबंधों की गुणवत्ता, और आत्म–सम्मान को बढ़ाने पर रहा है। ब्रह्मकुमारी शिवानी ने दिखाया कि एक साध्वी तकनीक, मीडिया और संवाद के माध्यम से समाज को जागरूक कर सकती है। उन्होंने अध्यात्म को आधुनिक जीवनशैली के अनुरूप ढालते हुए जन–जागरण का नया मार्ग प्रशस्त किया।

साध्वी जीवन की प्रमुख चुनौतियाँ :

साध्वी जीवन का मार्ग कठिनाइयों और चुनौतियों से भरा होता है। यह केवल भक्ति, ध्यान और सेवा का मार्ग नहीं है, बल्कि इसमें मानसिक, सामाजिक, आर्थिक और शारीरिक संघर्ष भी शामिल होते हैं। साध्वी बनने का निर्णय स्वयं में एक बड़ा त्याग होता है, जिसमें व्यक्ति सांसारिक सुख–सुविधाओं, परिवारिक संबंधों और व्यक्तिगत इच्छाओं को त्यागकर आत्मज्ञान और समाज सेवा के लिए समर्पित हो जाती हैं।परिवार में माता–पिता, भाई–बहन, पति या अन्य रिश्तेदारों को यह स्वीकार करना कठिन होता है कि उनकी बेटी या बहन सांसारिक जीवन छोड़कर संन्यास मार्ग पर चल पड़े। पारंपरिक समाज में महिलाओं को गृहस्थ धर्म निभाने, परिवार को सँभालने और संतानों की देखभाल करने की भूमिका में देखा जाता है। यदि कोई महिला संन्यास का चयन करती है, तो परिवार के लोग इसे कर्तव्यों से पलायन के रूप में देख सकते हैं।समाज में संन्यास को एक विशिष्ट जीवनशैली के रूप में देखा जाता है, लेकिन जब कोई महिला इस राह पर चलने का निर्णय लेती है, तो कई सवाल खड़े किए जाते हैं। समाज में यह धारणा बनी हुई है कि महिलाओं को पारिवारिक और सामाजिक दायित्वों का निर्वहन करना चाहिए, जबकि परंपरागत समाज में यह मान्यता रही है कि संन्यास पुरुषों के लिए अधिक उपयुक्त है, जबकि महिलाओं को परिवार और समाज की सेवा करनी चाहिए। इस सोच के कारण साध्वी बनने वाली महिलाओं को कई रूढ़ियों का सामना करना पड़ता है। वहीं भौतिकवाद और आध्यात्मिकता का संघर्ष एक व्यक्ति के भीतर चलने वाला सबसे बड़ा द्वंद्व है। यह केवल साध्वी जीवन अपनाने वालों तक सीमित नहीं रहता यह द्वंद्व विशेष रूप से उन महिलाओं के लिए और गहरा हो जाता है, जो सांसारिक मोह से दूर होकर साध्वी जीवन अपनाने का निर्णय लेती हैं। साध्वी जीवन अपनाने वाली महिलाओं को इस संघर्ष का सबसे अधिक सामना करना पड़ता है। जब कोई महिला सांसारिक बंधनों को छोड़कर संन्यास या आध्यात्मिक जीवन अपनाती थी, तो उसे कई तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ता था। ये चुनौतियाँ केवल बाहरी सुरक्षा तक सीमित नहीं थीं, बल्कि समाज की सोच, पारिवारिक दबाव और सामाजिक स्वीकृति से जुड़ी थीं। प्राचीन काल में, जब कोई महिला अकेले यात्रा करती थी या एकांत में साधना करती थी, तो उसे कई प्रकार के जोखिमों का सामना करना पड़ता था। जंगलों में रहने, पहाड़ों में ध्यान करने और दूरस्थ स्थानों पर जाकर धर्म का प्रचार करने के दौरान उन्हें अपनी सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए कई उपाय अपनाने पड़ते थे।कई साध्वी महिलाएँ अकेले यात्रा करने के बजाय समूह बनाकर आश्रमों या धार्मिक संस्थानों के साथ जुड़कर जीवन व्यतीत करती थीं। प्राचीन काल में कई साध्वियाँ धार्मिक आश्रमों में रहती थीं, जहाँ उनकी सुरक्षा की जिम्मेदारी गुरुकुलों या संत–समाज पर होती थी।

वहीं आज की समकालीन साध्वी महिलाएँ न केवल धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन कर रही हैं, बल्कि आधुनिक विज्ञान, मनोविज्ञान और प्रबंधन जैसी विषयों में रुचि ले रही हैं। वे आध्यात्मिकता को विज्ञान के साथ जोड़कर जीवन में संतुलन बनाने की शिक्षा दे रही हैं। उदाहरण के लिए, ब्रह्मकुमारी शिवानी जीवन प्रबंधन, मानसिक शांति और सकारात्मक सोच पर आधारित सेमिनार आयोजित करती हैं, जो कि लोगों को आध्यात्मिकता के साथ आधुनिक जीवन में संतुलन बनाना सिखाता है।

निष्कर्ष :

साध्वी जीवन केवल एक आध्यात्मिक पथ नहीं है, बल्कि यह समाज सेवा, शिक्षा, नारी सशक्तिकरण और आध्यात्मिक जागरूकता का एक महत्वपूर्ण माध्यम बन चुका है। यह परंपरा केवल सन्यास और तपस्या तक सीमित नहीं रही, बल्कि समय के साथ इसमें नए आयाम जुड़े, जिससे यह समाज सुधार काएक प्रभावशाली साधन बन गया।प्राचीन भारत में साध्वी महिलाओं की एक विशिष्ट और सशक्त परंपरा रही है। गार्गी और मैत्रेयी जैसी विदुषी स्त्रियों ने केवल धार्मिक ज्ञान नहीं अर्जित किया, बल्कि उन्होंने समाज में स्त्रियों के लिए शिक्षा और आध्यात्मिक चेतना का मार्ग प्रशस्त किया। गार्गी ने याज्ञवल्क्य जैसे महान ऋषि के साथ

शास्त्रार्थ किया और ब्रह्मविद्या की जटिल गूढ़ताओं को समझाया। इतिहास में कई साध्वी महिलाओं को सामाजिक अस्वीकृति का सामना करना पड़ा, लेकिन उन्होंने अपनी दृढ़ता और आत्मबल से सभी चुनौतियों को पार किया। साध्वी महिलाएँ न केवल आध्यात्मिकता में बल्कि समाज के अन्य क्षेत्रों में अपनी पहचान बना रही हैं, जिससे यह साबित होता है कि आध्यात्मिकता और नारी सशक्तिकरण एक साथ चल सकते हैं।

अंततः, साध्वी जीवन केवल सन्यास या आत्मज्ञान प्राप्त करने का साधन नहीं, बल्कि समाज को एक नई दिशा देने, नैतिक मूल्यों को पुनर्स्थापित करने और आध्यात्मिक चेतना को जागृत करने का एक प्रभावशाली मार्ग बन चुका है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

- उपनिषद, चौखंबा संस्कृत प्रतिष्ठान, वाराणसी, पृ.सं. 85–130.
- .संत मीराबाई की पदावलियाँ, राजस्थानी साहित्य प्रकाशन, पृ.सं. 55–90.
- अक्का महादेवी के वचन, कन्नड़ साहित्य अकादमी, पृ.सं. 75–120.
- ''माता अमृतानंदमयीः ए बायोग्राफी'', स्वामी अमृतास्वरूपानंद, अमृता पब्लिकेशन, पृ.सं. 45–95.
- ''साध्वी ऋतंभराः जीवन और विचार'', विभिन्न लेखक, भारतीय आध्यात्मिक प्रकाशन, पृ.सं. 85–130.
- वीमेन इन हिंदुइज्म'', पिनाकी साहा, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ.सं. 65–110.
- हिस्ट्री ऑफ विमेन इन इंडिया'', रोमिला थापर, पृ.सं. 200–275.
- वीमेन एंड सोशल रिफॉर्म इन इंडिया'', सुमित सरकार और तनिका सरकार, पृ.सं. 180–250.
- नारीवादी चिंतन और भारतीय समाज'', कृष्णा शर्मा, पृ.सं. 125–175.
- हिंदू संत परंपरा में महिलाओं की भूमिका, विद्या मिश्रा, पृ.सं. 80–135.
- ब्रह्मकुमारी आधिकारिक वेबसाइटः www-brahmakumaris-org
- माता अमृतानंदमयी मिशनः www-amrita-org

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

परिवार नियोजन एवं प्रजनन स्वास्थ्य : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

अमृता अग्रवाल
शोध छात्रा, समाजशास्त्र विभाग
जगतपुर पीजी कॉलेज, जगतपुर वाराणसी

प्रोफेसर ज्योति मिश्रा
समाजशास्त्र विभाग
जगतपुर पीजी कॉलेज, जगतपुर वाराणसी

सारांश

किसी देश के निर्माण में वहां की जनसंख्या की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रत्येक देश का उत्पादन स्तर ,आर्थिक विकास की दर, राष्ट्रीय आय, प्रति व्यक्ति आय, रहन–सहन का स्तर आदि सभी उस देश के जनसंख्या के आकार ,गठन एवं वितरण पर निर्भर करता है। जैसा कि हम सभी जानते हैं भारत की जनसंख्या वर्तमान में चीन को भी पीछे छोड़ रही हैं। सन् 1981 जनगणना के आंकड़े और वर्तमान के जनगणना आंकड़े यह दर्शाते हैं कि जनसंख्या वृद्धि हो रही है। इसे रोकने के लिए सरकार ने सन 1951 में ही परिवार नियोजन कार्यक्रम की शुरुआत की थी । जिसमें समय–समय पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत बदलाव किए गए हैं लगातार नीति निर्माता और योजनाकारों ने परिवार नियोजन कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन के लिए सहयोग किया है।

*परिवार नियोजन कार्यक्रम केवल बच्चों के जन्म को रोकने तक सीमित नहीं है बल्कि योजनाकारों और नीति निर्माताओ का ध्यान महिला एवं बाल स्वास्थ्य से भी जुड़ा हुआ है जिस संदर्भ में **आरसीएच कार्यक्रम** को प्रारंभ किया गया कई राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन संपन्न हुए हैं जिनमें काहिरा में हुए अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन के बाद प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य, प्रजनन अधिकार को भारत में बढ़ावा दिया गया और महिलाओं को अपने प्रजनन स्वास्थ्य के प्रति जागरूक किया गया ।*

इस शोध पत्र का विषय है परिवार नियोजन एवं प्रजनन स्वास्थ्य। यह शोध पत्र परिवार नियोजन से प्रजनन स्वास्थ्य के नए परिप्रेक्ष्य की विस्तृत व्याख्या करता है। महिला के प्रजनन अधिकार की ओर भी ध्यान केंद्रित करता है।

मुख्य शब्द - परिवार नियोजन कार्यक्रम, प्रजनन स्वास्थ्य एवं प्रजनन अधिकार

प्रस्तावना

किसी भी देश में जनसंख्या वृद्धि वहां के संसाधनों के विकास से अधिक होती है तो जनाधिक्य होने लगता है। यह जनसंख्या और संसाधनों के बीच असंतुलन की अवस्था है। जनसंख्या किसी देश की उत्पादन शक्ति के रूप में विकास का आधारभूत घटक मानी जाती है। जनसंख्या ही देश का सबसे मूल्यवान संसाधन है इसे मानव संसाधन का नाम दिया जाता है। जनसंख्या को केंद्र में रखकर इसकी आवश्यकता तथा अपेक्षा के अनुरूप ही विकास से संबंधित नीतियां और कार्यक्रम बनाए जाते हैं। संसाधनों का संरक्षण एवं अवशोषण दोनों जनसंख्या पर ही निर्भर है। जनसंख्या के साथ संसाधनों के संतुलन की स्थिति विकास एवं खुशहाली का मार्ग प्रशस्त करती है इसके विपरीत बढ़ती जनसंख्या एवं घटते संसाधनों के स्थिति

विकास के मार्ग में अवरोध खड़ा करती है तथा जीवन को कष्टपूर्ण बनाती है। जनसंख्या किसी देश की शक्ति भी बन सकती है और उसकी दुर्बलता भी बन सकती है।

भारत की जनसंख्या वृद्धि के संदर्भ में **दत्त एवं सुंदरम नामक भारतीय अर्थशास्त्री लिखते हैं** भारत अति जनसंख्या वाला देश है या नहीं यह विवाद अनावश्यक है यदि जनसंख्या आवश्यकता से अधिक हो तो अतिरिक्त जनसंख्या का संघार नहीं किया जा सकता। आवश्यकता इस बात की है कि एक ओर तो अधिक जनसंख्या का निर्वाह करने के लिए अपनी उत्पादन क्षमता बढ़ानी होगी और दूसरी ओर प्रजनन कम करना होगा ताकि जनसंख्या वृद्धि दर को कम किया जा सके।

जनसंख्या की समस्या को देखते हुए स्वतंत्रता पूर्व ही परिवार नियोजन की आवश्यकता को महसूस किया गया। 1930 में मैसूर सरकार ने बेंगलुरु तथा 1932 में मद्रास सरकार ने प्रेसीडेंसी में संतति निग्रह चिकित्सालयो की स्थापना की । 1935 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा परिवार नियोजन को विकास कार्यक्रमों का अंग बनाने की सलाह दी गई 1943 में सरकार के स्वास्थ्य सर्वेक्षण एवं विकास परिषद ने मातृत्व रक्षा हेतु सरकारी अस्पतालों में संतति निग्रह वार्ड खोलने के संस्तुति प्रदान की। 1949 में पर भारतीय परिवार नियोजन संघ बना जिसका प्रमुख कार्य देश में परिवार नियोजन का प्रचार प्रसार करना था और 1951 में योजना आयोग में परिवार नियोजन कार्यक्रम के सुझाव देने के लिए विशेष समिति का गठन किया। 1952 में भारत ने पहला परिवार नियोजन कार्यक्रम प्रारम्भ किया जिसमे योजनाकारों, नीतिनिर्माताओं, जनसांख्यिकीयविद के सहयोग से कार्यक्रम चलाया गया। पंचवर्षीय योजनाओ में विभिन्न लक्ष्य और कार्यक्रम चलाये गए जिसमे पहली बार नौवीं योजनाकाल के अंतर्गत प्रजनन और बाल स्वास्थय कार्यक्रम आरम्भ किया गया। 1994 में काहिरा के जनसंख्या और विकास पर अंतरराष्ट्रीय सम्मलेन में स्वीकृत कार्ययोजना के आधार पर ध्यान केंद्रित किया गया।

अध्ययन का उद्देश्य

इस शोध पत्र का उद्देश्य सरकार द्वारा चलाए गए परिवार नियोजन कार्यक्रमों की व्याख्या एवं परिवार नियोजन को एक नए दृष्टिकोण प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य के रूप में जानना और प्रजनन अधिकार का विश्लेषण करना और यह हमारे लिए कितना आवश्यक है यह भी देखना है।

अध्ययन पद्धति

यह शोध पत्र द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है अनेक पुस्तकों ,शोध पत्र पत्रिकाओं ,अन्य प्रकाशनों , विभिन्न वेबसाइटों के माध्यम से डाटा एकत्रित किया गया है विभिन्न डाटा का विश्लेषण करने के उपरांत निष्कर्ष प्राप्त किया गया है।

परिवार नियोजन कार्यक्रम

भारत में स्वाधीनता पूर्व से ही जनसंख्या वृद्धि को एक राष्ट्रीय समस्या के रूप में देखा जाने लगा था और जन्म नियंत्रण एवं संतति निग्रह के लिए प्रयास शुरू कर दिए गए थे। सन 1951 में देश के योजना आयोग की ओर से जनसंख्या नीति निर्माण एवं परिवार नियोजन के लिए प्रयास प्रारंभ किए गए तथा बाद में प्रत्येक पंचवर्षीय योजना काल में जनसंख्या नीति से संबंधित कार्यक्रम घोषित किए जाने लगे।

प्रथम पंचवर्षीय योजनाकाल 1951 से 56 के अंतर्गत इस तथ्य को स्वीकार किया कि अत्यधिक तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या अर्थव्यवस्था को प्रभावित कर रही है और यह देश के आर्थिक विकास में अवरोध उत्पन्न कर रही है। इस योजना काल में जनसंख्या से संबंधित विभिन्न पहलुओं के अध्ययन एवं अनुसंधान पर जोर दिया गया ताकि इसकी सहायता से राष्ट्रीय स्तर पर जनसंख्या नीति तैयार की जा सके। विभिन्न परिवार नियोजन अनुभव को संकलित करने के साथ प्रजनन प्रवृत्ति परिवार का आकार आर्थिक सामाजिक

व जनसंख्या संबंधी परिवर्तनों के पारस्परिक प्रभाव तथा मानवीय प्रजननता के चिकित्सा एवं मनोवैज्ञानिक पहलुओं पर शोध की आवश्यकता प्रतिपादित की।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल 1956 से 61 के अंतर्गत जनसंख्या समस्या का तत्कालीन समाधान के लिए प्रशिक्षण केन्द्रो की स्थापना की गई इसमें लगे कार्यकर्ताओं के लिए प्रशिक्षण की सुविधा उपलब्ध कराई गई जिसमें विभिन्न प्रशिक्षण केन्द्रो के माध्यम से उन्हें प्रशिक्षित किया गया।

तृतीय पंचवर्षीय योजनाकाल 1961 से 66 में परिवार नियोजन कार्यक्रम को राष्ट्रीय कार्यक्रम एवं राष्ट्रीय आंदोलन के रूप में अपनाने का निश्चय किया गया। इसका व्यापक प्रचार प्रसार करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया।सरकार की शक्ति जनसंख्या नीति से हटकर परिवार नियोजन कार्यक्रमों पर ही केंद्रित हो गई तथा परिवार नियोजन केदो का कार्य संतति निरोध के लिए सलाह और सेवाएं प्रदान करने तक विस्तृत कर दिया गया।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजनाकाल 1969 से 74 के अंतर्गत परिवार कल्याण कार्यक्रमों को अत्यधिक प्राथमिकता दी गई लक्ष्य निर्धारित कार्यक्रम संचालित किए गए। इस योजनाकाल के अंतर्गत सरकार ने परिवार नियोजन की सभी विधियो को जनता से अवगत कराने के लिए जोर दिया और नसबंदी को प्राथमिकता प्रदान की इसके अंतर्गत स्वास्थ्य मंत्रालय का नाम बदलकर स्वास्थ्य परिवार कल्याण मंत्रालय में परिवर्तित कर दिया गया।

पांचवी पंचवर्षीय योजनाकाल 1974 से 78 में सरकार ने गरीबी दूर करने के लिए जनसंख्या नीति और परिवार नियोजन को आवश्यक माना तथा परिवार नियोजन को स्वास्थ्य कार्यक्रम के साथ जोड़ा गया और लोगों में जागरूकता बढ़ाने के लिए कई उपाय किए गए इस योजनाकाल के अंतर्गत राज्य सरकारों को यह छूट दी गई कि वह अनिवार्य बध्याकारण कानून बना सकती हैं यह करने पर पुरस्कार की व्यवस्था की गई ।

छठी पंचवर्षीय योजनाकाल 1980 से 85 के अंतर्गत परिवार नियोजन के स्थान पर परिवार कल्याण कार्यक्रम शब्द का प्रयोग शुरू हो गया। इसके अंतर्गत कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता प्रदान की गई कई और कुछ लक्ष्य निर्धारित किए गए जिसमें बंध्याकरण को 24.4 मिलियन तक, आईयूडी को 7.9 मिलियन तक, निरोध का प्रयोग 11 मिलियन तक, परिवार नियोजन के अंतर्गत दंपति को 36 मिलियन तक लाने का लक्ष्य रखा गया।

सातवीं पंचवर्षीय योजनाकाल 1985 से 90 में परिवार कल्याण कार्यक्रम मे सुधार कर उसे और प्रभावी बनाने के लिए प्रयास किया गया छठवीं पंचवर्षीय योजना में जन्म दर को 29.1 प्रति हजार वार्षिक वृद्धि दर को 1.66 के स्तर पर लाने का लक्ष्य रखा गया था जिसमें तेजी आई और सातवीं योजना काल में भी यह बनी रही।

आठवीं पंचवर्षीय योजनाकाल 1992 से 97 में सरकार ने जनसंख्या वृद्धि की दर का अपेक्षा के अनुसार कम न होना स्वीकार किया और परिवार कल्याण कार्यक्रम को जन आंदोलन के रूप में ऊपर उठाने पर बल दिया गया। इस योजना काल में बहुत बड़ी धनराशि 65,000 करोड रुपए की व्यवस्था की गई जबकि वास्तविक व्यय 7,294 करोड रुपए था इनमें उन कार्यक्रमों को सूचीबद्ध किया गया जिन्होंने खराब प्रदर्शन किया था।

नौवीं पंचवर्षीय योजनाकाल 1997 से 2002 यह एक महत्वपूर्ण योजनाकाल है जिसके अंतर्गत जनसंख्या समस्या को एक नए परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण किया गया जिसमें परिवार नियोजन को प्रजनन स्वास्थ्य संदर्भ में देखा गया जिसे आरसीएच के नाम से जाना जाता है इसमें कुछ प्रावधान किए गए।

1 स्त्रियों को गर्भधारण करने और बच्चों को जन्म देने का अधिकार।

2 लोगों को अपने प्रजनन और प्रजनन क्षमता को नियंत्रित करने का अधिकार।

3 सभी दंपतियों को अपने बच्चों की संख्या और और दो बच्चों में अंतर रखने का मूल अधिकार।

4 दंपतियों को निर्भय होकर यौन संबंध स्थापित करने की स्वतंत्रता जिसमें गर्भधारण होने पर यौन संक्रमण होने का भय ना हो ।

इस योजना काल में प्रजनन आयु वर्ग के दंपतियों पर विशेष ध्यान केंद्रित करते हुए उन्हें छोटा परिवार अपनाने के लिए तैयार करने पर बल दिया ,गया तथा इस संबंध में पुरस्कार में प्रेरणा संबंधी व्यवस्थाओं को अर्थपूर्ण बनाने के साथ सूचना व संचार तंत्र को शुद्ध बनाने पर विशेष जोर दिया गया ।

दसवीं पंचवर्षीय योजनाकाल 2002 से 2007

इस योजना के अंतर्गत परिवार कल्याण विभाग ने 27,125 करोड़ रुपए का आवंटन किया गया था जबकि नौवीं पंचवर्षीय योजना में यह 15,120 करोड रुपए था इस योजना काल में परिवार नियोजन कार्यक्रमों में परिवर्तन करके कुछ प्रजनन संबंधी लक्षण को हासिल करने मे समर्थ बनाने प्रस्ताव रखा गया ।

1 1991-2001 के दशक की जनसंख्या वृद्धि दर को 21.3 फीसदी से घटाकर 2010 - 2011 में 16.2% तक लाना ।

2 वर्ष 1999- 2000 की शिशु मृत्यु दर 72 को घटाकर 2007 में 45 तक लाना ।

3 वर्ष 1999- 2000 की मातृ मृत्यु दर 4 को हटाकर 2007 में दो तक लाना।

इस योजनाकाल के अंतर्गत शिशु मृत्यु दर तथा मातृ मृत्यु दर को निम्न स्तरीय करने की पहली बार पहल की गई।

11वीं पंचवर्षीय योजनाकाल 2007 से 2012

इस योजना काल में कुछ लक्ष्य निर्धारित किए गए

1 शिशु मृत्यु दर को 28 तक लाना।

2 मातृ मृत्यु दर को 1/1000 तक लाना।

3 कुल प्रजनन दर को 2.1 तक लाना।

4 महिलाओं में एनीमिया को 50% तक कम करना ।

भारत की राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 15 फरवरी सन् 2000 को घोषित की गई इस नीति पर काहिरा में आयोजित विश्व जनसंख्या एवं विकास सम्मेलन की सिफारिश का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इस नीति में इस तथ्य को स्वीकार किया गया की सबसे अधिक कारगर एवं सार्थक विकास नीतियां भी हैं जो सामाजिक न्याय को प्रतिष्ठा देने वाली सभी लोगों के जीवन के गुणवत्ता का विकास करने वाली हो। इस जनसंख्या नीति का प्रमुख लक्ष्य दो बच्चों के मानक को प्रोत्साहित करना और वर्ष 2046 तक जनसंख्या को स्थिर करना है जनसंख्या स्थिरीकरण को प्राप्त करना जनसंख्या नीति का प्रमुख लक्ष्य है।

भारत की जनसंख्या में एक बहुत बड़ा हिस्सा प्रजनन आयु वर्ग से जुड़ा हुआ है इस वर्ग की उच्च प्रजनन क्षमता एवं बाल विवाह प्रजनन दर को उच्च बनाए हुए हैं। नई जनसंख्या नीति मे इसको ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय जनसंख्या नीति के 3 प्रमुख स्तरीय उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं।

तात्कालिक उद्देश्य देश के हर नागरिक को हर प्रकार की गर्भनिरोधक सुविधाओं को घर–घर तक पहुंचाना, उपायों का विस्तार करना आदि सर्वप्रथम लक्ष्य है।

मध्यकालीन उद्देश्य इसके अंतर्गत देश की कुल प्रजनन दर को शीघ्रतिशीघ्र 2010 तक 2.1 प्रतिस्थापन स्तर तक लाना ।

दीर्घकालिक उद्देश्य 2045 तक जनसंख्या को स्थिर करना ताकि आर्थिक विकास सामाजिक विकास एवं पर्यावरण संरक्षण के लिए आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके।

स्पष्ट है की जनसंख्या नीति के सफल कार्यान्वयन को सुनिश्चित करके ही आबादी नियंत्रण एवं जनसंख्या स्थिरीकरण के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। जनसंख्या नीति तभी सफल होती है जब सरकारी दायरे से निकलकर लोक मान्यता प्राप्त करें भारत पहला ऐसा देश है जिसने प्रजनन क्षमता को कम करके जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने के लिए परिवार नियोजन कार्यक्रम शुरू किया जिसका परिणाम हमें दशक 1970 से 1990 के कम हुए प्रजनन दर में देखने को मिलता है 1970 के आंकड़े प्रजनन दर प्रति महिला 6.6 से घटकर 1990 के मध्य यह 3.4 हो गया यह पाया गया की प्रजनन दर में गिरावट के बाद भी प्रजनन संबंधित स्वास्थ्य समस्याएं बनी हुई थी। विकसित देशों में मातृ मृत्यु दर औसतन 100,000 जीवित जन्मो पर 30 है और विकासशील देशों में यह समान संख्या में जीवित जन्मो पर 500 से ज्यादा है ।गर्भवती स्त्री का प्रसव बिना प्रसूति चिकित्सक के होना इससे संबंधी विकार को जन्म देता है आज भी महिलाएं इसे चुपचाप सहन करती हैं ।

1996 में सरकार ने परिवार नियोजन के लक्ष्यो को समाप्त करने का निर्णय लिया 1997 में सरकार ने कार्यक्रम को पुनः उन्मुख किया और अपने दृष्टिकोण को एक नए परिप्रेक्ष्य में प्रजनन और बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम पर केंद्रित किया।

सन 1994 में काहिरा में हुए जनसंख्या और विकास पर अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन पहली बार प्रजनन स्वास्थ्य का मुद्दा व्यापक विचार विमर्श का विषय बना।

प्रजनन स्वास्थ्य एवं प्रजनन अधिकार

प्रजनन स्वास्थ्य का आशय केवल बीमारी या कमजोरी से मुक्ति नहीं है बल्कि यह प्रजनन प्रणाली और उसके सारे क्रियाकलापों से जुड़ी पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कुशलक्षेम की स्थिति है अतः प्रजनन स्वास्थ्य का मूल अभिप्राय यह है कि व्यक्ति संतोषप्रद और सुरक्षित यौन जीवन जी सके उसमें प्रजनन क्षमता हो तथा यह निर्णय करने की स्वतंत्रता हो कि उसे कब और कैसे और कितनी बार कितने अंतराल से प्रजनन करना है। सभी महिला और पुरुष को इस विषय में सूचना प्राप्त करने का पूरा अधिकार है। सरकार का दायित्व है कि उन्हें सुरक्षित प्रभावी और पसंद के परिवार नियोजन के साधन उचित दामों पर हमेशा सुलभ कराया जाए। महिलाओं और पुरुषों को अपने जनन क्षमता के नियमन हेतु रुचि के कानून समस्त साधन और उपयुक्त स्वास्थ्य सेवाएं उनकी पहुंच के दायरे में उपलब्ध होनी चाहिए ताकि महिलाएं सुरक्षित गर्भधारण के साथ सुरक्षित प्रसव का लाभ उठा सके उन्हें किसी प्रकार की यौन संचारित रोगों का शिकार न होना पड़े । पति पत्नी को स्वस्थ शिशु मिलने की सर्वोत्तम अवसर मिल सके। इस व्यापक परिभाषा के कारण प्रजनन स्वास्थ्य को मानव अधिकार के रूप में मान्यता मिली है इस अधिकार का आधार इस मान्यता से जुड़ा है कि सभी दंपतियों और व्यक्ति विशेष का यह मूल अधिकार है कि वह स्वतंत्रता पूर्वक और जिम्मेदारी के साथ यह निर्णय ले सके कि उन्हें कितने बच्चे चाहिए कितने अंतराल से चाहिए और ऐसा करने के लिए उन्हें जानकारी और साधन प्राप्त हो तथा वह उच्च स्तर पर का यौन एवं प्रजनन स्वास्थ्य प्राप्त कर सके।

उपरोक्त परिभाषा को ध्यान में रखते हुए, **प्रजनन अधिकार** कुछ ऐसे मानवाधिकारों को समाहित करते हैं जिन्हें राष्ट्रीय कानूनों, अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार दस्तावेजों और अन्य सर्वसम्मति दस्तावेजों में पहले से ही मान्यता प्राप्त है। ये अधिकार सभी दम्पतियों और व्यक्तियों के अपने बच्चों की संख्या, अंतराल और समय को स्वतंत्र रूप से और जिम्मेदारी से तय करने और ऐसा करने के लिए जानकारी और साधन रखने तथा यौन और प्रजनन स्वास्थ्य के उच्चतम मानक को प्राप्त करने के अधिकार के मूल अधिकार की मान्यता पर

आधारित हैं। इसमें मानवाधिकार दस्तावेजों में व्यक्त भेदभाव, जबरदस्ती और हिंसा से मुक्त प्रजनन से संबंधित निर्णय लेने का उनका अधिकार भी शामिल है। इस अधिकार के प्रयोग में, उन्हें अपने जीवित और भविष्य के बच्चों की जरूरतों और समुदाय के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को ध्यान में रखना चाहिए। सभी लोगों के लिए इन अधिकारों के जिम्मेदाराना प्रयोग को बढ़ावा देना प्रजनन स्वास्थ्य के क्षेत्र में सरकार और समुदाय द्वारा समर्थित नीतियों और कार्यक्रमों का मूल आधार होना चाहिए। जिसमें परिवार नियोजन भी शामिल है। अपनी प्रतिबद्धता के हिस्से के रूप में, पारस्परिक रूप से सम्मानपूर्ण और न्यायसंगत लिंग संबंधों को बढ़ावा देने और विशेष रूप से किशोरों की शैक्षिक और सेवा संबंधी जरूरतों को पूरा करने पर पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए ताकि वे अपनी कामुकता के साथ सकारात्मक और जिम्मेदाराना तरीके से निपटने में सक्षम हो सकें।

प्रजनन स्वास्थ्य दुनिया के कई लोगों के लिए ऐसे कारकों की वजह से दूर है : मानव कामुकता के बारे में अपर्याप्त ज्ञान और अनुचित या खराब गुणवत्ता वाली प्रजनन स्वास्थ्य जानकारी और सेवाएँ, उच्च जोखिम वाले यौन व्यवहार का प्रचलन भेदभावपूर्ण सामाजिक प्रथाएँ, महिलाओं और लड़कियों के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण और कई महिलाओं और लड़कियों के पास अपने यौन अधिकारों और प्रजनन जीवन पर सीमित शक्ति। अधिकांश देशों में प्रासंगिक सेवाओं तक जानकारी और पहुँच की कमी के कारण किशोर विशेष रूप से कमजोर हैं। वृद्ध महिलाओं और पुरुषों में प्रजनन और यौन स्वास्थ्य से जुड़ी अलग–अलग समस्याएँ होती हैं, जिन्हें अक्सर अपर्याप्त रूप से संबोधित किया जाता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में जनसंख्या और विकास पर प्रत्येक 10 वर्ष के अंतराल से विश्व सम्मेलन का आयोजन किया जाता है इसी कड़ी में वर्ष 1994 में काहिरा में जनसंख्या एवं विकास पर अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन 20वीं शताब्दी के अंतिम चरण की एक ऐतिहासिक घटना के रूप में स्मरण किया जाता है इस सम्मेलन में जनसंख्या, गरीबी उत्पादन व उपभोग व्यवस्था तथा पर्यावरण के मुद्दों पर नई सोच एवं नई दृष्टि का संचार किया यह सम्मेलन एक तरह से मानव जीवनस्तर मे सुधार पर ही केंद्रित रहा पहली बार यह जनसंख्या एवं विकास के संकुचित सीमाओं से बाहर निकलकर एक व्यापक परिपेक्ष में विषयों को देखने का प्रयत्न किया गया।

सम्मेलन मे इस बात पर सहमति व्यक्त की गई कि आज सतत विकास के लिए जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण के पारंपरिक संबंध को पहचान कर प्रत्येक देश के लिए उचित सामाजिक, आर्थिक नीतियों को प्रोत्साहित किया जाए तथा मानवीय एवं वित्तीय साधनों को हर स्तर पर मौजूद समस्याओं का समाधान करने का प्रयत्न किया जाए। आज विश्व समुदाय जनसंख्या स्वास्थ्य, शिक्षा और विकास के आधारभूत जरूरत को लेकर चुनौतियों का सामना कर रहा है इसलिए जनसंख्या से जुड़ी नीतियों और परिवार नियोजन कार्यक्रमों के प्रति ज्यादा सशक्त राजनीतिक प्रतिबद्धता बनाई जानी आवश्यक है। इसे सुरक्षित विकास से संदर्भ में सतत आर्थिक वृद्धि के द्वारा विभिन्न देशों में जनसंख्या वृद्धि के दबाव को सहने की क्षमता बढ़ेगी और जिन देशों में जनसंख्या दर के साथ सामाजिक आर्थिक एवं पर्यावरण लक्षण के बीच असमानता है एवं वहां सतत विकास की नीतियों की जनसंख्या में समन्वय एवं संतुलन स्थापित करने में सहायता मिलेगी। लैगिक समानता और महिला समर्थ को बढ़ावा देना महिलाओं के प्रति की जाने वाली प्रत्येक प्रकार की हिंसा को समाप्त करना तथा यह सुनिश्चित करना कि महिलाएं स्वयं अपनी जनन क्षमता को नियंत्रित करने में समर्थ हो सके यह उद्देश्य जनसंख्या एवं विकास कार्यक्रम में मील के पत्थर है।

काहिरा सम्मेलन में प्रजनन स्वास्थ्य को महत्व दिया गया जिसके अंतर्गत इसे मानव अधिकार के रूप में इसे मान्यता मिली उसके बाद होने वाले विश्व सम्मेलन में प्रजनन अधिकार की निरंतर पुष्टि होती रही। प्रजनन स्वास्थ्य की अवधारणा की मूल बात यह भी है कि व्यक्ति को अपनी आवश्यकता के अनुसार

परिवार को नियोजित रखने के लिए विभिन्न पद्धतियों की जानकारी व चुनाव के स्वतंत्रता होनी चाहिए। महिला सशक्तिकरण के द्वारा उनके प्रजनन अधिकार को मान्यता देकर उनमें निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना भी प्रजनन स्वास्थ्य की संकल्पना का अंग है। प्रजनन अधिकार को प्रजनन सुरक्षा के साथ यौन अत्याचार एवं अनुचित दबाव से मुक्ति की अवधारणा विकसित की गई है।

प्रजनन एवं यौन स्वास्थ्य को संपूर्ण स्वास्थ्य का महत्वपूर्ण घटक माना जाना आवश्यक है। विवाह करने का स्वैच्छिक निर्णय परिवार एवं परिवार के सदस्यों की संख्या का निर्धारण बच्चों का जन्म एवं उन्हें अंतराल जैसे मुद्दों के संबंध में समस्त सूचना रखने एवं उनका स्वेच्छा से चुनाव करने का अधिकार है। लिंग आधारित भेदभाव को समाप्त कर जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में बिना किसी दबाव के एवं सूचनाओं के आधार पर चयन करने की स्वतंत्रता प्राप्त होना।

प्रजनन अधिकारों को सरल शब्दों में समझे तो यह प्रजनन से जुड़े सभी पहलुओं से संबंधित है प्रत्येक व्यक्ति को प्रजनन स्वास्थ्य को प्राप्त करने का अधिकार है इसके लिए सरकार को ऐसे कदम उठाने चाहिए जिससे प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच जैसे गर्भनिरोधक विकल्पों तक पहुंच, गर्भपात संबंधित सुविधाएं, यौन संक्रमण एवं प्रजनन पथ संक्रमण की जांच और दवाइयां इत्यादि उपलब्ध होनी चाहिए। जिससे पुरुषों एवं महिलाओं को स्वास्थ्य सुरक्षा का बिना किसी भेदभाव के अधिकार प्राप्त हो सके। प्रजनन स्वास्थ्य कार्यक्रम के तहत बिना किसी दबाव के विधिक सेवाएं प्रदान की जानी चाहिए बच्चों की संख्या एवं बच्चों के बीच अंतर इस संबंध में उचित सूचना शिक्षा संसाधन प्रदान किए जाने चाहिए।

निष्कर्ष

उपरोक्त अध्ययनोंपरान्त यह ज्ञात होता है कि सरकार द्वारा प्रारंभ किए गए परिवार नियोजन कार्यक्रम को एक नए रूप महिला एवं बच्चों के स्वास्थ्य से जोड़कर प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम की शुरुआत की गई। जिसमें आठवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत विशेष महत्व मिला काहिरा मे संपन्न हुए अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन के बाद इस विषय पर विशेष जोर दिया गया परिवार नियोजन को महिला के स्वास्थ्य के साथ जोड़कर देखा जाने लगा । काहिरा में हुए अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन के पश्चात सभी देशों ने इस विषय पर विशेष जोर दिया। भारत ने अपने परिवार नियोजन की संकुचित विचारधारा को प्रजनन स्वास्थ्य के अभिविन्यास में बदल दिया। इस नए दृष्टिकोण को स्वीकार करने में अनेकों चुनौतियों भी है इस विषय को सेवा प्रदाताओं ,कार्यकर्ताओं और नीति निर्माताओ को गंभीरता से समझने की आवश्यकता है।

संदर्भ–

1. सिंह जेपी, समाजशास्त्र अवधारणा एवं सिद्धांत ,तृतीय संस्करण PHI Learning Pvt. Ltd. (2013)
2. शर्मा डॉ0 आर0 एल0 ,जनसंख्या शिक्षा आर एल बुक डिपो (2010)
3. टॉक डॉ0 ओमप्रकाश, जनसंख्या एवं विकास शिक्षा द्वितीय संस्करण राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी जयपुर (2012)
4. पांडा डॉ0 बीपी एवं वर्मा डॉ0 एल एन, जनसंख्या भूगोल मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी (2020)
5. The international conference on population and development cario 5-13 sept.1994 pdf chapter 7 para 7.2,7.3
6. Ram, Unisa & Sekher Population Gender and Reproductive Health (2011)
7. Leela Visaria, Shireen Jeje ebhoy, Tom Merrick, From Family Planning to Reproductive Health: Challenges Facing India Journal Articles
8. कुमार डॉ वि एवम गुप्ता डॉ एस एन , जनांकिकी , साहित्य भवन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्राइवेट लिमिटेड ,नई दिल्ली २००५ पेज न 745 – 750
9. सिंह जे. पी. समाजशास्त्र : अवधारणाएं एवं सिद्धांत P H I learning Pvt Ltd. Delhi 2013 p. 589–590

Socio-economic and Health Challenges Faced by Return Migrants during COVID-19: A Sociological Study in Shamli District (U.P.)

Dr. Anurag,
Ph.D. in Sociology, Department of Sociology,
N.A.S. College Meerut.
Email: anuragtomar39@gmail.com
Mr. Anshul Sharma
Research Scholar, Department of Sociology,
C.C.S. University Campus, Meerut.
Email: anshulnojal@gmail.com

Abstract

The COVID-19 pandemic has affected every section of society, but the migrant labourers suffered the most silently and deeply. This study focuses on migrants who returned to Shamli district in Uttar Pradesh during the lockdown when the cities were shut down and work came to a sudden halt. This research is based on primary data collected from 200 respondents using a structured interview schedule. The area of study was chosen deliberately as a large number of migrants had returned there and could be contacted easily. The main objective of this research was to study their socio-economic profile and also to know what kind of health and social challenges they faced after returning to their home. The findings reveal that most of the returnees were young, male and from OBC and SC category backgrounds. Their level of education was low and most of them worked in the informal sector like factories, construction, hotels, etc. When they came back, more than half of them had health issues and most of them did not get any proper support from the government. Some were quarantined, but many were not. They were also not easily accepted socially and 51% of them reported feeling discriminated against or intimidated by others. Also, more than 60% said they were unable to find work locally after returning, which made their situation even worse. This study highlights that migration back in the time of pandemic is not just about going back to villages, but it also gives rise to many new problems. From financial constraints to mental stress and health problems to social rejection, migrants faced many difficulties. The paper concludes with some suggestions like skill training, better health support, mental counselling and rural employment to help such people in the future. This research tries to give a voice to the workers who were ignored in both cities and villages and shows the need for serious policy planning for them.

Keywords:
Return Migration, COVID-19 Pandemic, Shamli District, Socio-economic Challenges, Health Issues, Rural Adjustment, Primary Data, Structured Interview, Migrant Labour, Sociological Study

1. Introduction

Medical sociology focuses on the social construction of health and illness – that is, constructions shaped by multiple elements of the social system and often independent of biomedical phenomena. From this perspective, medical sociology connects together and understands the meaning of various manifestations of health and illness: biomedical data, professional practice, institutional structures, social policy, economics and financing, the social epidemiology of illness and death, and the individual experience of health, illness, and medical care. The discipline connects the micro-level (self-awareness, individual action, and interpersonal communication), the meso-level (hospital and medical education), and the macro-level (the health status of the nation, the structure and political economy of the health care system, and national health policy). (Nagala, 2018:4)

The Covid-19 pandemic has changed many things across the world, but in India, its impact was particularly visible in the sudden exodus of millions of workers from urban areas to their native villages. As the lockdown was announced in March 2020, factories shut down, construction halted, transport stopped – and with it, the livelihoods of migrant workers vanished almost overnight. With no income, no support and a growing fear of an unknown disease, these migrants had no choice but to return to their homes, often covering hundreds of kilometres on foot, bicycle or by any means possible.

Against this backdrop, Shamli district in western Uttar Pradesh saw a large number of migrants return, mostly young and middle-aged men who previously worked in big cities such as Delhi, Gurugram, Surat and Mumbai. Many were employed as construction workers, drivers, factory labourers, helpers in restaurants or small industrial units. When they came back to Shamli, they brought not just their belongings and goods, but also fear, anxiety and uncertainty for themselves and their families.

This return migration was not just a physical change – it brought a host of emotional, financial and health challenges for the migrants. Most of them had no savings or very little money to spare. They had to rely on their families, many of whom were already struggling with poverty. Shamli District were suddenly filled with people who previously worked in cities and now did not know what to do next.

Health-wise, many returnees complained of fatigue, fever, cough and weakness – some even unknowingly carrying Covid infection. The rural health system was not prepared to handle this sudden pressure. Quarantine centres were not always well equipped. There were also cases where migrants were treated with suspicion and social distancing by their own neighbours, leading to a sense of isolation and mental stress.

The local administration tried to help, but the scale of the problem was huge. Jobs were not available and those who were skilled for urban work were finding it difficult to adjust to the rural environment. Farming was seasonal and daily wage work was already being done by locals. This led to friction in some cases and a sense of uselessness among many migrants.

This study focuses on understanding these very issues – the socio-economic and health problems faced by migrants who returned during the pandemic in Shamli district. It seeks to look

at their life experiences, their coping mechanisms, and the support (or lack thereof) they receive from family, society, and the government.

Through this sociological study, the aim is to give voice to the silent struggles that often get overlooked in official data. By exploring ground realities from a humanistic perspective, this paper hopes to advance the conversation about migration, crisis, and resilience in rural India. This study is done in 2024, but the focus group includes migrants who returned during 2020-21. Many of them never returned to the city due to fear, unemployment or family pressure. Their current situation is that the pandemic can affect a person's life in a convulsive social and economic way, which is why their case is still a backward class for sociological research.

2. Review of Literature

Migration is a long-prevalent pattern in India, but a particular type of migration was observed during the COVID-19 lockdown – called return migration. Several scholars and researchers have written on this new form of distress migration that was unplanned and forced due to job losses and closure of industries.

Khan and Arockiaraj (2021) studied the situation of returnee migrants in rural areas of India and highlighted how the sudden reverse migration created both economic and social pressure on rural areas. Their study revealed that most migrants returned without savings and faced a lack of work at home. A similar study conducted by Tiwari and Majumdar (2022) in Bihar and Jharkhand revealed that returnees were viewed with suspicion and were sometimes not allowed to interact with others in the village for fear of infection.

Roy, Mishra, and Sharma (2023) mentioned in their research that more than 60% of the returning migrants did not find any stable job for months after their return, which increased their stress and broke their financial support system. Jha and Lahiri (2020) studied the health side of migration and found that anxiety, insomnia, and weakness were common among returnees and the government healthcare response was not robust enough.

Gupta and Das (2022) focused on the mental health and social stigma faced by migrants in North India and stated that migrants suffered silently due to fear, isolation, and ill-treatment from people around them. This side of migration has been less studied but is very important. Singh and Verma (2021) researched the economic vulnerability of returned migrants in UP and found that returning workers had to accept very low-paid work or remain unemployed.

A study conducted by Chandra and Patel (2021) raised concerns over rural health infrastructure. According to him, health centres were not fully prepared to meet the increased demand during the Covid crisis, especially when migrants returned in large numbers.

While many of these studies focus on different regions such as Bihar, Jharkhand or North India in general, there is very little work available that directly talks about the situation of migrants in Shamli district. This is why the present study focuses on primary level data from Shamli city to give a realistic sociological understanding of the situation.

3. Sociological Perspective on Return Migration

Migration is not just an economic movement, it is also deeply connected to society and identity. When a person migrates or returns from rural to urban, he undergoes a change in status,

social role and relations. During COVID-19, when millions of workers returned to their native places like Shamli, their situation was not only of job loss but also of how they were socially accepted or rejected.

According to E. G. Ravenstein's "Laws of Migration" (1885), migration is usually a result of economic forces but is also influenced by social and cultural factors. But in the case of return migration during COVID, it was a forced and unplanned movement – which created social imbalance and emotional stress.

Sociologist Everett Lee (1966) in his Push-Pull Theory stated that people migrate due to "push factors" like poverty or job loss and "pull factors" like family or security. In the time of Covid, the push was strong (lockdown, fear, hunger) and the pull (safety of the village, home) became the only option. But what happened after the return was that people felt alienated in their own place of origin. This is where Emile Durkheim's idea of "anomie" can be seen. Migrants faced a breakdown of routine life, loss of identity, and confusion socially and emotionally.

Even M.N. Srinivas in his study of Indian rural society talked about how caste and status affect one's acceptance in the village. After return, many migrants who once earned in the cities were now seen as "outsiders" again, especially among lower caste or poor groups. Their earlier urban identity was lost, and rural society no longer accorded them the same respect.

Thus, return migration during Covid was not only a demographic shift but also a sociological shock. This distorted roles, respect, support systems and gave rise to new kinds of inequalities and tensions in village life. The present study tries to capture that hidden social dimension through data collected in Shamli city.

4. Objectives of the Study

This study is based on primary data collected from 200 migrants who returned to Shamli town during the COVID-19 pandemic. The research attempts to explore the impact of pandemic-induced migration on various aspects of migrants' lives. The objectives are:

1. To study the socio-economic profile of returnee migrants in Shamli city.
2. To examine the health challenges and social adjustment issues faced by returnee migrants after resettling in their place of origin.

These objectives help us understand both structural (economic, occupational) and individual (health, emotional, social) aspects of their lives post-COVID. A sociological lens has been used to explain the experiences of these individuals in their rural environment.

5. Research Methodology

This study is based fully on primary data which was collected from the return migrants who came back to Shamli city during the COVID-19 pandemic. Shamli is a district in western Uttar Pradesh, and it was seen that a lot of people who were working outside in big cities like Delhi, Mumbai, Surat etc. came back here when lockdown got declared. So, this area was taken purposively for the study because it was not possible to take the whole district, and Shamli city along with its surrounding villages had a large number of return migrants who could be easily contacted and observed. The study mainly focused on Shamli city and eight of its nearby villages — Laprana, Mailaindi, Bahdhev, Tana, Titoli, Pelkha, Taprana, and Peerkheda. These areas were

selected because a significant number of people had migrated from here and returned during the pandemic. Local familiarity and accessibility also made these places suitable for fieldwork. The total number of respondents taken for this study was 200. All of them were return migrants who had come back to Shamli between 2020 to 2021, either after losing their jobs or due to the fear of the disease. Although the main wave of return migration took place between March 2020 and June 2021, data for this study was collected during the period from September to November 2024. The aim was to understand the long-term socio-economic and health impact on those migrants who returned during the COVID-19 crisis and are still living in their place of origin. Since many of them did not migrate again and continued to live in Shamli and the mentioned villages, it gave a good opportunity to assess the post-migration impacts even after 3–4 years. The data was collected using a structured interview schedule, which means that all questions were already fixed and the same for everyone. There were no open-ended questions, only close-ended ones, such as multiple-choice or yes-no types. The interview schedule included questions on age, gender, caste, family background, income before and after migration, health issues, work conditions, and some social experiences after coming back to their village or town. The sampling method used in this study was purposive sampling. This means that only those people were selected who fulfilled the condition of being return migrants during the COVID period. No random method was applied because it was not a general population survey but specifically targeted at those who had gone outside and returned. The interviews were conducted face-to-face by the researcher in different parts of Shamli city as well as in the villages like Laprana, Mailaindi, Bahdhev, Tana, Titoli, Pelkha, Taprana, and Peerkheda. Local areas and bastis were visited, and people were met personally. Some people were hesitant at first, but later they opened up and spoke freely. A few interviews were also conducted in the local language so that people could feel at ease and more comfortable while responding. The data collected from all 200 respondents was checked and then analysed manually. No software was used for analysis; instead, simple percentage and comparison methods were applied. Patterns were identified by observing how many people gave similar answers, and common issues were noted. Though the data was mostly quantitative due to the structured questions, the emotional side of the migrants also came out through many of their responses.

This methodology was helpful to understand the real condition of return migrants from a ground-level perspective. It gives a picture not only of their economic problems but also of their health challenges and social adjustment issues, which were deeply affected due to the sudden and unplanned return to their native place.

6. Findings and Analysis

Table 1: Socio-Economic Profile of Return Migrants (N=200)

Variables	Category	No. of Respondents	Percentage (%)
Age	18–25 years	42	21%

	26–35 years	86	43%
	36–45 years	48	24%
	46 years and above	24	12%
Gender	Male	182	91%
	Female	18	09%
Category	General	38	19%
	OBC	102	51%
	SC/ST	60	30%
Education	Illiterate	26	13%
	Up to 10th	98	49%
	Intermediate	48	24%
	Graduate & above	28	14%
Occupation before migration	Factory/Industrial work	64	32%
	Construction Labour	42	21%
	Hotel/Transport Sector	38	19%
	Self-employed (urban)	56	28%
Monthly Income before migration	Less than ₹5000	28	14%
	₹5001 – ₹10,000	74	37%
	₹10,001 – ₹15,000	64	32%
	Above ₹15,000	34	17%

The above table showing the general socio economic profile of those migrants who returned to Shamli during the covid time. Most of the people were between age group of 26–35 years (43%) and maximum of them were male (91%) which shows that migration in India is still male-dominated. Female migration was very low may be due to family restriction or social reasons. Caste wise, OBC category was largest part (51%) which indicate that backward class

people are more involved in labour work and migrate more. Education level was not very high in most migrants, almost half (49%) had studied only upto 10th class and 13% were totally illiterate. This explain why they not get permanent jobs in city and were working in unorganised sectors like factory, construction and hotel. Income wise majority of them (37%) were earning between ₹5000–₹10,000 only which is very low when we see cost of living in metro cities. This also shows why they not had savings when lockdown happened. Most of them was doing hard labour with low wage.

Table 2:
Health and Social Adjustment Issues Faced by Return Migrants

Variables	Category	No. of Respondents	Percentage (%)
Faced Health Problems After Return	Yes	116	58%
	No	84	42%
Type of Health Issue (Multiple response)	Fever/Cough	62	31%
	Body pain/Weakness	44	22%
	Anxiety/Sleeplessnes	38	19%
	No illness	56	28%
Got any medical support from Govt.	Yes	48	24%
	No	152	76%
Quarantine at Govt. centre	Yes	73	26.5%
	No	127	63.5%
Faced Social Discrimination after Return	Yes	102	51%
	No	98	49%
Able to Find Local Work after Return	Yes	78	39%
	No	122	61%

The data in above table is clearly showing that the return migrants not only suffered economically but also in health and social way. Around 58% of them told they had some or the other health problem after coming back. Most common issues was fever, weakness, and some

mental stress too like sleeplessness or anxiety. It shows that migration during such crisis time had physical and emotional toll on them.

Surprisingly, only 24% said they got any help from government side for medical needs. Rest of the people either managed themselves or with help of local doctor or home treatment. That means, health infrastructure was notready in rural area to handle these sudden return of people. Quarantine facility was also not proper — only 26.5% migrants were kept in govt. centre, baaki log either stayed at home or no proper isolation happened.

From social point of view also, many migrants suffered. Around 51% respondents reported that they were treated differently by neighbours or even own relatives. Some people were called names or avoided just because they returned from city. This type of behaviour hurted them emotionally and they felt isolated. Also, 61% people told they didn't got any work after return. Many of them just sitting at home or doing small labour work for which they were not trained or mentally prepared. That shows that rural economy was not capable enough to absorb such large number of return population suddenly.

So from this table we can see how health services, social support and employment — all three was missing or not sufficient for the return migrants in Shamli.

7. Conclusion and Suggestions

The study of return migrants in Shamli during the COVID-19 time clearly shows that migration is not just a matter of movement from one place to another, it is deeply connected with social, emotional, health and economic aspects of a person's life. When the lockdown was suddenly announced, lakhs of people had to leave their jobs and return to villages without any preparation. The return was not happy, it was full of fear and uncertainty. In Shamli also, many people came back from metro cities like Delhi, Mumbai, Gujarat etc. but what they found here was not comfort, but new set of struggles.

From the data of 200 respondents it was found that most of the migrants were from poor or backward sections. They had very less education and were working in unorganised sector in cities where they earned just enough to survive. So when cities closed down, they didn't had savings or backup. Coming back to village gave them shelter, but no income. Around 61% of them couldn't find any local work even after months of return, which pushed them into depression and family stress. Their identity as breadwinner was broken.

Health wise too, situation was not good. Almost 58% told they had some health issues after returning like fever, weakness, sleeplessness etc. But only 24% said they got help from government hospitals. This shows the poor condition of rural health system. Quarantine system was also not properly followed for all. Socially also, many of them felt humiliated or discriminated. People in village looked at them with doubt and fear, thinking they might bring virus. Some were even avoided by their own neighbours or relatives. This kind of behaviour created emotional pain in their minds.

The research also shows that government schemes, although announced, were not reaching everyone properly. Ration was not regular, jobs under MNREGA were not enough, and health services were limited. The migrants felt ignored and lost. They were already in pain due to

job loss and city leaving, and then in village too they had to face rejection and shortage of support.

From sociological point of view, this crisis exposed how fragile our system is when it comes to protecting migrant workers. They are the backbone of city economy but when problem came, they were left alone. The social structure in villages also could not fully absorb them because of already existing poverty and unemployment.

Suggestions

1. Permanent database of migrants should be created so that in any future crisis, they can be traced and helped quickly.
2. Skill development programs must be started in rural areas specially for return migrants so that they can start new work according to their capacity.
3. Mental health counselling should be provided at local level through community workers because many migrants are still suffering silently.
4. Employment guarantee schemes like MNREGA should be strengthened and expanded to urban migrants also with separate quota.
5. Awareness campaigns needed to stop social stigma against returnees. Villagers must be educated that migrants are not danger but part of same community.
6. Better rural health system should be developed so that in case of pandemic or emergency, rural hospitals can handle large number of patients.
7. Micro-loans or start-up support for return migrants can help them become self-employed and reduce burden on rural economy.

In the end, we can say that migrants are not just labourers, they are human beings with hopes and dreams. COVID-19 broke many of those dreams, but if right steps are taken now, they can rebuild again with dignity and strength.

References

1- Census of India. (2011). District Census Handbook: Shamli. Government of India.
2- Chandra, A., & Patel, L. (2021). Rural health infrastructure and pandemic response: A case study of western UP. Indian Journal of Public Health, 12(1), 33–45.
3- Durkheim, E. (1897). Suicide: A study in sociology (J. A. Spaulding & G. Simpson, Trans.). The Free Press. (Original work published 1897)
4- Gupta, R., & Das, N. (2022). Mental health and social stigma among return migrants: Evidence from North India. Asian Journal of Sociology, 8(3), 55–72.
5- Jha, D., & Lahiri, A. (2020). Health risks faced by migrant labourers during COVID-19: A field study. Rural Health Journal, 7(2), 65–79.
6- Khan, M., & Arokkiaraj, H. (2021). Return migration during COVID-19 and challenges in rural India. International Journal of Migration and Development Studies, 9(2), 112–124.
7- Lee, E. S. (1966). A theory of migration. Demography, 3(1), 47–57. https://doi.org/10.2307/2060063

8- Ministry of Labour and Employment. (2020). Report on return migrants during COVID-19 lockdown. Government of India.
9- Nagla, M. (2018). *Sociology of health and medicine*. Rawat Publications.
10- Press Information Bureau. (2020). Govt. schemes to support migrant labourers during pandemic. PIB India. https://www.pib.gov.in
11- Ravenstein, E. G. (1885). The laws of migration. Journal of the Statistical Society of London, 48(2), 167–235. https://doi.org/10.2307/2979181
12- Roy, P., Mishra, K., & Sharma, V. (2023). Livelihood crisis of return migrants in post-pandemic India. Journal of Scientific Research and Rural Economy, 11(3), 142–156.
13- Singh, P., & Verma, S. (2021). Economic vulnerability of migrant workers in Uttar Pradesh during COVID-19 lockdown. Journal of Rural Studies, 15(4), 201–217.
14- Srinivas, M. N. (1966). Social change in modern India. University of California Press.
15- Tiwari, S., & Majumdar, R. (2022). Social impact of reverse migration during pandemic: A study in Bihar and Jharkhand. Migration and Society, 4(1), 77–91.

Others Sources:

● http://www.wikipedia.com
● http://www.researchgate.net
● http://onlinelibrary.com
● http://zlibrary.com
● http://www.jstore.org
● http://journals.sage.pub.com

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

ग्रामीण समाज पर नवीन तकनीकीकरण की भूमिका : एक दृष्टिकोण

ज्योत्स्ना कन्नौजिया
पी–एच0डी0 शोधार्थिनी
समाजशास्त्र विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
jaishiv1396@gmail.com
प्रोफेसर अमिता सिंह
समाजशास्त्र विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

सारांश

*वर्तमान युग तकनीकी का युग है। इस तकनीकी प्रगति ने समाज के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है जिससे ग्रामीण क्षेत्र भी इससे अछूता नही है। नवीन तकनीकीकरण ने ग्रामीण समाज की पारम्परिक संरचना, जीवनशैली अर्थव्यवस्था और शिक्षा में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाया है। कृषि जो हमारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं, उसमें सेसंर तकनीकी, ड्रोन कृत्रिम बुद्धिमता (AI) और इंटरनेट ऑफ थिग्ंस (IOT) जैसी तकनीकों के माध्यम से उत्पादकता में वृद्धि और संसाधनो के कुशल तकनीकी प्रबन्ध को संभव बनाया हैं। संचार और सूचना के क्षेत्र में डिजिटल इण्डिया और मोबाइल इंटरनेट जैसे प्रयासो ने ग्रामीण जनो को वैश्विक तकनीकी जानकारी से जोड़ दिया है, जिससे उनके ज्ञान, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच आसान हुई है। ग्रामीण क्षत्रों में ऑनलाइन शिक्षा, टेलिमेडिसिन और ई–गवर्नेस जैसी सेवाओं ने सामाजिक सशक्तिकरण की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं। नवीन तकनीकीकरण ने महिलाओं और युवाओं के लिए स्वरोजगार और उद्यमिता के नए अवसर खोल दिए हैं। इसके साथ ही सरकारी योजनाएँ जैसे **प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि, ई–नाम पोर्टल** और **जनधन योजना** ने तकनीकी के माध्यम से ग्रामीण विकास को गति दी हैं। हालांकि इस प्रक्रिया में कुछ चुनौतियां भी सामने उभर कर आई हैं जिसका प्रभावी रूप से निराकरण अति आवश्यक है जिससे तकनीकीकरण ग्रामीण समाज के सर्वांगीण विकास का आधार बन सकता हैं। शोध पत्र ग्रामीण भारत में हो रहे तकनीकी परिवर्तन और उसके सामाजिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना है। यह अध्ययन मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, जिसमें रिपोर्ट्स, सरकारी आंकड़े, शोध पत्र और पत्र–पत्रिकाओं आदि के लेख सम्मिलित हैं।*

मुख्य शब्द–तकनीकीकरण, ग्रामीण समाज, इंटरनेट, डिजिटल भारत, स्मार्ट कृषि, सामाजिक परिवर्तन

प्रस्तावना

भारत जैसे विशाल देश में जहाँ जनसंख्या का एक बड़ा भाग ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है, वहाँ तकनीकीकरण का प्रभाव केवल आर्थिक ही नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक स्तर पर भी दिखाई देता है। भारत की लगभग 65 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों निवास करती है। परंपरागत रूप से ग्रामीण भारत कृषि आधारित, सामाजिक रूप से संरचनाबद्ध और तकनीकी रूप से सीमित रहा है। परंतु 21वीं सदी के उत्तरार्द्ध में, डिजिटल क्रांति, मोबाइल कनेक्टिविटी, इंटरनेट की पहुँच, और सरकार की ''डिजिटल इंडिया'' जैसी योजनाओं के कारण ग्रामीण जीवन में आमुलचूल परिवर्तन आ रहे हैं। अब केवल शहरी विशेषाधिकार नहीं रह गया, बल्कि यह ग्रामीण जीवन की मूलभूत आवश्यकता के साधन के रूप में उभर रहा है। यह शोध पत्र इसी परिवर्तनशील परिदृश्य की समाजशास्त्रीय व्याख्या करता है। परिवर्तन प्रकृति का एक शाश्वत नियम हैं। मनुष्य भी उसी प्रकृति का अंग होने के कारण परिवर्तनशील है। समाज

की इस परिवर्तनशील प्रकृति को स्वीकार करते हुए मैकाइवर ने लिखा है कि,'समाज परिवर्तनशील एवं गतिमान है।' और ग्रीक विद्वान–हेरेक्लिटिश ने भी कहा था कि,'सभी वस्तुएं परिवर्तन के बहाव में हैं।'भारत सरकार ने शहर और गाँव की दूरी को कम करने के लिए डिजिटलीकरण का रास्ता अपनाया है और ग्रामीण भारत के बहुआयामी विकास को लक्षित किया गया। सभी गांवो में पहले 3जी, 4जी और अब 5जी इंटरनेट सेवा को उपलब्ध कराने के प्रत्येक ग्रामपंचायत की ऑप्टिकल फाइबर के माध्यम से ब्रॉण्डबैण्ड हाइवे से जोड़ना प्रारम्भ किया गया। ग्रामीण भारत में हाल ही के वर्षो में गरीबी में गिरावट देखी गई, जिसका श्रेय भारत सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाएं एवं सरकारी पहलो को दिया जाता है। यह इस बात का प्रमाण है कि डिजिटल प्रौद्योगिकियाँ ग्रामीण इलाको में अपना पैर पसार रही हैं और महत्वपूर्ण परिवर्तन की दिशा की ओर अग्रसर हो रही हैं। इस परिवर्तन के बावजूद भी चुनौतियां बनी हुई है। ग्रामीण इलाके अभी भी अपर्याप्त बुनियादी ढाँचे, गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवा तक सीमित पहुँच और शैक्षिक असमानताओं का सामना कर रहे हैं। वर्तमान समय में इस चुनौतियों ने नवाचार के अवसर भी प्रस्तुत किए हैं–जैसे डजिटल तकनीकी, नवीकरणीय ऊर्जा समाधान और नवीन कृषि पद्धतियों में उन्नति के कारण ग्रामीण अर्थव्यवस्था बदल रही हैं। इंटरनेट और मोबाइल कनेक्टिविटी की पहुँच में तेजी आई हैं वर्ष 2025 में इंटरनेट उपयोगकर्ता की संख्या 90 करोड़ से अधिक होने की उम्मीद है, जिसमें 48.8 करोड़ ग्रामीण इंटरनेट उपयोगकर्ता शामिल है। रिर्पोट के अनुसार इंटरनेट उपयोग करने वालों की संख्या में सबसे अधिक वृद्धि ग्रामीण इलाकों में हुई है। भारत की कुल इंटरनेट आबादी की 55 प्रतिशत हिस्सा ग्रामीण भारत से है। यह डिजिटल क्रान्ति कनेक्टिविटी की खाई को पाट रही हैं। और शिक्षा, स्वास्थ्य और आर्थिक गतिविधियों के लिए अवसर के नए रास्ते खोल रही हैं।

तकनीकीकरण के प्रमुख क्षेत्र

कृषि में तकनीकी नवाचार–कृषि हमेशा से ही ग्रामीण भारत की रीढ़ रही है, जो लगभग 70 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों का जीविकोपार्जन के साधन के रूप में विद्यमान है। यह क्षेत्र नवीन तकनीकों और पद्धतियों के वजह से एक परिवर्तनकारी चरण तक पहुँच गया है। जिससे उत्पादन क्षमता में वृद्धि और किसानों की आय को दुगुना वृद्धि भी करता है। स्मार्ट खेती के आगमन से किसानों को अब मिट्टी की गुणवत्ता, मौसम की जानकारी, कीट नियंत्रण, और सिंचाई संबंधी डेटा तकनीकी के माध्यम से आसानी से प्राप्त हो रहा है। डीआइपी ने ग्रामीण किसानों को डिजिटल सेवाएं प्रदान करके उनके लिए लाभ प्रदान किए हैं इस वर्चुअल प्लेटफार्म ने किसानों को राष्ट्रीय कृषि बजारों से जोड़ा है और तकनीकी प्रगति की सुविधा प्रदान की हैं। भारत सरकार ने किसानों के लिए ड्रोन तकनीकी की पहुँच को सुलभ बनाया हैं। यह ड्रोन तकनीक कुछ ही समयों में एक एकड़ तक कीटनाशक दवाओं का छिड़काव कर सकता हैं। जिससे कीटनाशक दवा के संर्पक में आनेवाले लोगों की संख्या कम होती गई हैं। ई–नाम पोर्टल के माध्यम से किसान अपने उत्पादो को सीधे मंडियों में बेचकर बेहतर मूल्य प्राप्त कर रहे हैं।

शिक्षा में डिजिटल तकनीक की पहुँच–ग्रामीण छात्रों को अब ऑनलाइन शिक्षा सामग्री, डिजिटल क्लासरूम और वर्चुअल ट्यूटरिंग उपलब्ध हो रही है। भारत सरकार ने स्वयं, दिक्षा, पीएम–विद्या और ई–पाठशाला जैसे डिजिटल ई–लर्निंग प्लेटफार्मो की शुरूआत की जो छात्रों शिक्षकों और अभिभावकों को शिक्षण सामग्री प्रदान करते हैं। और सस्ती और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का मार्ग प्रशस्त करते हैं। स्मार्टफोन और इंटरनेट की उपलब्धता ने दूरस्थ क्षेत्रों में रह रहे बच्चों को भी मुख्यधारा से जोड़ा है। ग्रामीण क्षेत्रों में हाईस्पीड इंटरनेट संयोजकता की पहुँच ने ऑनलाइन शिक्षा प्लेटफार्मो तक पहुँच को सरल एवं सुलभ बनाया हैं।

स्वास्थ्य सेवाओं में तकनीकी की पहुँच–टेलीमेडिसिन, ई–संजीवनी, और मोबाइल हेल्थ ऐप्स ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं को आसान और सुलभ बना रहे हैं। अब ग्रामीण लोग मोबाइल पर डॉक्टर से परामर्श ले

सकते हैं और ऑनलाइन दवाइयाँ प्राप्त कर सकते हैं। टीकाकरण, मातृ–स्वास्थ्य और नवजात देखभाल में भी तकनीकी सुधार हुए हैं। तकनीकी ने स्वास्थ्य सेवाओं को पहले से बेहतर बनाया है। इलेक्ट्रॉनिक मेडिकल दस्तावेज टेलीमेडिसिन और हेल्थ ट्रैक्र्स आदि ने रोगी की देखभाल में सुधार किया है।

ग्रामीण रोजगार और उद्यमिता–श्रम और रोजगार मंत्रालय का ई–श्रम पोर्टल असंगठित श्रमिकों का एक डिजिटल दस्तावेज है, जो किसानों और प्रवासी श्रमिकों को रोजगार के अवसर देने का कार्य कर रही है। डिजिटल तकनीक ने ग्रामीण छात्रों के लिए आईटी प्रशिक्षण को बढ़ावा दिया है, जिससे आईसीटी सेक्टर में रोजगार प्राप्त करने के लिए आवश्यक कौशल प्राप्त हुए है। डिजिटल कौशल प्रशिक्षण (Digital Literacy) से युवा फ्रीलांसिंग, ऑनलाइन मार्केटिंग और डिजिटल सेवाओं में करियर बना रहे हैं। महिलाएँ Self Help Groups (HGs) के माध्यम से डिजिटल पेमेंट, ऑनलाइन उत्पाद बिक्री, और कुटीर उद्योग में सक्रिय हो ही हैं। e–Commerce प्लेटफॉर्म जैसे Amazon, Meesho, Flipkart ने गाँवों से सीधे उपभोक्ताओं पर पहुँच बनाई है। टेक्नोलॉजी ने सभी वर्गो के लिए नए उद्योग और नौकरियों के अवसर प्रदान किए है।

सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तन–वर्तमान समय में तकनीक के माध्यम से हमारा सामाजिक जीवन बदल रहा है, साथ ही यह हमे लोगों के साथ जुड़ने का माध्यम प्रदान करता है। इंटरनेट और मोबाइल तकनीकों के तेजी से प्रसार ने क्रॉस–कल्चरल इंटरैक्शन को सुगम बनाया है, जिससे वैश्विक स्तर पर सांस्कृतिक मूल्यों और रीति–रिवाजों का सम्मिश्रण हुआ है। सोशल मीडिया के जरिए दूर–देश में हो रही घटनाओं एवं सूचनाओं तक लोगों की पहुँच को आसान बनाया है जिससे हम ई–मेल, वीडियोकॉल और त्वरित संदेशो के माध्यम से दुनियाभर के लोगों से आसानी से जुड़ सकते है। यह समाजिक संवादको बढ़ावा देता है और विश्वव्यापी अर्न्तराष्ट्रीय सबंधों को मजबूती देता है।

साहित्य सर्वेक्षण–प्रस्तुत शोधपत्र के निर्माण में कुछ साहित्यो का भी अध्ययन किया गया है–

1– सिंह, अशोक (2020) ने अपने शोध लेख, **''सरकार होती डिजिटल भारत की परिकल्पना''**, में लिखा है, कि अब 21वीं सदी में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी द्वारा ही ग्रामीण क्षेत्रों में बदलाव लाया जा सकता है।

2–कुमार, वीरेंद्र (2020) ने अपने शोध लेख, **''किसानों के जीवन का अहम हिस्सा बनते डिजिटल टेक्नोलॉजी''**, में वर्णित किया है, कि ग्रामीण इलाकों में पायलट आधारित आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोग करके कृषि उत्पादन में वृद्धि करना और लागत को कम करना है।

3–मिश्रा, कुमार, अरविंद, (2024) ने अपने शोध लेख, **''नवाचार से ग्रामीण विकास को गति''**, में उद्घृत किया है, कि नवाचार से ग्रामीण भारत के सामाजिक और आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ किया जा सकता है।

इन अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि तकनीकीकरण, ग्रामीण भारत को बदलने की अपार क्षमता रखता है, बशर्ते वह समावेशी और सुलभ हो।

सरकार की पहल और योजनाएँ

1–डिजिटल इंडिया मिशन–डिजिटल इण्डिया कार्यक्रम की शुरूआत 1 जुलाई 2015 में हुई थी ताकि नागरिकों को डिजिटल माध्यम से सेवाएं उपलब्ध कराई जा सकें। यह योजना ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल साक्षरता, इटरनेट कनेक्टिविटी और ई–गवर्नेस को बढ़ावा देने के लिए है।

2–भारत नेट परियोजना– यह योजना वर्ष 2015 को लागू की गई जो विश्व का सबसे बड़ा ग्रामीण ब्रॉण्डबैंड कनेक्टिविटी कार्यक्रम है। इस योजना का उद्देश्य ग्राम पंचायतों तक फाइबर ऑप्टिक ब्रॉडबैंड पहुँचाना है ताकि इंटरनेट की पहुँच हर गाँव में सुनिश्चित हो सके।

3–ई–नाम (e–NAM)– 14 अप्रैल 2016 को प्रधानमंत्री द्वारा शुरू की गई है। यह एक राष्ट्रीय कृषि बाजार है, जो किसानों को पारदर्शी और लाभदायक मूल्य पर मिडियों तक अपने उत्पाद बेचने की सुविधा देताहै।

4–प्रधानमंत्री ग्रामीण डिजिटल साक्षरता अभियान (PMGDISHA)–इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण घरों में कम से कम एक व्यक्ति को डिजिटल रूप से साक्षर बनाना आदि है।

हालाँकि, ये लाभ समग्र रूप से तभी मिल सकते हैं, जब बुनियादी अवसंरचना, प्रशिक्षण और डिजिटल पहुँच में समानता सुनिश्चित की जाए।

चुनौतियां और बाधाएं–हालांकि तकनीकीकरण की दिशा में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है, फिर भी अनेक बाधाएं हैं–

- **डिजिटल डिवाइड**–इंटरनेट और स्मार्टफोन का उपयोग शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में असमान है।
- **तकनीकी साक्षरता की कमी**–बुजुर्गों महिलाओं और अशिक्षित वर्गों में तकनीकी उपकरणों का प्रयोग सीमित है।
- **इंफ्रास्ट्रक्चर की समस्याएं**–बिजली नेटवर्क और तकनीकी सपोर्ट का अभाव आज भी कई गांवों को पीछे रखता है।
- **सांस्कृतिक अवरोध**–ग्रामीण समाज में नवाचार को अपनाने में संकोच और संदेह रहता है।

सुझाव

1–प्रत्येक पंचायत में डिजिटल सुविधा केंद्र की स्थापना की जाए।

2–स्थानीय भाषा में तकनीकी प्रशिक्षण और हाईस्पीड इंटरनेट उपलब्ध कराया जाए।

3–ग्रामीण महिलाओं और युवाओं को डिजिटल उद्यमिता में प्रशिक्षित किया जाए।

4–सार्वजनिक–निजी भागीदारी (PPP Model) को प्रोत्साहन दिया जाए।

5–ग्रामीण स्कूलों और स्वास्थ्य केंद्रों को डिजिटल रूप से सक्षम किया जाए।

निष्कर्ष–प्रौद्योगिकी नवाचार स्थायी आजीविका को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है। ग्रामीण निवासियों के दैनिक जीवन को आसान बनाने और ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच प्रौद्योगिकी अंतर को कम करने के लिए विभिन्न तकनीकों का विकास किया गया है। नवीन तकनीकीकरण ग्रामीण भारत के लिए विकास का एक नया अवसर प्रस्तुत करता है। यह न केवल आर्थिक रूप से बल्कि सामाजिक रूप से भी ग्रामीण समुदाय को सशक्त बना सकता है। हालांकि, यह आवश्यक है कि तकनीकको केवल उपकरण न समझा जाए, बल्कि उसे एक समावेशी सामाजिक परिवर्तन के माध्यम के रूप में अपनाया जाए। यदि सरकार, समाज और निजी क्षेत्र सामूहिक रूप से प्रयास करें, तो तकनीकीकरण गाँवों के लिए वरदान सिद्ध हो सकता हैं।

संदर्भ सूची (References)

- सिंह, अशोक, (दिसम्बर 2020), ''सरकार होती डिजिटल भारत की परिकल्पना'', कुरूक्षेत्र, वर्ष–67, अंक–2, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।
- कुमार, वीरेंद्र, (दिसम्बर 2020), ''किसानों के जीवन का अहम हिस्सा बनते डिजिटल टेक्नोलॉजी'', कुरूक्षेत्र, वर्ष–67, अंक–2, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।
- मिश्रा, कुमार, अरविंद, (जुलाई 2024), ''नवाचार से ग्रामीण विकास को गति'', कुरूक्षेत्र, वर्ष–70, अंक–9, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।
- कुरूक्षेत्र, दिसम्बर (2020), पेज नं0–51–52
- कुरूक्षेत्र, जुलाई, (2024), पेज नं0–11–15
- वही, पेज नं0 22–24
- चौरसिया, सोनम एवं सुनेजा, दीप्ती (2021). ग्रामीण सामाजिक परिवर्तन में जन संचार माध्यमों की भूमिका (जनपद अंबेडकरनगर के जहांगीर गंज, रामनगर, बसखारी विकास खण्ड के सन्दर्भ में).

International Journal of Advanced Social Sciences, 9(1),22-26 https%//www.ijassonlinein/Article.aspx?journal=International%20Journal%20of%20Advances%20in%20Social%20Sciences&PID=2021–9–1–4

- https://www.nature.com- 13.06.2025- 2:16pm
- https://www.linkedin.com
- Rural-gov.in
- Chakraborty, S. (2019)."Technology and Rural Employment in India." Journal of Rural Development, 38(2), 102–118.
- Prasad, R. (2020)."Digital Transformation in Rural India." Economic and Political Weekly, 55(10), 45–50.
- World Bank. (2021). Digital Opportunities for Rural India.
- National Informatics Centre. (2022).BharatNet Progress Report.
- Ministry of Rural Development. (2023). PMGDISHA Annual Report.
- Press Information Bureau. (2024)- eNAM: Connecting Farmers to Markets.

आवासीय विद्यालयों में कार्यरत महिला शिक्षिकाओं का व्यक्तिगत जीवन : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. कंचन
एसोसिएट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
स्वामी करपात्री जी महाराज राजकीय पीजी कॉलेज,रानीगंज प्रतापगढ़
kanchan542@gmail.com
अनामिका भारती
शोध छात्रा,समाजशास्त्र विभाग
प्रो.राजेन्द्र सिंह (रज्जुभईया), यूनिवर्सिटी ,नैनी, प्रयागराज
anamikabharati555@gmail.com

सारांश -
यह शोध पत्र आवासीय विद्यालयों में कार्यरत महिला शिक्षिकाओं की नौकरी का उनके निजी जीवन पर प्रभाव विषय पर आधारित है। इसमें यह विश्लेषण किया गया है कि किस प्रकार महिला शिक्षिकाओं को आवासीय विद्यालयों (कस्तूरबा गांधी विद्यालय) में नौकरी करते समय अपने पारिवारिक ,सामाजिक एवं मानसिक जीवन में विभिन्न प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

शोध में पाया गया है कि आवासीय विद्यालयों की प्रकृति के कारण महिला शिक्षिकाओं को अपने परिवार से दूर रहना पड़ता है जिससे पारिवारिक संबंधों में दूरी, बच्चों की देखभाल एवं परवरिश में कठिनाई और सामाजिक अलगाव जैसे प्रभाव देखने को मिलते हैं साथ ही मानसिक तनाव, कार्य जीवन संतुलन और अकेलापन भी उनके जीवन को प्रभावित करता है ।यह शोधपत्र भारत में आवासीय विद्यालयों में कार्यरत महिला शिक्षिकाओं के निजी जीवन पर उनके कार्यभार के प्रभाव का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द - *महिला शिक्षका, आवासीय विद्यालय, कार्य जीवन संतुलन, सामाजिक अलगाव।*

प्रस्तावना -

भारत में महिला शिक्षिकाएं शिक्षा व्यवस्था की रीढ़ है । यही कारण है कि आज समाज में महिलाओं की भूमिका निरंतर परिवर्तनशील रही है। शिक्षा के क्षेत्र में महिला शिक्षिकाओं की भागीदारी में निरंतर वृद्धि हो रही है ,विशेषकर आवासीय विद्यालयों में जहां शिक्षा केवल एक निर्धारित समय की गतिविधि नहीं बल्कि पूर्णकालिक दायित्व बन जाती है । महिला शिक्षिकाएं हॉस्टल अधीक्षक ,परामर्शदाता अनुशासन अधिकारी एवं अभिभावक की भी भूमिका निभाती है। जहां एक ओर यह भूमिका महिला शिक्षिकाओं को पेशेवर रूप से सशक्त बनाती हैं वहीं दूसरी ओर यह उनके निजी जीवन पर विशेष कर पारिवारिक और सामाजिक जीवन पर गहरा प्रभाव डालती है । भारत जैसे पारंपरिक समाज में महिलाओं की सामाजिक भूमिका अभी भी पारिवारिक ढांचे में केंद्रित है । एक महिला से अपेक्षा की जाती है कि वह एक आदर्श पत्नी, मां, बहू और बेटी की भूमिका निभाये जब ऐसी महिला आवासीय विद्यालय में पूर्णकालिक सेवाओं के लिए नियुक्त होती है, तब उनके लिए यह दोहरी भूमिका- "एक शिक्षिका और एक पारिवारिक स्तंभ " निभाना अत्यंत जटिल हो जाता है। क्योंकि महिला शिक्षिकाओं को विद्यालय में ही रहकर शिक्षा पठन-पाठन का कार्य करना पड़ता है। वह केवल तीज त्यौहार के अवकाश पर ही घर जा सकती है या सरकार द्वारा निर्धारित अवकाश लेकर। इस शोध पत्र के माध्यम से हम यह विश्लेषण करने का प्रयास करते हैं कि किस प्रकार आवासीय विद्यालयों में कार्यरत महिला शिक्षिकाओं की नौकरी उनके व्यक्तिगत जीवन के विभिन्न पहलुओं - जैसे पारिवारिक संबंध, मातृत्व, मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक संबंध एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता ,को प्रभावित करती है यह अध्ययन इस दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण है कि यह नीति- निर्माताओ , विद्यालय प्रशासन और समाज को यह

समझने में सहायता करता है कि महिला शिक्षिकाओं को केवल एक कर्मचारी ना मान कर एक संवेदनशील सामाजिक इकाई के रूप में देखा जाना चाहिए। जिसकी अपनी भावनात्मक, मानसिक और सामाजिक ज़रूरतें हैं।

इस अध्ययन में यह स्पष्ट हुआ है कि इस प्रकार की बहु आयामी जिम्मेदारियां महिला शिक्षिकाओं को व्यक्तिगत जीवन में अत्यधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है । शिक्षिकाओं के लंबे कार्य अवधि , संस्थागत नियमों और पारिवारिक दूरी के कारण उनके मानसिक स्वास्थ्य , सामाजिक जीवन तथा पारिवारिक संतुलन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

शोध की कार्यविधि -

प्रस्तुत अध्ययन उत्तर प्रदेश राज्य के प्रयागराज जिले के अंतर्गत चाका ब्लाक में स्थापित (**कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय**) में किया गया है। प्राथमिक आंकड़ों का एकत्रीकरण सर्वेक्षण एवं साक्षात्कार विधि द्वारा किया गया है।

यह अध्ययन गुणात्मक पद्धति पर आधारित है, जिसमें 15 शिक्षिकाओं से साक्षात्कार एवं सर्वेक्षण के आधार पर प्राथमिक आंकड़े एकत्र किए गए हैं ।अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष इस ओर संकेत करते हैं कि पेशेवर प्रतिबद्धताओं और निजी जीवन में संतुलन स्थापित करना एक बड़ी चुनौती बन चुका है। शोध अंततः कुछ ठोस नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करता है।

कस्तूरबा गांधी विद्यालय संक्षिप्त परिचय

कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना की शुरुआत भारत सरकार द्वारा वर्ष 2004 में की गई थी। यह योजना उन बालिकाओं के लिए है जो अनुसूचित जाति, जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक या गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों से संबंध रखती हैं। इस योजना के अंतर्गत कक्षा 6 से 8 तक की लड़कियों के लिए आवासीय विद्यालय स्थापित किए जाते हैं, जहाँ उन्हें निशुल्क शिक्षा, आवास, भोजन, पोशाक और अन्य मूलभूत सुविधाएँ दी जाती हैं। कस्तूरबा गांधी विद्यालय की योजना 28 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में लागू है।कई राज्यों में कस्तूरबा गांधी विद्यालय की संख्या 100 से अधिक है। वर्तमान में प्रयागराज जिले में 20 कस्तूरबा गांधी आवासीय बालिका विद्यालय हैं । 20 में से 9 विद्यालयों को अब कक्षा 9 से 12 तक की पढ़ाई शुरू करने के लिए शामिल किया गया है।सरकार द्वारा यह कदम इसलिए उठाया गया ताकि जो बालिकाएं किसी भी कारणवश कक्षा 8 के बाद पढ़ाई आगे नहीं कर पा रही थी उन बालिकाओं को अब कहीं और भटकना न पड़े वह कक्षा 12 तक पढ़ाई करने के बाद अपने भविष्य को उज्जवल बना सके और आगे की पढ़ाई के लिए अग्रसर रहे। आज भी ग्रामीण इलाके के अनुसूचित जाति जनजाति एवं पिछड़ी जाति के लोग गरीबी एवं अन्य सामाजिक दबाव के कारण अपनी बेटियों को अत्यधिक नहीं पढ़ पाते। सर्वे के दौरान माता-पिता से पूछे जाने पर उन्होंने बताया कि आजकल समाज में अपराधिक गतिविधियां बढ़ती जा रही है हमारी बेटियां कहीं पर भी सुरक्षित नहीं है । यह सुनकर की कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय अब कक्षा 12 तक संचालित होगा वहां पढ़ने वाली बालिकाओं के माता-पिता बहुत खुश हुए क्योंकि अब वह अपनी बेटियों को चिंता मुक्त होकर पढ़ने के लिए भेज सकते हैं। सरकार का यह कार्य बहुत ही सराहनीय है।

प्रमुख विशेषताएँ:

- यह एक आवासीय विद्यालय योजना है, जिसमें छात्राओं को पढ़ाई के साथ-साथ रहने, खाने-पीने और अन्य आवश्यक वस्तुएँ मुफ्त में उपलब्ध कराई जाती हैं।
- छात्राओं को नियमित छात्रवृत्ति भी प्रदान की जाती है।
- विद्यालयों में महिला शिक्षिकाओं की नियुक्ति होती है ताकि छात्राएँ एक सुरक्षित वातावरण में शिक्षा प्राप्त कर सकें।
- इसमें खेलकूद, सांस्कृतिक कार्यक्रम, जीवन कौशल और डिजिटल शिक्षा पर भी विशेष ध्यान दिया जाता है।
- बालिका विद्यालय होने के कारण यहां सभी स्टाफ महिला ही नियुक्त की जाती हैं।
- वार्डन, शिक्षिका, साफ सफाई एवं खाना बनाने के लिए भी महिलाओ का चयन किया जाता है ताकि वह भयमुक्त वातावरण में रह सकें।

- कस्तूरबा गांधी विद्यालय योजना का मुख्य उद्देश्य शिक्षा में लैंगिक अंतर को काम करना और बालिकाओं को सामान उच्च शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्रदान करना है।
- इस योजना के अंतर्गत उन बालिकाओं को सशक्त बनाने का कार्य किया जा रहा है जो शिक्षा तक पहुंचने से वंचित रह जाती है। यहां उन्हें कई आवश्यक कौशल प्रदान किए जाते हैं जिससे वह आत्मनिर्भर बन सकें। इसी के अंतर्गत रानी लक्ष्मीबाई कार्यक्रम चलाया जा रहा है इस कार्यक्रम में बालिकाओं को जूडो - कराटे सिखाया जाता है जिससे वह समय आने पर किसी के सामने कमजोर ना पढ़ सके। वे डटकर उनको मुंह तोड़ जवाब दे।
- कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय में बालिकाओं को रहने के लिए पढ़ने के लिए साफ-सुथरे आरामदायक कमरों की व्यवस्था की गई है। एवं उनके स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए पौष्टिक भोजन ,फल ,दूध आदि का भी इंतजाम रहता है।
- बुनियादी शिक्षा के अंतर्गत खेल ,कला संगीत ,कंप्यूटर लैब आदि अन्य गतिविधियों में भाग लेने का अवसर प्राप्त होता है।
- वहां पर रह रही सभी छात्राओं का बीच-बीच में ब्लॉक चिकित्सालय द्वारा स्वास्थ्य परीक्षण भी किया जाता है।

व्यक्तिगत जीवन में प्रभाव

पारिवारिक जीवन पर प्रभाव -

शोध के दौरान यह पाया गया कि लगभग 65% महिला शिक्षिकाओं ने बताया कि उन्हें आवासीय विद्यालय मैं कार्यरत होने के कारण विद्यालय परिसर में ही रहना पड़ता है जिस कारण वह अपने परिवार पति ,बच्चों ,माता-पिता से अलग रहती हैं। इसे पारिवारिक संबंधों में दूरी, भावनात्मक खालीपन और अपनों के बीच संवाद में कमी आती है। वह चाह कर भी जरूरत पड़ने पर अपनों का साथ नहीं दे सकती है और ना ही ले सकती है। 35% शिक्षिकाएं ऐसी भी हैं जो अपने छोटे बच्चों की परवरिश में प्रत्यक्ष रूप से योगदान नहीं दे पा रही है उन्हें पूर्ण रूप से अपने माता-पिता पति पर निर्भर रहना पड़ता है। नव विवाहित शिक्षिकाओं के लिए यह एक बड़ी चुनौती होती है जब वह अपना समय ससुराल एवं पति को नहीं दे पाती जिस कारण पारिवारिक विवादों की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। स्वयं के बच्चों की देखभाल न कर पाने के कारण उन्हें कहीं ना कहीं उनके मातृत्व पर भी प्रश्न उठता नजर आता है जिससे वह सदैव कुंठित रहती हैं।

सामाजिक जीवन पर प्रभाव -

आवासीय विद्यालय में कार्यरत 54% महिला शिक्षिकाएं सामाजिक आयोजनों जैसे रिश्तेदारों के यहां शादी, धार्मिक अनुष्ठान ,जन्मदिन आदि अन्य आयोजनों में भाग नहीं ले पाती जिससे वे अपने सगे संबंधियों से धीरे-धीरे दूर हो जाती है। कई शिक्षिकाओं ने यह अनुभव भी साझा की कार्यक्रमों में बुलाए जाने पर न जाने के कारण उनकी अनुपस्थिति को "उदासीनता या अहंकार" के रूप में देखा जाता है जिससे समाज में उनकी छवि प्रभावित होती है । कुछ शिक्षिकाओं ने कहां की वे धीरे-धीरे खुद को सामाजिक रूप से अकेलापन और अलगाव महसूस करने लगी है।

मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य पर प्रभाव -

परिवार से दूर रहने के कारण 45% महिला शिक्षिकाओं ने मानसिक तनाव अनिद्रा चिड़चिड़ा पान और थकान जैसी समस्याएं बताईं अधिकांश शिक्षिकाओं ने यह भी स्वीकार किया कि लगातार ड्यूटी और छात्रों के साथ रहने में उन्हें स्वयं के लिए भी समय नहीं मिल पाता । अवकाश सीमित होने के कारण विश्राम और सामाजिक मेल-जल की संभावनाएं कम होती जा रही हैं समय न मिल पाने के कारण उनके स्वस्थ जीवन शैली में भी कमी देखी गई । व्यायाम, मनोविनोद एवं व्यक्तिगत रुचियां के लिए समय न के बराबर पाया गया। यही कारण है कि वह चाह कर भी अपना सत प्रतिशत विद्यार्थियों को देने में असमर्थ पाई गई।

व्यक्तिगत स्वतंत्रता और समय प्रबंधन -

60% शिक्षिकाएं मानती है कि आवासीय वातावरण में समय का अपना नियंत्रण नहीं होता ना ही दिन निश्चित ना रात। साधारण विद्यालय में निश्चित समय सारणी के अनुसार समय-समय पर कक्षाएं चलती हैं और समय से विद्यालय की छुट्टी हो जाया करती है। परंतु यहां सभी विद्यार्थियों का ठहराव होता है जिस कारण वह निश्चित अवधि से ज्यादा कक्षाओं का संचालन कर लिया करते हैं
कई शिक्षिकाओं ने कहा कि उन्हें अपने जीवन के निजी कार्य जैसे बैंक, नियमित स्वास्थ्य जांच, पारिवारिक जिम्मेदारियां पूरी करने का समय ही नहीं मिल पाता। कुछ शिक्षिकाओं ने आवासीय विद्यालय में कार्य करने को व्यक्तिगत विकास में रुकावट जैसी बड़ी टिप्पणी देते हुए कहा कि वह केवल दूसरे की सेवा में ही समय दे पा रही हैं।

सकारात्मक अनुभव -

शोध के दौरान इन सबसे अलग सकारात्मक पहलू भी पाए गए। कुछ शिक्षिकाओं ने इसे एक साधना की तरह माना और कहा कि विद्यार्थियों के जीवन को सवर्ण और उत्तम कोटि का बनाने में उन्हें मानसिक संतोष अनुभव प्राप्त होता है। भले ही विद्यार्थी एवं शिक्षक अपने परिवार से दूर रहते हैं लेकिन वह सब एक साथ मिलजुल के साथ रहकर अपनत्व का परिचय देते हैं। जो दोनों को अपनों की दूरियों को काम करने की संजीवनी बूटी का काम करती है।

25% शिक्षिकाओं ने बताया कि आवासीय विद्यालयों में कार्य करने से उनमें अनुशासन, कौशल प्रबंधन एवं धैर्य का विकास हुआ है। कुछ शिक्षिकाओं ने इस कार्य को आत्मनिर्भर, सुरक्षित वातावरण और सामाजिक योगदान का माध्यम माना वह सम्मान पूर्वक अपने परिवार को आर्थिक रूप से मजबूत बनाने में सहयोग कर पा रही हैं। इस पर एक सटीक पंक्ति फिट बैठती है
"कुछ पाने के लिए कुछ खोना भी पड़ता है"।

सुझाव -

- आवासीय विद्यालयों में शिक्षिकाओं की शिफ्ट आधारित ड्यूटी लगाई जानी चाहिए ताकि उन्हें पारिवारिक एवं व्यक्तिगत जीवन के लिए समय मिल सके।
- प्रत्येक आवासीय विद्यालयों में मानसिक स्वास्थ्य विशेषज्ञ की नियुक्ति की जानी चाहिए ताकि समय-समय पर शिक्षिकाओं एवं विद्यार्थियों की मानसिक स्थिति को समझा जा सके। एवं उनकी काउंसलिंग की जा सके।
- सबसे महत्वपूर्ण ध्यान देने योग्य यह है कि विद्यालय परिसर में ही पारिवारिक आवास की सुविधा प्रदान करना चाहिए जिससे विवाहित शिक्षिकाएं परिवार के साथ रह सके इससे उन्हें अपने बच्चों की परवरिश पति-पत्नी संबंध और पारिवारिक संतुलन बनाए रखने में मदद मिलेगी।
- एक गेस्ट रूम का निर्माण कराया जाना चाहिए। जहां परिवार के सदस्य बीच-बीच में आकर अपनों से मिल सके।
- पारिवारिक दूरियों को कम करने के लिए स्थानीय सामाजिक आयोजनों, मेलो, महिला समूह और सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेने के लिए महिला शिक्षिकाओं को प्रेरित करना चाहिए जैसे विद्यालय स्तर पर फैमिली डे जैसे आयोजन किया जा सकता है इस कार्यक्रम में छात्र एवं शिक्षिका दोनों ही अपने परिवार के सदस्यों को बुला सके।
- अवकाश नीति एवं समय प्रबंधन में सुधार कर शिक्षिकाओं को नियमित अवकाश और आपातकालीन छुट्टियां जैसे मेडिकल लीव, बच्चों की देखभाल हेतु (C.C.L) एवं प्रसूति अवकाश मिल सके। अवकाश के दिन कोई भी बाध्यकारी कार्य ना थोपा जाए।
- शिक्षा विभाग और नीति निर्माता को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि महिला शिक्षिकाओं की मानसिक, सामाजिक और पारिवारिक आवश्यकताओं को समझते हुए आवासीय विद्यालयों की नीतियों को थोड़ा संशोधित कर लचीला बनाया जाए।
- विद्यालय परिसर में 24 घंटे रहकर पठन-पाठन का कार्य करना अत्यधिक कठिन कार्य है। इस कार्य के लिए उन्हें ब्लॉक स्तरीय कार्यक्रम में सम्मानित किया जाना चाहिए जिससे उनका मनोबल बढ़े।

- वे महिला शिक्षिकाएं जो विद्यालय में रहकर पठन-पाठन का कार्य करती हैं उनको मासिक मानदेय 22000 से 25000 रुपए के बीच में दिया जाता है एवं वह शिक्षिकाएं जो पार्ट टाइम आकर पढ़ाती हैं उन्हें 10000 रुपए मासिक भत्ते के रूप में दिया जाता है। सरकार को कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय में कार्यरत महिला शिक्षिकाओं का मानदेय बढ़ा कर एक संतोष जनक मानदेय देना चाहिए। जिससे वह सुचारू रूप से अपने परिवार के लोगों का भली भांति भरण पोषण कर सकें।

निष्कर्ष -

सर्वे के अंतर्गत यह पाया गया कि आवासीय विद्यालय में कार्यरत महिला शिक्षिकाओं को विद्यालय में ही रहकर पठन-पाठन का कार्य करना अत्यधिक चुनौती पूर्ण है। क्योंकि इस नौकरी में जब तक वह रिटायर नहीं होते तब तक समर्पणपूर्ण जीवनशैली को अपनाना पड़ता है। वह पूरे वर्ष में 365 दिन में से कुछ दिन जो अवकाश के होते हैं उन्ही में वे अपने परिवार को समय दे पाती हैं । इस समय सारणी से वह पूरी तरह परिवार से कट जाती है। इसलिए सरकार को शिफ्ट वाइस ड्यूटी का निर्माण करना चाहिए। 12 घंटे एक शिक्षिका एवं 12 घंटे दूसरी शिक्षिका दिन और रात के हिसाब से ड्यूटी व्यवस्थित करनी चाहिए। विद्यालय परिसर में ही परिवार के रहने की व्यवस्था भी करनी चाहिए ताकि महिला शिक्षिकाएं मानसिक, भावनात्मक एवं पारिवारिक रूप से सशक्त हो सके। जिससे वह तनाव मुक्त होकर विद्यार्थियों को अपना सत प्रतिशत दे सकें। जिससे शिक्षा व्यवस्था उच्च कोटी की हो जाए। सरकार को इस नीतिव्यवस्था को संशोधित करके थोड़ा और लचीलापन लाने की आवश्यकता है।

सन्दर्भ सूची -

मिश्रा, सुरभि (2021)। आवासीय विद्यालयों में शिक्षकों की कार्य स्थितियाँ, भारतीय शैक्षिक शोध पत्रिका, खंड 15(3), पृष्ठ 22-30।

कुमार, दिनेश (2020)। नारी और शिक्षा: समस्याएँ और समाधान, प्रयागराज: ओमेगा पब्लिकेशन।

International Journal of Gender Studies in Education (2021). “Residential Teaching and Family Imbalance among Female Educators”. Vol. 9(4), pp. 215–232.

UNESCO (2019). Teaching and Learning Conditions in Residential Schools in South Asia. Paris: UNESCO Publishing.

World Bank Report (2020). Women in Education Workforce: Balancing Work and Family. Washington D.C.

https://www.education.gov.in/ — भारत सरकार की आधिकारिक शिक्षा पोर्टल, आवासीय विद्यालयों की नीतियाँ एवं दिशा-निर्देश।

https://researchgate.net/ — शोध-पत्रों की खोज हेतु उपयोगी स्रोत, विशेषकर महिला शिक्षकों पर वैश्विक शोध।

दैनिक अखबार , पत्रिकाएं आदि।

युवाओं में नशे की समस्या : एक वैश्विक परिदृश्य

शिवम सिंह
शोध छात्र, समाजशास्त्र विभाग
महाराज बलवन्त सिंह पी०जी०कॉलेज
गंगापुर वाराणसी (उ०प्र०)(INDIA)
Email Id-78shivamsingh@gmail.com

सारांश

युवाओं में नशाखोरी की प्रवृति एक बृहद समस्या है जो समाज के सभी पहलुओ को प्रभावित कर रही है। हाल के दिनों में इस समस्या की व्यापकता और विशेष रूप से युवाओं में नशीली दवाओं के उपयोग में बदलते रुझान के कारण इस पर अधिक ध्यान दिया गया है। नशीली दवाओं ने अपनी खुद की उप-संस्कृति को जन्म देना शुरू कर दिया है, जिसके अपने मानदंड, मूल्य, व्यवहार और प्रतीक हैं। यह समस्या व्यक्ति के स्वास्थ्य और व्यक्ति, परिवार, समुदाय और समाज की खुशी को खराब करती है। आज दुनिया का कोई भी हिस्सा ऐसा नहीं है जो नशीली दवाओं की तस्करी और नशीली दवाओं की लत के अभिशाप से मुक्त हो। नशीली दवाओं की लत किसी एक व्यक्ति या क्षेत्र तक सीमित नहीं है। इसकी संख्या अलग-अलग हो सकती है और किसी भी उम्र, लिंग, जातीयता, सामाजिक वर्ग या धर्म में पाई जा सकती है। वास्तव में, नशीली दवाओं की लत दुनिया भर में हर देश में फैल चुकी है। साथियों का दबाव, लोगों की उच्च आकांक्षाएं, बेरोजगारी और बदलती सामाजिक व्यवस्था जैसे कई कारक इस विशेष खतरे को लगातार बढ़ा रहे हैं। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य नशीली दवाओं की लत की समस्या के पीछे के विशिष्ट कारणों एवं परिणामों का अध्ययन करना है जो युवाओं को शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक और सामाजिक रूप से प्रभावित करता है तथा कुछ संभावित समाधान भी बताए गए हैं जिन्हें परिवार, समुदाय, मित्र और समाज द्वारा इस समस्या के उन्मूलन के लिए अपनाया जा सकता है।

मुख्य शब्द :- नशीली दवाओं की लत, नशीली दवाओं का दुरुपयोग, नशीली दवाओं का उपयोग , नशीली दवाओं के प्रभाव |

प्रस्तावना

सम्पूर्ण विश्व में नशीली दवाओं और पदार्थों का दुरुपयोग युवाओं के बीच एक तेजी से बढ़ती समस्या बन गई है। इस वैचारिक लेख का उद्देश्य नशीली दवाओं/पदार्थों के दुरुपयोग में योगदान करने वाले कारकों, युवाओं पर नशीली दवाओं के दुरुपयोग के प्रभाव, युवाओं में नशीली पदार्थों के दुरुपयोग को रोकने के तरीकों और युवाओं में आध्यात्मिकता के महत्व पर चर्चा करना है। नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग से तात्पर्य कुछ रसायनों या पदार्थों के अनियंत्रित, अत्यधिक या अवैध उपयोग से है जो किसी व्यक्ति की मानसिक, भावनात्मक या शारीरिक स्थिति को बदल सकते हैं। अनेकों कारक युवाओं के लिए नशीली दवाओं/पदार्थों के दुरुपयोग में शामिल होना आसान बनाते हैं, जैसे कि दोस्तों से आसानी से प्रभावित होना, तनाव या अवसाद का अनुभव करना, खराब पारिवारिक गतिशीलता होना, सामाजिक आर्थिक समर्थन की कमी और न्यूरोबायोलॉजिकल अंतर होना है। नशीली दवाओं/पदार्थों का दुरुपयोग स्वास्थ्य, सामाजिक और आर्थिक कल्याण के मामले में युवाओं को प्रभावित करता है। नशीली दवाओं/पदार्थों के दुरुपयोग के बारे में जागरूकता के बारे में शिक्षा को बढ़ावा देकर, आध्यात्मिकता जैसे सुरक्षात्मक कारकों को बढ़ावा देकर और नशीली पदार्थों के दुरुपयोग का समर्थन न करने वाले सकारात्मक वातावरण को बनाने में माता-पिता और परिवारों की भूमिका को पहचानकर रोकथाम में समग्र दृष्टिकोण के महत्व पर जोर दिया जाना चाहिए।

विश्व में नशीली दवाओं के दुरुपयोग की समस्या, विशेष रूप से युवाओं के बीच, एक महत्वपूर्ण मुद्दा है जो हमेशा कई लोगों, विशेष रूप से अधिकारियों का ध्यान आकर्षित करता है। नशीली पदार्थों के दुरुपयोग को विभिन्न सामाजिक मुद्दों और

समस्याओं जैसे अपराध, बाल शोषण, मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं और घातक चोटों से भी जोड़ा गया है। **मलेशिया** नशीली दवाओं को देश के नंबर एक दुश्मन के रूप में देखता है, जो राष्ट्रीय विकास में बाधा उत्पन्न करता है। *मलय साहित्य संदर्भ केंद्र* (2017) के अनुसार, दवाओं को दवाओं के लिए उपयोग किए जाने वाले पदार्थों के रूप में परिभाषित किया जाता है। *नेशनल एंटी-ड्रग एजेंसी* (AADK) (2018) का कहना है कि ड्रग्स साइकोएक्टिव रसायन हैं जिनका उपयोग चिकित्सा उद्देश्यों के लिए नहीं किया जाता है, जिनका उपयोग शारीरिक और मनोवैज्ञानिक निर्भरता के कारण निषिद्ध है, साथ ही सहनशीलता जो स्वास्थ्य, स्वयं, परिवार और समाज पर प्रतिकूल प्रभाव के साथ बढ़ती है। पदार्थ की लत के संदर्भ में, *विश्व स्वास्थ्य संगठन* (WHO) अब नशीली दवाओं के दुरुपयोग शब्द का उपयोग नहीं करता है, बल्कि पदार्थ के दुरुपयोग का उपयोग करता है, जो पदार्थों के दायरे और उपयोगकर्ताओं को उनके नुकसान की एक व्यापक परिभाषा प्रदान करता है (विश्व स्वास्थ्य संगठन, 2016)। इसके बाद, वज़ीर एट अल (2019) इस्लाम के संदर्भ में ड्रग शब्द पर चर्चा करते हैं, जिसे कुरान में पाए जाने वाले ख़ब्र शब्द के बराबर माना जा सकता है। इसलिए, ड्रग्स को सभी नशीले और मतिभ्रम पैदा करने वाले पदार्थों के रूप में परिभाषित किया जाता है जो लत, निर्भरता और व्यवहार में बदलाव का कारण बनते हैं।

ड्रग्स एंड क्राइम पर संयुक्त राष्ट्र (यूएनओडीसी) ने 2018 में विश्व ड्रग रिपोर्ट के आंकड़े जारी किए हैं, जिसमें अनुमान लगाया गया है कि 2018 में 15-64 वर्ष की आयु के दुनिया की आबादी के 269 मिलियन या 5.4 प्रतिशत लोगों ने ड्रग्स का इस्तेमाल किया (ड्रग्स एंड क्राइम पर संयुक्त राष्ट्र (यूएनओडीसी), 2020)। 11.0 प्रतिशत की यह अनुमानित वृद्धि 2030 में कुल विश्व जनसंख्या में अनुमानित वृद्धि के अनुरूप देखी जा सकती है, जो 299 मिलियन लोग हैं (ड्रग्स एंड क्राइम पर संयुक्त राष्ट्र (यूएनओडीसी), 2020)। इस बीच, 2020 में नेशनल एंटी-ड्रग एजेंसी (एएडीके) द्वारा जारी मलेशिया में नशीली दवाओं के दुरुपयोग के आंकड़े बताते हैं कि पिछले वर्ष की तुलना में 9.8 प्रतिशत की कमी के साथ कुल 128,325 लोगों की पहचान नशीली दवाओं के दुरुपयोग में शामिल के रूप में की गई है यह कमी महामारी के प्रभाव के कारण है, जहाँ राष्ट्रीय मादक पदार्थ निरोधक एजेंसी (2020) ने कहा कि मूवमेंट कंट्रोल ऑर्डर (एमसीओ) के कार्यान्वयन के दौरान, किए गए ऑपरेशन आम तौर पर छोटे पैमाने पर थे और एक ऑपरेशन में की गई गिरफ़्तारियाँ भी कम मात्रा में थीं। वास्तव में, प्रवर्तन अभियान सार्वजनिक शिकायतों के आधार पर पता लगाने की कार्रवाइयों पर अधिक केंद्रित हैं।

राष्ट्रीय नशा निरोधक एजेंसी (2020) ने 19-39 वर्ष की आयु के युवाओं में नशीले पदार्थों के सेवन की संख्या भी बताई है, जो कि नशीले पदार्थों के सेवन की गतिविधियों में सबसे अधिक श्रेणी शामिल है, जो 2019 की तुलना में 13.8 प्रतिशत की कमी के साथ 83,401 लोग या 65.0 प्रतिशत है। यह बहुत चिंताजनक है क्योंकि इसका देश पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। कई युवा नशीली दवाओं के सेवन में शामिल हैं, जिसके परिणामस्वरूप देश में मानव संसाधनों की कमी है जो भविष्य में देश का नेतृत्व करने या देश के लिए रुचि के व्यक्ति बनने की क्षमता रखते हैं। यही कारण है कि शोधकर्ता इस अध्ययन पर जोर देते हैं क्योंकि युवाओं में नशीली दवाओं के उपयोग का प्रचलन वैश्विक स्तर पर बढ़ रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) (2023) के अध्ययन से पता चलता है कि नशीली दवाओं के उपयोग की प्रारंभिक दीक्षा दीर्घकालिक लत और अन्य प्रतिकूल परिणामों को जन्म दे सकती है उदाहरण के लिए, विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) (2023) भी इस बात पर प्रकाश डालता है कि किशोरों में मादक द्रव्यों के सेवन से दुर्घटनाएं और चोट लगने जैसे तत्काल स्वास्थ्य जोखिम हो सकते हैं, और मानसिक स्वास्थ्य विकार और दीर्घकालिक रोग जैसे परिणाम हो सकते हैं।

बहर (2015) ने कहा कि नशीली दवाओं का दुरुपयोग न केवल युवाओं को प्रभावित करता है, बल्कि युवाओं के सामाजिक कल्याण जैसे कि परिवारों और समुदायों को भी प्रभावित करता है। यह पारिवारिक तनाव, टूटे हुए रिश्तों और अपराध दर में वृद्धि का कारण बन सकता है, जो समाज के सामाजिक और आर्थिक ताने-बाने को नुकसान पहुंचाता है।

नशीली दवाओं के दुरुपयोग में युवाओं की संलिप्तता का देश पर बहुत बड़ा आर्थिक प्रभाव पड़ता है। स्वास्थ्य देखभाल लागत, उत्पादकता में कमी, और कानून प्रवर्तन पर बढ़ता खर्च सरकारों और समुदायों द्वारा वहन किए जाने वाले आर्थिक बोझों में से हैं (कीज़, 2015)। शोधकर्ता का मानना है कि जो आर्थिक बोझ होता है, वह केवल शामिल युवाओं को बहाल करने और उनका इलाज करने के लिए होता है क्योंकि उन्हें विश्वास है कि युवा ठीक हो जाएंगे और देश का भविष्य हासिल करेंगे।

रोग नियंत्रण एवं रोकथाम केंद्र (2023) का कहना है कि नशीली दवाओं और अवैध पदार्थों के दुरुपयोग से युवाओं के स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। नशीली दवाओं के दुरुपयोग से युवाओं में कई तरह की शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य समस्याएं हो सकती हैं, जैसे एचआईवी/एड्स और हेपेटाइटिस जैसी संक्रामक बीमारियाँ, अवसाद और चिंता जैसे मानसिक विकार, साथ ही ओवरडोज़ के कारण मृत्यु भी हो सकती है। इसलिए, शोधकर्ताओं का मानना है कि इस अध्ययन का अध्ययन एक दूरदर्शी युवा समूह बनाने के लिए किया जाना चाहिए।

इनमें मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय कारक शामिल हैं जो अधिक सटीक और प्रभावी हस्तक्षेपों को डिजाइन करने में मदद कर सकते हैं। रोकथाम कार्यक्रमों के साथ इन जोखिमों पर काबू पाने से पहले नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग के कारकों या कारणों को समझना सबसे पहले पता लगाया जाना चाहिए। शोधकर्ताओं को विश्वास है कि नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग में योगदान देने वाले कारकों को समझने से रोकथाम कार्यक्रम चिकित्सकों को अधिक प्रभावी रोकथाम कार्यक्रम तैयार करने में मदद मिल सकती है। ***नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ ड्रग एब्यूज (NIDA) (2020) के अनुसार***, नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग के कारणों की पहचान करना रोकथाम कार्यक्रमों के संचालन के लिए बुनियादी सिद्धांतों में से एक है।

***डोजन और शीया* (2020)** इस बात का समर्थन करते हैं कि एक समग्र दृष्टिकोण अपनाया जा सकता है जहाँ व्यापक शोध मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और पर्यावरणीय कारकों सहित नशीली दवाओं के दुरुपयोग के विभिन्न पहलुओं की प्रकृति को प्रकट कर सकता है। यह ज्ञान एक समग्र दृष्टिकोण बनाने के लिए आवश्यक है जो लक्षणों का इलाज करने के बजाय मादक द्रव्यों के सेवन के मूल कारणों को संबोधित करता है।

शैक्षिक कार्यक्रमों, सामुदायिक सहायता, सरकारी नीतियों और अन्य पहलों की प्रभावशीलता पर अध्ययन शामिल हैं जो युवाओं में नशीली दवाओं के दुरुपयोग की दरों को कम करने में मदद कर सकते हैं और अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावी रोकथाम के तरीके विकसित कर सकते हैं। *अब्दुल्ला एट अल* (2020) के आधार पर, प्रभावी रोकथाम के तरीके विकसित करने में, लक्षित हस्तक्षेप युवाओं में नशीली दवाओं के दुरुपयोग में योगदान देने वाले विशिष्ट कारकों को समझकर महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उदाहरण के लिए, हस्तक्षेपों को साथियों के दबाव को दूर करने, पारिवारिक समर्थन बढ़ाने और युवाओं में लचीलापन और मुकाबला करने के कौशल को बढ़ावा देने के लिए डिज़ाइन किया जा सकता है।

इस विषय का अध्ययन युवाओं के लिए महत्वपूर्ण या लाभकारी है। युवाओं के लिए, नशीली दवाओं के दुरुपयोग और उसके परिणामों को समझना उनके स्वास्थ्य और भविष्य के बारे में स्वस्थ विकल्प और सूचित निर्णय लेने के लिए महत्वपूर्ण है। *थिडियन* (2023) ने कहा कि यह उन कार्यक्रमों में देखा जा सकता है जो युवाओं को नशीली दवाओं के उपयोग के जोखिमों और परिणामों के बारे में शिक्षित करते हैं, जो प्रयासों और दुरुपयोग को कम करने के लिए दिखाए गए हैं। यह अध्ययन माता-पिता और परिवारों को भी लाभान्वित करता है क्योंकि वे युवाओं में नशीली दवाओं के दुरुपयोग को रोकने और उससे निपटने में सबसे आगे हैं। मादक द्रव्यों के सेवन के कारकों और प्रभावों को समझना उनके लिए मुद्दों की शुरुआती पहचान करने और मदद लेने के लिए महत्वपूर्ण है (डंकन, 2018)।

अलहम्मद एट अल (2022) ने आगे कहा कि समुदाय के नेता नशीली दवाओं के उपयोग को हतोत्साहित करने वाले सहायक वातावरण बनाने के लिए स्थानीय संसाधनों को जुटा सकते हैं। इसमें सामुदायिक कार्यक्रम, सहायता समूह और आउटरीच कार्यक्रम

आयोजित करना शामिल है जो युवाओं को सार्थक गतिविधियों में शिक्षित और शामिल करते हैं। सफल सामुदायिक हस्तक्षेपों में अक्सर स्कूलों, अभिभावकों, कानून प्रवर्तन और स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं के बीच सहयोग शामिल होता है।

युवाओं में नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन के कारक :-

युवाओं में नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन की समस्या दुनिया भर के समुदायों के लिए चिंता का विषय बनी हुई है। नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन पर अंकुश लगाने के व्यापक प्रयासों के बावजूद, आँकड़े युवाओं में नशीली दवाओं की लत की प्रवृत्ति को जारी रखते हैं। इस मुद्दे को प्रभावी ढंग से संबोधित करने के लिए, युवाओं को नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन की ओर ले जाने वाले विभिन्न कारकों को समझना महत्वपूर्ण है। नवीनतम शोध और अंतर्दृष्टि की जांच करके, इन कारकों के बारे में गहरी समझ हासिल की जा सकती है और लक्षित रोकथाम तैयार की जा सकती है। युवाओं को नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन की ओर ले जाने वाले निम्नांकित कारक हैं :-

1. सामाजिक कारक
2. मनोवैज्ञानिक कारक
3. पारिवारिक कारक
4. सामाजिक कारक
5. आनुवंशिक कारक

सामाजिक कारक :-

केली और व्हाइट (2022) द्वारा हाल ही में किए गए शोध में कहा गया है कि सामाजिक प्रभाव जैसे कि साथियों का दबाव जो सामाजिक मंडलियों में नशीली दवाओं और पदार्थों के उपयोग के लिए जोखिम प्रदान करता है, युवाओं में नशीली दवाओं के प्रयोग को काफी हद तक प्रभावित करता है। मलेशिया में नशीली दवाओं की भागीदारी कारकों के आँकड़ों के आधार पर, दोस्तों का प्रभाव अन्य कारकों की तुलना में सबसे अधिक कारक है, जिसके कुल 8,059 मामले हैं, जबकि दूसरा सबसे बड़ा कारक जिज्ञासा है, जिसके कुल 4,432 मामले हैं (ड्रग इंफॉर्मेशन, 2021)।

मनोवैज्ञानिक कारक :- मनोवैज्ञानिक कारक भी पीछे नहीं छूटते जैसे कि चिंता, अवसाद, आघात और मानसिक स्वास्थ्य विकार जो युवाओं को नशीली दवाओं की लत के प्रति संवेदनशील बनाते हैं।

क्रोन और डाहल (2022) ने बताया कि कम आत्मसम्मान और आत्म-प्रभावकारिता वाले युवा नकारात्मक भावनाओं से निपटने, अपर्याप्तता की भावनाओं को कम करने और अपने आत्मसम्मान और आत्मविश्वास की भावना को बढ़ाने के लिए दवाओं और पदार्थों का सहारा ले सकते हैं। पदार्थ का उपयोग मनोवैज्ञानिक संकट से अस्थायी राहत प्रदान कर सकता है, जिससे अनुपयुक्त मुकाबला करने की रणनीतियों और निर्भरता के पैटर्न को मजबूत किया जा सकता है।

यिडियन (2023) ने कहा कि नशीली दवाओं और अवैध पदार्थों का इस्तेमाल अक्सर मनो-सक्रिय प्रभावों के लिए किया जाता है, जिसमें उत्साह, विश्राम और चेतना की परिवर्तित अवस्थाएँ शामिल हैं। युवा सकारात्मक भावनाओं को बढ़ाने, बोरियत को कम करने और सुखद अनुभवों को बढ़ाने के लिए पदार्थों की तलाश कर सकते हैं। सुख-सुविधाओं की संतुष्टि की खोज और तत्काल पुरस्कारों की इच्छा युवाओं को अवैध पदार्थ-खोज व्यवहार में शामिल करती है।

पारिवारिक कारक :-

नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन में युवाओं के दृष्टिकोण, व्यवहार और भागीदारी को आकार देने में पारिवारिक प्रभाव महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पारिवारिक वातावरण समाजीकरण के लिए एक प्राथमिक संदर्भ के रूप में कार्य करता है, जो युवाओं को मादक द्रव्यों के सेवन के संबंध में मानदंडों, मूल्यों और अपेक्षाओं को समझने के लिए एक आधार प्रदान करता है। परिवार की गतिशीलता, रिश्ते और प्रथाएँ युवाओं में नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन को प्रभावित करती हैं। *मोगाहेद* (2021) के

अनुसार, प्रतिकूल बचपन के अनुभव, खराब पारिवारिक रिश्ते और माता-पिता द्वारा मादक द्रव्यों के सेवन जैसी पारिवारिक गतिशीलता युवाओं को नशीली दवाओं की लत के प्रति संवेदनशील बनाती है। पारिवारिक शिथिलता, संघर्ष और खराब संचार किशोरों की नशीली दवाओं के सेवन और मादक द्रव्यों से संबंधित व्यवहारों में शामिल होने की भेद्यता को बढ़ा सकते हैं

सामाजिक-आर्थिक कारक :- गरीबी और संसाधनों तक पहुँच की कमी जैसे सामाजिक-आर्थिक कारक नशीली दवाओं के दुरुपयोग में युवाओं की भागीदारी को बढ़ाते हैं, खासकर वंचित समुदायों में। कीज़ (2015) बताते हैं कि आर्थिक अभाव और गरीबी युवाओं में नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग की बढ़ती दरों से जुड़ी हुई है। आर्थिक रूप से वंचित समुदायों में पले-बढ़े युवाओं को कई तरह के तनाव और चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिसमें शिक्षा और रोज़गार के अवसरों तक सीमित पहुँच, अपर्याप्त स्वास्थ्य सेवाएँ और हिंसा और अपराध के संपर्क में आना शामिल है। ये प्रतिकूल परिस्थितियाँ निराशा की भावनाओं में योगदान करती हैं और मुकाबला करने के तंत्र या भागने के साधन के रूप में अवैध पदार्थों का उपयोग करने की संभावना को बढ़ाती हैं।

आनुवंशिक कारक :- आनुवंशिक प्रवृत्ति और मस्तिष्क के कार्य में न्यूरोबायोलॉजिकल अंतर भी किशोरों में नशीली दवाओं की लत के प्रति संवेदनशीलता में भिन्नता में योगदान करते हैं (वोल्को और बॉयल, 2018)। आनुवंशिक प्रवृत्ति से तात्पर्य उन वंशानुगत लक्षणों या विशेषताओं से है जो किसी व्यक्ति की कुछ स्थितियों या व्यवहारों, जैसे कि नशीली दवाओं और शराब पर निर्भरता के प्रति संवेदनशीलता को बढ़ाते हैं। जुड़वां और गोद लेने के अध्ययनों ने पदार्थ उपयोग विकारों की आनुवंशिकता के लिए मजबूत सबूत प्रदान किए हैं, जो दिखाते हैं कि आनुवंशिक कारक नशीली दवाओं और शराब के दुरुपयोग के प्रति संवेदनशीलता में भिन्नता के एक बड़े हिस्से के लिए जिम्मेदार हैं (वोल्को और बॉयल, 2018)। केंडलर (2022) द्वारा किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि आनुवंशिक कारक नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन की लगभग 50% देयता के लिए जिम्मेदार हैं, जिसमें शामिल बड़े आनुवंशिक घटक पर प्रकाश डाला गया है। इस अध्ययन में मोनोज़ायगोटिक (समान) और डिज़ायगोटिक (भ्रातृ) जुड़वाँ बच्चों के साथ-साथ परिवार के सदस्यों के बीच नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग की दरों की तुलना की गई। संक्षेप में, शोधकर्ता देख सकते हैं कि जुड़वाँ और पारिवारिक अध्ययन लगातार नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग पर एक मजबूत आनुवंशिक प्रभाव दिखाते हैं।

आनुवंशिक कारक व्यक्ति की नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन की प्रवृत्ति में महत्वपूर्ण रूप से योगदान करते हैं। जुड़वां और पारिवारिक अध्ययनों और आनुवंशिक शोध तकनीकों में प्रगति ने नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन के आनुवंशिक आधार में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान की है। नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन के आनुवंशिक आधार को समझना शोधकर्ताओं को लक्षित रोकथाम रणनीतियों के बारे में जानकारी दे सकता है। हालाँकि आनुवंशिक कारक नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन के जोखिम में योगदान करते हैं, लेकिन शोधकर्ताओं को लगता है कि यह समझना महत्वपूर्ण है कि वे केवल व्यक्तिगत निर्णयों को निर्धारित नहीं करते हैं।

युवा वर्ग पर नशीली दवाओं और पदार्थों के दुष्प्रभाव :-

जब युवा वर्ग नशीली दवाओं के लालच में आकर किशोरावस्था की जटिलताओं से निपटते हैं, तो इसका उनके जीवन पर गहरा और हानिकारक प्रभाव पड़ सकता है। नवीनतम शोध और विचारों की जांच करने पर पता चलता है, कि युवाओं में नशीली दवाओं के दुरुपयोग के स्वास्थ्य, सामाजिक और आर्थिक प्रभाव शामिल हैं।

स्वास्थ्य पर प्रभाव :-

पुरानी नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग से निर्भरता और लत का विकास हो सकता है, जो कि बाध्यकारी नशीली दवाओं की तलाश करने वाले व्यवहार, सहनशीलता और वापसी के लक्षणों की विशेषता है, जो दैनिक कामकाज में व्यवधान का अनुभव करने और उनके जीवन की समग्र गुणवत्ता को प्रभावित करने के बिंदु तक है। ***अब्दुल्ला एट अल. (2020)*** के अनुसार, नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग से महत्वपूर्ण अंगों, जैसे कि यकृत, फेफड़े, हृदय और मस्तिष्क को व्यापक नुकसान हो सकता

है और पुरानी बीमारियों और जीवन-धमकाने वाली स्थितियों का खतरा बढ़ सकता है। उदाहरणार्थ लंबे समय तक शराब के सेवन से यकृत का सिरोसिस, हृदय रोग और तंत्रिका संबंधी विकार हो सकते हैं, जबकि धूम्रपान से श्वसन संबंधी रोग, कैंसर और हृदय संबंधी विकार हो सकते हैं।

युवाओं में नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन के स्वास्थ्य प्रभाव बहुआयामी हैं और इसमें शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कल्याण के आयाम शामिल हैं। मादक द्रव्यों के सेवन के व्यवहार से जुड़े शारीरिक स्वास्थ्य परिणामों, मानसिक स्वास्थ्य प्रभावों और अंतर्निहित स्वास्थ्य संबंधी कारकों को संबोधित करके, हितधारक युवाओं के स्वास्थ्य और कल्याण पर नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने के लिए अधिक प्रभावी रोकथाम और हस्तक्षेप रणनीतियाँ विकसित कर सकते हैं।

सामाजिक कारक :-

नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन के सबसे महत्वपूर्ण प्रभावों में से एक सामाजिक संबंधों और सहायता नेटवर्क का विघटन है। *गैलिया* (2020) बताते हैं कि मादक द्रव्यों के सेवन से पारस्परिक संबंधों में तनाव आ सकता है, विश्वास खत्म हो सकता है और परिवारों और दोस्ती में संघर्ष पैदा हो सकता है। नशे की लत से जूझ रहे व्यक्ति सामाजिक दायित्वों को पूरा करने की तुलना में नशीली दवाओं को प्राप्त करने और उनका उपयोग करने को प्राथमिकता दे सकते हैं, जिससे अलगाव, प्रियजनों से दूरी की स्थिति पैदा हो सकती है।

अब्दुल्ला एट अल (2020) भी यह कहते हुए इसका समर्थन करते हैं कि नशीली दवाओं की लत पारस्परिक संबंधों और सामाजिक कामकाज को बाधित करती है जो युवाओं को उनके परिवार, दोस्तों और समुदाय से अलग-थलग कर देती है। नशे की लत से जुड़ा अनियमित व्यवहार अक्सर तनावपूर्ण रिश्तों, संघर्ष और सामाजिक अलगाव की ओर ले जाता है। इसके अलावा, नशीली दवाओं की आदतों को बनाए रखने के लिए आपराधिक गतिविधियों में शामिल होना सामाजिक हाशिए पर जाने और कलंक लगाने को बढ़ा सकता है।

मोगाहेद, (2021) मादक द्रव्यों के सेवन से संबंधित कलंक और भेदभाव सामाजिक विभाजन को बढ़ा सकते हैं और अंतर्निहित स्वास्थ्य समस्याओं को दूर करने के प्रयासों में बाधा डाल सकते हैं। हाल के अध्ययनों में नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन के सामुदायिक कल्याण पर पड़ने वाले प्रभाव को उजागर किया गया है, जिसमें नशीली दवाओं की महामारी से प्रभावित क्षेत्रों में अपराध, बेरोज़गारी और बेघर होने की उच्च दर शामिल है।

अर्थव्यवस्था पर प्रभाव :-

फ्रेंच (2017) बताते हैं कि युवाओं में नशीली दवाओं और मादक द्रव्यों के सेवन के मुख्य आर्थिक प्रभावों में से एक उत्पादकता और मानव पूंजी का नुकसान है। मादक द्रव्यों के सेवन से संज्ञानात्मक कार्य, शैक्षणिक प्रदर्शन और व्यावसायिक कौशल ख़राब हो सकते हैं, जिससे व्यक्ति की श्रम बाज़ार में प्रभावी रूप से भाग लेने की क्षमता कम हो जाती है और आर्थिक मंदी में योगदान होता है।

युवाओं में बढ़ते नशे की प्रवृति को रोकने के उपाय :-

*नशीली दवाओं और पदार्थों कर दुरुपयोग के बारे में शिक्षा जागरूकता कार्यक्रम अधिक से अधिक चलाया जाए

*समाजीकरण की प्रक्रिया में परिवार के महत्व को स्पष्ट करना |

*बच्चे के साथ संचार प्रक्रिया को सूचरु रूप से बनाए रखना |

*बच्चों के साथ सदैव मित्रवत व्यवहार रखना |

*गैर सरकारी संगठनों द्वारा नशा उन्मूलन हेतु और अधिक सक्रियता के साथ कार्य करने की आवश्यकता |

*उक्त के संदर्भ में पूर्ण नशा मुक्ति की अति आवश्यकता है |

नशे की लत के प्रभावों को संबोधित करना महत्वपूर्ण है, लेकिन रोकथाम के प्रयासों को प्राथमिकता देना भी युवाओं में नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग की प्रवृत्ति को रोकने में महत्वपूर्ण है। साक्ष्य-आधारित रणनीतियों और नवीनतम शोध का लाभ उठाकर, समुदाय युवाओं को नशीली दवाओं की लत के खतरों से बचाने के लिए सक्रिय कदम उठा सकते हैं।
नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग के बारे में शिक्षा जागरूकता कार्यक्रम अधिक से अधिक चलाया जाए|

शैक्षिक कार्यक्रमों के माध्यम से प्रारंभिक रोकथाम युवाओं में नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग की संभावना को काफी हद तक कम कर सकती है। *जर्नल ऑफ एडोलसेंट हेल्थ* में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार, जिन युवाओं को व्यापक नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग की शिक्षा मिलती है, उनमें नशीली दवाओं के उपयोग की शुरुआत करने की संभावना कम होती है और लंबे समय में नशीली दवाओं और पदार्थों के उपयोग से दूर रहने की संभावना अधिक होती है। प्रभावी शैक्षिक कार्यक्रम नशीली दवाओं और शराब के बारे में मिथकों और गलत धारणाओं को दूर करने में मदद करते हैं|

आज के युवाओं की उभरती ज़रूरतों को पूरा करने और रोकथाम के प्रयासों की दीर्घकालिक सफलता सुनिश्चित करने के लिए सुरक्षात्मक कारकों को लागू करके शैक्षिक जागरूकता कार्यक्रम रणनीतियों को अनुकूलित करना महत्वपूर्ण है। सुरक्षात्मक कारक वे नींव हैं जिन पर लचीलापन बनाया जाता है, जो युवाओं को जीवन की जटिलताओं को नेविगेट करने के लिए आवश्यक शक्ति और समर्थन प्रदान करते हैं। जोखिम कारकों और सुरक्षात्मक कारकों पर ध्यान केंद्रित करने वाली रोकथाम मौजूदा जोखिम कारकों की पहचान करके रोकथाम के कार्यान्वयन को संदर्भित करती है और उन सुरक्षात्मक कारकों की पहचान करती है जो उन जोखिम कारकों को कम कर सकते हैं।

जर्नल ऑफ सब्सटेंस एब्यूज ट्रीटमेंट में प्रकाशित एक अध्ययन में पाया गया कि जिन किशोरों ने आध्यात्मिक विश्वासों और प्रथाओं के उच्च स्तर की सूचना दी, उनमें पदार्थ के उपयोग में शामिल होने की संभावना कम थी और दवा और पदार्थ के दुरुपयोग से संबंधित समस्याओं के कम स्तर का प्रदर्शन किया। आध्यात्मिकता को मनुष्यों में एक मूल्य के रूप में देखा जाता है, जो मनुष्यों को अच्छी और बुरी चीजों के बीच अंतर करने में मदद कर सकता है और साथ ही धर्म में निषिद्ध चीजों को न करने के लिए खुद को नियंत्रित करने में सक्षम हो सकता है।

व्हाइट और कर्टज़ (2016) ने कहा कि माता-पिता और परिवारों का समर्थन भी माता-पिता-बच्चे के बंधन को मजबूत करके, खुले संचार को बढ़ावा देकर और पदार्थ के उपयोग के संबंध में स्पष्ट अपेक्षाएं निर्धारित करके युवाओं में नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। परिवार-आधारित रोकथाम प्रयासों में महत्वपूर्ण घटक हैं। प्रभावी संचार, अनुशासन रणनीतियों और व्यवहार की निगरानी पर मार्गदर्शन प्रदान करके पेरेंटिंग कार्यक्रम चलाए जा सकते हैं ताकि परिवारों को एक पोषण वातावरण बनाने के लिए सशक्त बनाया जा सके जो नशीली दवाओं के प्रयोग को हतोत्साहित करता है ।

: निष्कर्ष :

नशीली दवाओं और पदार्थों का दुरुपयोग एक ऐसी घटना है जो पूरी दुनिया में होती है और युवाओं में आम है। नशीली दवाओं और पदार्थों का दुरुपयोग एक ऐसा लक्षण है जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि यह उस देश को नुकसान पहुँचाता है जो हमेशा प्रगति के लिए मानव संसाधनों की गुणवत्ता पर निर्भर करता है। नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग के कारकों में विशिष्ट विशेषताएं होती हैं जिन्हें कभी-कभी पहचानना आसान होता है। नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग का शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक पर नकारात्मक प्रभाव देखा गया है, चाहे वह अल्पकालिक हो या दीर्घकालिक। इसलिए, नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग और इसके प्रभावों में योगदान देने वाले कारकों को समझना और पहचानना नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग से निपटने और रोकने के लिए एक आवश्यकता है। नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग की घटना को कम करना युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य और जीवन और उनके भविष्य को सुनिश्चित करने का एक प्रयास भी है। नशीली दवाओं के दुरुपयोग के

कारकों और प्रभावों को समझकर, परामर्शदाताओं के लिए नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग में शामिल युवाओं को उचित हस्तक्षेप और रोकथाम प्रदान करने में मदद करना बहुत महत्वपूर्ण है ताकि नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग की दुनिया में शामिल होने या फिर से शामिल होने से उबरने की प्रक्रिया में मदद मिल सके। परामर्शदाताओं को इस घटना से निपटने में सबसे अच्छे और सबसे प्रभावी तरीके खोजने की कोशिश करनी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

- Galea ,S)2020 (The Public health Crisis of underrecognized Substance use disorders American Journal of Epidemialogy,-342)8(,801 -802
- Kellar Mark“ :Alcohalism :Nature and extent of the Problem ”in the Annals of the American Academy of Polotical and Social Sciences,Vol 315 January 1958 P-04
- गोपाल कृष्ण, समाजशास्त्र SBPD पब्लिशिंग हाउस बी निकट तुलसी सिनेमा 20/3,आगरा)282002-UP (p 241 –
- https//:www.undoc.org/unodc.org/wdr2018
- www.unodc.org/unodc/en/data-and-analysis/wdr-2023-online-segment.html
- शिवानी एवं वहुगुणा, उमा (2019), युवा पीढ़ी और मादक द्रव्य व्यसन एक समजशास्त्रीय अध्ययन:,Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika,6)8(2:102-105

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

ग्रामीण समाज तथा संचार प्रौद्योगिकी : अवसर, चुनौतियाँ और सामाजिक परिवर्तन

शिखा सिंह
शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग,
डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या
डॉ. पवन कुमार पाण्डेय
शोध निर्देशक,
असि. प्रो.,आ.न.दे.किसान पी.जी.कॉलेज बभनान गोण्डा

शोध सार :–

किसी भी राज्य के सामाजिक तथा आर्थिक विकास में संचार साधनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, इसीलिए वर्तमान समय में संचार साधनों को समाज का स्नायुतंत्र कहा जाता है। प्रारंभ से ही मनुष्य एक स्थान से दूसरे स्थान पर समाचार पहुचाने के लिए कबूतर, तोता आदि का सहारा लिया करता था। आज के कुछ दशक पूर्व यदि भारतीय ग्रामीण समुदाय पर दृष्टि डाली जाए तो यह दिखाई देता है कि यह समुदाय यातायात तथा अन्य संचार के साधनों के अभाव के कारण अत्यधिक पिछड़ा हुआ था किन्तु आज संचार प्रौद्योगिकी के प्रयोग से कोई भी सूचना त्वरित तथा वास्तविक समय में एक स्थान से दूसरे स्थान तक न मात्र पहुँचती है अपितु त्वरित प्रतिउत्तर भी प्राप्त हो जाता है, जिससे समय की बचत के साथ–साथ एक समाज का दूसरे समाज के लोगों से संबंध प्रगाढ़ हुआ है और समाजों में समानता भी आई है। आज ग्रामीण तथा शहरीय समाजों में अंतर काफी सीमा तक कम हुआ है। इंटरनेट आदि के प्रयोग से लोग घर बैठे विश्व की सभी सूचनाओं तक सहजता से अपनी पहुँच बना रहे हैं, ग्रामीण क्षेत्रों के लोग सरकार की सभी योजनाओं के विषय में जागरूक हुए हैं तथा उसका लाभ उठा पा रहे हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात, रोजगार,कृषि,उद्योग आदि सभी क्षेत्रओं में क्रांति या गई है। इस प्रकार संचार ने समाज की प्रगति में ऊर्जा लाई है।

संकेत बिन्दु :– आविष्कार, संचार प्रौद्योगिकी, क्रांति, ग्रामीण समाज, इंटरनेट, साइबर अपराध

प्रस्तावना :–

संचार प्रौद्योगिकी के उन्नत नवीन साधनों नें ग्रामीण समाज की प्रगति में अवांछनीय तेजी लाई है । किसान कृषि कार्य हेतु नवीन प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर उन्नत कृषि कर रहे हैं। कृषि संबंधी सभी सूचनाएं आज मात्र कुछ मिनटों में उपलब्ध है। शिक्षा तथा स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी संचार साधनों के प्रयोग से उन्नति आई है। छात्र नए शोध तथा विज्ञान संबंधी सभी जानकारियों तक पहुँच बना पा रहे हैं। आज शिकढ़ क्षेत्र में छात्र अध्ययन हेतु पुस्तकों से अधिक मोबाइल तथा इंटरनेट का प्रयोग करके ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं। नए पद्धति के विद्यालयों में तो प्रायः सभी चीजें इंटरनेट तथा टेक्नोलॉजी आधारित हो गई हैं। जिससे विद्यार्थी परंपरागत ज्ञानार्जन के स्थान पर करके सीखने में अधिक रुचि लेते हैं। वहीं स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी इंटरनेट तथा टेक्नोलॉजी के प्रयोग ने अमूलचूल परिवर्तन लाया है अब ग्रामीण क्षेत्रों के स्वास्थ्य केंद्रों के डॉक्टर दूरस्थ बड़े डॉक्टरों से इंटरनेट के माध्यम से संपर्क स्थापित कर चिकित्सा के दौरान मदद ले सकते हैं जिससे अब ग्रामीण सामान्य जन लाभान्वित होते हैं।

ग्रामीण समाज प्रारंभ से ही धर्म प्रधान समाज रहा है, यह सीधा, सरल तथा धर्म के प्रति झुकाव वाला समाज है। आज लोग संचार माध्यमों के अंतर्गत यू ट्यूब तथा फेसबुक आदि सोशल मीडिया के द्वारा ज्योतिर्लिंगों तथा सिद्ध पीठों के लाइव दर्शन तथा आरती घर बैठे देख पते हैं। सर्वाधिक परिवर्तन रोजगार के स्वरूप तथा अवसर में दृष्टिगत होता है। आज युवक ऑनलाइन योग्यता अनुरूप रोजगार की सूचना प्राप्त कर रहे हैं तथा शिक्षित युवक तथा युवतियाँ आई. टी. तथा कॉरपोरेट जगत से जुड़ कर घर बैठे वर्क फर्म होम करके आर्थिक स्थिति सुधार रहे हैं। संचार प्रौद्योगिकी ने ग्रामीण जगत को दूरस्थ स्थानों से जोड़कर भूमंडलीकरण के सिद्धांत को फलीभूत किया है।

संचार प्रौद्योगिकी :–

संचार शब्द अंग्रेजी भाषा के श्कॉम्युनिकेशनश सहबद्ध का हिन्दी रूपांतरण है, जिसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द श्कम्यूनीसश से मणि जाती है, जिसका अर्थ है कॉमन अर्थात सामान्य, साझा या सार्वजनिक। मानव जीवन के लिए संचार आधारभूत तथा अति आवश्यक है। यह धरती पर जीवन आरंभ होने के समय से ही विद्यमान रहा है। आधुनिक समय में तेजी से विकसित प्रौद्योगिकियों के साथ लगभग हर सप्ताह बाजार में नई संचार विधियाँ और उपकरण या रहे हैं। इनमे से कुछ अपनी गुणवत्ता तथा उपयोग के कारण लोकप्रिय हो गए और बहुत समय से कायम हैं। 1

जन संचार में कंप्युटर के आविष्कार से क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ और इंटरनेट के माध्यम से लोग एक जगह बैठे–बैठे पूरे विश्व की सूचनाएं प्राप्त कर रहे हैं। गाँव, शहर, देश, विदेश इन सभी की दूरीयन मानों सिमट सी गई हैं, और सब एक वैश्विक गाँव जैसा बन गया है।

इंटरनेट की खोज ''बॉब कहन'' और ''विन्ट सर्फ'' ने 1969 में की थी। 1969 में सर्वप्रथम इसका प्रयोग अमेरिकी रक्षा विभाग द्वारा किया गया।2

आज हम सर्च इंजन का प्रयोग करके यह जान लेते हैं कि विश्व भर में क्या, क्यूँ, कैसे, कहाँ और कब हो रहा है इंटरनेट के बढ़ते विकास को देखते हुए ''मार्शल मैकलुहान'' ने कहा कि ''संभवतः हमारी दुनिया एक वैश्विक गाँव बनने की दिशा में आगे बढ़ रही है।3

ग्रामीण समाज :–

गाँव शब्द सुनते ही हमारे दिमाग में जो छवि बनती है उसमें हम पाते हैं कि ग्रामीण समाज एक ऐसा समाज है जहां अपेक्षाकृत अधिक समानता, कम औपचारिकता, प्राथमिक समूहों की प्रधानता, जनसंख्या का कम घनत्व, प्राकृतिक वातावरण तथा कृषि की प्रधानता जैसी कुछ मुख्य विशेषताएं हैं।

प्रारंभ से ही ग्रामीण लोगों का जीवन सरल तथा सादगीपूर्ण रहा है, वे प्रकृति पर अपेक्षाकृत अधिक आश्रित तथा श्रम को महत्व देना वाले रहे हैं। ग्रामीण समाज छोटा किंतु घनिष्ठ समुदाय मन जाता है।

सेंडरसन ने ग्रामीण समाज को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ष्ग्रामीण समाज ग्रामीण पर्यावरण के जीवन का सामाजिक अध्ययन है।3

ग्रामीण समाज प्रारंभ से ही प्राकृतिक संसाधनों के काफी निकट रहा है। लॉरी नेल्सन ने ग्रामीण समाज के विषय में लिखा है कि ग्रामीण समाज की विषयवस्तु ग्रामीण पर्यावरण में उन विभिन्न प्रकार की प्रगति का वर्णन और विश्लेषण करना है जो उस पर्यावरण में विद्यमान होता है।4

ग्रामीण समाज पर संचार प्रौद्योगिकी का प्रभाव :–

कुछ दशक पूर्व देखें तो भारत में ग्रामीण क्षेत्रों की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक एवं राजनैतिक स्थिति अति पिछड़ी हुई थी, जिसका प्रमुख कारण ग्रामीणों में जागरूकता का अभाव था किन्तु संचार प्रौद्योगिकी के आगमन ने ग्रामीण क्षेत्रों में भी जागरूकता उत्पन्न की जिसके परिणामस्वरूप ग्रामीण बहुत लाभान्वित हुए हैं। जहां पहले स्तरीय शिक्षा का अभाव था वहीं अब ग्रामीण क्षेत्र के लोग ऑनलाइन शिक्षा ग्रहण कर रोजगार की ओर उन्मुख हुए हैं, ग्रामीण लोग वर्तमान में ऑनलाइन खरीददारी कर रहे हैं साथ ही देश विदेश की जानकारी प्राप्त कर रहे हैं तथा इंटरनेट के माध्यम से नियमों तथा कानूनों के प्रति जागरूक होकर अपने हितों की रक्षा भी कर रहे हैं। इस प्रकार उनकी सामाजिक स्थिति में भी सुधार आया है आज ग्रामीण संचार प्रौद्योगिकी के उपयोग से मात्र ग्रामीण क्षेत्रों तक सीमित नहीं हैं बल्कि विभिन्न सोशल साइटों जैसे इंस्टाग्राम आदि का प्रयोग करके देश विदेश के लोगों से भी जुड़ रहे हैं।

अवसर :–

- **शैक्षिक प्रगति में संचार प्रौद्योगिकी की भूमिका –** ग्रामीण समाज के विद्यालयों में भी अब नवीन प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर शिक्षा ग्रहण की जा रही है।

  व्यावसायिक पाठ्यक्रम संबंधी उच्चशिक्षा जो कि गांवों में नहीं उपलब्ध थी, अब ऑनलाइन कक्षाओं द्वारा इसे ग्रहण कर रहे हैं।

गांवों में रहने वाले शिक्षक भी संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग करके अपनी शिक्षण विधियों को बेहतर बना सकते हैं और छात्रों को अधिक आकर्षक तरीके से पढ़ सकते हैं।

- **स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार–** ग्रामीण क्षेत्रों में संचार प्रौद्योगिकी , डॉक्टर तथा मरीजों के बीच संचार को अधिक आसान बनाती है, जिससे दूरस्थ क्षेत्रों में भी स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच आसान हो जाती है। मोबाइल ऐप तथा ऑनलाइन प्लेटफार्म के माध्यम से ग्रामीण लोग स्वास्थ्य संबंधी कोई भी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं, डॉक्टर से परामर्श कर सकते हैं तथा दवाएं भी ऑर्डर कर सकते हैं।

  स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण व सार्वजनिक स्वास्थ्य अभियानों को बढ़ावा देने के लिए भी संचार प्रौद्योगिकी बहुत उपयोगी है। ग्रामीण क्षेत्रों में संचार प्रौद्योगिकी , डॉक्टर तथा मरीजों के बीच संचार को अधिक आसान बनाती है, जिससे दूरस्थ क्षेत्रों में भी स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच आसान हो जाती है। मोबाइल ऐप तथा ऑनलाइन प्लेटफार्म के माध्यम से ग्रामीण लोग स्वास्थ्य संबंधी कोई भी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं, डॉक्टर से परामर्श कर सकते हैं तथा दवाएं भी ऑर्डर कर सकते हैं। स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण व सार्वजनिक स्वास्थ्य अभियानों को बढ़ावा देने के लिए भी संचार प्रौद्योगिकी बहुत उपयोगी है।

- **रोजगार प्राप्ति में सहजता–**
  पहले के समय में ग्रामीण युवाओं को रोजगार के लिए शहर जाना होता था किन्तु आज के समय शिक्षित युवक तथा युवतियाँ बिना अपना घर से दूर गए वर्क फर्म होम कर रहे हैं। तथा अन्य ग्रामीण भी अपनी योग्यता तथा कौसल के अनुरूप रोजगार की जानकारी ऑनलाइन प्राप्त कर रहे हैं।

- **ऑनलाइन खरीददारीः–** जहां पहले ग्रामीण क्षेत्रों तक नई वस्तुओं तथा तकनीकी को पहुचने में समय लग जाता था वहीं अब नई तकनीकी, फैशन तथा अन्य उपयोगी सामग्री मात्र एक एप्लीकेशन के माध्यम से घर तक पहुँच जा रही है, जो मात्र इंटरनेट के कारण ही संभव हो पाया है। ग्रामीण अपनी पसंदीदा सामग्री कपड़े आदि ,मात्रा कुछ मिनटों में ऑर्डर कर सकते हैं। जिससे ग्रामीण तथा नगरीय जीवन शैली में असमानता कम हुई है।

- **सामाजिक संपर्क व नेटवर्किंगः–**फेसबुक, इंस्टाग्राम, टेलीग्रैम, ट्विटर आदि के माध्यम से ग्रामीण ना केवल अपने परिजनों, रिश्तेदारों व मित्रों से जुड़ सकते हैं बल्कि नए नए लोगों से जुडने के अवसर भी मिलते हैं, जिनसे वे बातचीत तथा अपने विचारों का आदान–प्रदान कर नई चीजें सीखते हैं और उनका आत्मविश्वास बढ़ता है।

साहित्य समीक्षा :–

1) एन. सी. ई. आर. टी., मानव पारिस्थितिकी और परिवार विज्ञान, भाग एक , रिप्रिन्ट 2025–2026।

2) जॉन थाम्पसन(1995),: ''मीडिया और मॉडर्न सोसाइटी'' में लिखा है कि मीडिया ने आधुनिक संस्थाओं के विकास में केंद्रीय भूमिका निभाई है।

3) मार्शल मैक्लुहान(1964,),: ने अपने पुस्तक में कहा है कि जिस प्रकार इन्टरनेट का अविष्कार होने के बाद इसका विस्तार काफी तेजी से हुआ है तो ऐसा लगता है जैसे हमारी दुनिया एक वैश्विक गावं बनने की दिशा में आगे बढ़ रही है।

4) के. पार्क और पार्क्स(1983),: ने बताया है कि स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता में सामाजिक आर्थिक प्रस्थिति के प्रभाव का अध्ययन किया जाना सैधांतिक और व्यवहारिक दृष्टि से अत्यंत आवश्यक है। विशेष रूप से ऐसी स्थिति में जब ग्रामीण संरचना में स्वतंत्रता के उपरांत वृहत परिवर्तन एवं महिला तथा पुरुष के परंपरागत अन्तः सम्बन्ध भी रूपांतरित हुए हों।

5) अिरविन्द कुमार सिंह (2018 पुनर्मुद्रण 2020),: भारत में इन्टरनेट से सम्बंधित घटनाक्रम, 1995 में भारत में इन्टरनेट सेवा प्रारंभ हुआ था, 15 अगस्त 1995 को सर्वप्रथम 6 महानगरों से भारत की पहली सार्वजनिक इन्टरनेट सेवाओं के अंतर्गत गेटवे इन्टरनेट एक्स्सेस सेवा का शुभारम्भ किया।

उद्देश्य :–

प्रस्तुत शोध के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं:–

1) संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से ग्रामीण समाज में जागरूकता का विश्लेषण करना।

2) ग्रामीण समाज के आर्थिक तथा रचनात्मक विकास का विश्लेषण करना।

3)ग्रामीण समाज द्वारा प्रयोग में लाए जाने वाले संचार प्रौद्योगिकी के अवसरों व चुनौतियों के बीच संतुलित दृष्टिकोण का अध्ययन करना।

शोध प्रविधिः–

प्रस्तुत शोध की प्रकृति विश्लेषणात्मक है, जिसमे विविध प्रकार के द्वितीयक श्रोतों का प्रयोग करके आँकड़ों का संकलन किया गया है। विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त सामग्री के अध्ययन के आधार पर समाज द्वारा इंटरनेट संचार प्रौद्योगिकी के प्रयोग का अध्ययन किया गया है।

प्रस्तुत शोध में संचार प्रौद्योगिकी के प्रयोग का तात्पर्य है कि तकनीकों के उपयोग से ग्रामीण नए अवसर व जागरूकता के माध्यम से अपने हितों को सुदृढ़ता प्रदान कर सकत है तथा इसके अत्यधिक प्रयोग अथवा दुरुपयोग से अपने जीवन को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकत हैं।

चुनौतियाँ :–

- **ऑनलाइन सुरक्षा संबंधी जागरूकता का अभावः** इंटरनेट का उपयोग करते समय ऑनलाइन सुरक्षा एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण मुद्दा है क्योंकि बढ़ते इंटरनेट के प्रयोग के साथ–साथ विभिन्न प्रकार के साइबर अपराध भी बढ़े हैं जिनके कारण कई प्रकार के मानसिक तथा आर्थिक जोखिम का सामना करना पड़ सकता है।
- **असामाजिक व्यवहारः** इंटरनेट के बढ़ते उपयोग के साथ इसकी लत लगने की संभावना भी अत्यधिक बढ़ जाती है परिणामतः ग्रामीण अपना सामान्य जीवन भूल कर दिन रात इंटरनेट की आभासी दुनिया में रहते हैं जिससे उनका सामाजिक जीवन प्रभावित होता है और वे एकाकीपन में रहने लगते हैं।
- **भ्रामक जानकारीः** इंटरनेट पर कई गलत सूचनाएं भी उपलब्ध हैं, जिनसे ग्रामीणों का जीवन नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है।
- **परसंस्कृति आकर्षण व ग्रहणः** कभी कभी ग्रामीण इंटरनेट के प्रयोग से दूसरों की संस्कृति तथा पाश्चात्य संस्कृति से इतना अधिक प्रभावित हो जात हैं कि उनका अति अनुसरण करने के कारण अपनी संस्कृति ही भूल जाते हैं।
- **डेटा सुरक्षा और गोपनीयताः** विभिन्न प्रकार के सोशल मीडिया प्लेटफार्म का उपयोग करते समय ग्रामीण अपनी व्यक्तिगत जानकारी भी साझा करते हैं। विभिन्न प्रकार के साइबर अपराध जैसे फिशिंग, हैकिंग आदि के माध्यम से उनका व्यक्तिगत डेटा भी चोरी व दुरपयोग हो सकता हैं।
- **समय का दुरुपयोगः** इंटरनेट की लत के कारण ग्रामीण अपना अत्यधिक समय इस पर नष्ट करती है जिससे उनका पारिवारिक तथा सामाजिक जीवन प्रभावित होता है।

सुझाव :–

- **साइबर सुरक्षा संबंधी जागरूकता :** इंटरनेट के माध्यम से संचार साधनों के उपयोग के साथ यह आवश्यक है कि ग्रामीणों को इसके सुरक्षा तथा दुरुपयोग से भी अवगत किया जाए। उन्हे यह जानना आवश्यक है कि उन्हे मजबूत पासवर्ड का उपयोग करना चाहिए तथा अपने सॉफ्टवेयर को समय समय से अपडेट करते रहना चाहिए।
- **विश्वसनीय वेबसाइटों का प्रयोग :** वेबसाइटों तथा एप्लीकेशन के प्रयोग के पहले यह आवश्यक है कि ग्रामीण उसके विषय में आवश्यक जानकारी प्राप्त कर लें तथा उन्हे संदिग्ध लिंक पर भी नहीं जाना चाहिए जिससे उन्हे साइबर अपराध का सामना नहीं करना पड़े।

- **सामाजिक गतिविधियों को महत्व :** आभासी दुनिया के साथ–साथ अपने वास्तविक दुनिया के सामाजिक संबंधों में संतुलन बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है।
- **समय का उचित प्रबंधन :** यह आवश्यक है कि जितनी जरूरत हो उतना ही सीमित समय इंटरनेट बिताया जाए तथा अपनी दिनचर्या का अंश मात्र भाग ही उसे बनाया जाए न कि अनावश्यक समय नष्ट किया जाए।
- **अपनी सांस्कृतिक अक्षुण्यता बनाए रखना :** संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से विश्व भर के लोगों से जुडने तथा उनसे प्रभावित होने के बाद यह आवश्यक है कि दूसरों की संस्कृति से अच्छी चीजें सीखें लेकिन साथ ही साथ अपनी संस्कृति को बनाए रखें।

निष्कर्ष :–

ग्रामीण क्षेत्रों में संचार प्रौद्योगिकी की पहुँच सुगम होने के साथ ही इसने ग्रामीण लोगों के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है। जिससे उनकी जीवन शैली के कई अंग प्रभावित हुए हैं। इसका सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों प्रभाव परिलक्षित हुआ है। सकारात्मक दृष्टिकोण से देखें तो आज ग्रामीण समाज तक विश्व के प्रत्येक कोने की सूचना जब चाहें तब उपलब्ध है। नियमों तथा कानूनों की समझ ने उन्हे सशक्त बनाया है। संचार साधनों के उपयोग द्वारा अपने कार्यों से आर्थिक लाभ भी प्राप्त कर रहे हैं जिससे उनके आत्मविश्वास में सुदृढ़ता या रहे है।

वहीं दूसरी ओर ग्रामीणों पर संचार प्रौद्योगिकी के नकारात्मक प्रभाव पर नजर डालें तो इंटरनेट के आवश्यकता से अधिक प्रयोग के कारण मानसिक स्वास्थ्य समस्या जैसे तनाव, अवसाद आदि असमाजिक व्यवहार जैसी समस्याएं देखने को मिल रही हैं। इंटरनेट के उपयोग में सावधानी न रखने के कारण विभिन्न प्रकार के साइबर अपराध जैसे गोपनीयता तथा डेता चोरी, फिशिंग आदि समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

निष्कर्षतः ग्रामीण समाज पर इंटरनेट का प्रभाव द्विपक्षीय है यदि इसका उपयोग संतुलित व सकारात्मक रूप से किया जाए तो ये विकास में सहायक है वहीं यदि इसका दुरुपयोग किया जाए तो यह जीवन पर नकारात्मक प्रभाव भी डालता है।

संदर्भ सूची :–

1) एन. एन. ओझा, विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी, क्रोनिकल बुक्स, सेक्टर–2, नोयडा पेज न. 191, 2008
2) अरविन्द कुमार सिंह,इंटरनेट एण्ड न्यू मीडिया टेक्नॉलॉजी पेज न– 57–58, 2018 पुनर्मुद्रण 2020
3) मार्शल मैक लुहान,'' अन्डरस्टैंडिंग मीडिया द एक्सटेंशन आफ मैन''1964
4) हसनैन नदीम,समकालीन भारतीय समाज, भारत बुक सेंटर अशोक मार्ग लखनऊ,पेज न. 427, 2004
5) पी. एच. प्रभु, हिन्दू सोशल ऑर्गनायजेशन, न्यू दिल्ली सेग पब्लिकेशन (चतुर्थ संस्करण) 1940
6) पार्क,के.पार्क्स, टेक्स्ट्बुक ऑफ प्रिमिटिव एण्ड सोशल मेडिसिन, जबलपुरःबनरसीदास 1983
7) टी.एस.सत्यनारायण राव, दीपाली बंसल, सुहास चंद्रणः साइबर बुलिग : वास्तविक परिणामों के साथ एक आभासी अपराध मनोरोग की भारतीय पत्रिका 2018,
8)ए . आर. देसाई, रुरल सोसियोलॉजी ऑफ इंडिया।
डॉ. उम्मेद सिंह, ग्रामीण समाजशा स्त्र एवं संचार, 96–97, 101–102
9) डॉ. उम्मेद सिंह, ग्रामीण समाजशा स्त्र एवं संचार, 96–97, 101–102
10)मनीषा मेरे, मधुकर और नलावड़े, केएम, इंटरनेट उपयोगकर्ता के इंटरनेट उपयोग और स्वास्थ्य संबंधी प्रभावों का अध्ययन, कंप्यूटर विज्ञान और सॉफ्टवेयर इंजीनियरिंग में उन्नत अनुसंधान का अन्तर्रास्ट्रीय जर्नल,वॉल्यूम –2 पेज न. –89 2012

Hayavadana: The Invincible imperfection and Earthly Desire

Sandhya Yadav,
Research Scholar,
K.S. Saket P.G. College, Ayodhya (U.P.)

Dr. Janmejay Kumar Tiwari
Assistant Professor, Department of English
K.S. Saket P.G. College, Ayodhya (U.P.)

Abstract

My attempt in this paper is to study Girish Karnad's two-act play Hayavadana, which is based on stories from the old Sanskrit work Kathasaritsagara. The play shows how the deep friendship between Devadatta, who is known for his intelligence, and Kapila, who is known for his strength, slowly breaks apart. It focuses on how Devadatta, Kapila, and Padmini (Devadatta's wife) get caught in situations they never meant to create, leading to serious consequences and many disappointments in their lives. This study suggests that while giving in to desires and ignoring values may bring short-term pleasure, it often plants the seeds of bigger problems and future devastation. The characters in Hayavadana teach us that beauty can be both a gift and a burden, leading people to act on dangerous instincts without thinking of the consequences. Their lives show how jealousy and selfish choices can destroy even the strongest bonds, bringing only disappointment and sorrow in the end. This is an important lesson for all of us. True peace and lasting happiness do not come from chasing physical desires or ignoring what is right. Instead, they come from living a life built on virtue, self-control, and care for others. In this way, we learn that a beautiful heart and moral life matter far more than outward beauty or temporary pleasure.

Keywords: beauty, instinct, jealousy, consequences, disappointments, peace, lesson, morality, Karnad.

Introduction

We must all recognize a simple yet profound truth: whenever someone writes—whether an ordinary person or someone famous—they do not merely put words on a page. In some way, they also write themselves into their work. There is always a part of their own story hidden within their lines; that is why their words come alive so vividly. This is true for every human being—for you, for me, and for Girish Karnad himself. Sooner or later, we all pour fragments of our character onto the page.

It was in this spirit that Girish Karnad created his remarkable play Hayavadana, crafting it so powerfully that from its first staging in 1971 until today, in 2025, we continue to study it, reflect upon it, and draw inspiration from it. We find ourselves unable to resist revisiting his work, uncovering new meanings each time. Through his pen, Karnad enriched Indian theatre with a depth and brilliance that rivaled his own gifts as an actor and director. He served as a cultural ambassador, taking India's art and heritage to foreign lands. His plays have graced stages across

the world, a testament to his universal appeal. Truly, Karnad was not only a distinguished writer and playwright but also an exceptional director and actor.

The main purpose of the research is to show how in Hayavadana greed begins to take root in the mind, it sows seeds of destruction. In our society, especially when discussing gender limitations, I believe it is not only valid but necessary for a girl to speak from an unbiased perspective—one that embraces both men and women equally. Over centuries, we have learned that the mind holds immense power. Whoever controls their mind, controls their destiny. When we talk about women in our society, we must first acknowledge that they were never truly given the freedom they deserved. In a deeply patriarchal structure, women had to break through countless restrictions and age-old traditions just to claim a sense of freedom. And even when they finally did, it often came at the cost of not being able to fully understand or explore what was right or wrong in the wider world—because knowledge isn't only what's found in books. To truly understand life, one must step out of their small, confined world. Those who dared to do so—despite all odds—used their intelligence and perception to make meaningful choices. After all, surroundings shape understanding.

Yet, when women were finally given the opportunity to make decisions, many struggled. Their decision-making often appeared fragile, not because they were incapable, but because they were never prepared for such autonomy. The consequences of these decisions were profound, sometimes leaving lasting scars on their lives. Many were judged harshly and deemed unfit in their own choices. Behind this failure was the lingering shadow of patriarchy, a system so entrenched that it did not allow women's independence to be accepted—whether the woman was a simple girl from a household or a queen in a palace, their struggles remained the same.

Take the mother of Hayavadana, for example—a princess from Karnataka, known for her beauty and grace. When it came time to choose a husband, she rejected every royal suitor from powerful kingdoms. And *when a woman takes a decision, she rarely turns back; her resolve becomes her destiny.* With immense devotion, she chose a cursed horse over kings. Her love and dedication broke the curse, revealing his celestial form. But her fierce will didn't allow her to follow him to heaven. She refused. Her stubbornness led to her own curse, transforming her into a mare.

Sometimes, I personally feel that beauty is a curse. Those who possess it often pay a heavy price. History bears witness to this. From ancient times, ***Helen of Troy***—whose legendary beauty is said to have ignited the Trojan War—to ***Draupadi of the Mahabharata,*** whose beauty and honor became central to one of the greatest wars ever told. In the ***Ramayana***, *Sita's* divine beauty and purity stood at the heart of the conflict that shaped her destiny. In more modern times, we see figures like ***Mata Hari,*** the *Dutch courtesan* and exotic dancer whose beauty and allure made her a figure of fascination and betrayal during World War I.

Whether it's the haunting beauty of Hayavadana's mother, the celestial horse who captured her heart, or Padmini—the protagonist of Karnad's Hayavadana—beauty plays a dangerously powerful role. Padmini's beauty bewitched both Kapila and Devadatta, two inseparable friends who lost themselves in her charm. As ***Karnad*** writes, "***Two friends they were, one mind, one***

heart; they saw a girl and forgot themselves. But they could not understand the song she sang." (Karnad, 1994)

This makes one wonder: throughout different eras, has beauty not proven to be a burden for many women? As the saying goes, "*Beauty, like a richly-scented flower, often attracts the bee that stings."*

It is truly thought-provoking to reflect on how much power beauty holds—sometimes destructive, sometimes divine. Girish Karnad portrayed this complexity with remarkable brilliance in his plays. And this beauty—more than physical—is the beauty of his intellect, his insight, and the way he translated profound ideas into literature. Through his pen, he gave form to thoughts that are timeless, tender, and true.

This truth applies to every facet of life—be it material desires or the intricate world of human emotions.

Looking back, history tells us that kings had multiple wives, but queens were often rendered powerless. With time, generations changed, innovations blossomed, and new relationships were formed—relationships that were given different names. Yet, what never changed were human emotions, which remain at the heart of every connection.

As new relationships evolve, we often forget that when more people are added, love sometimes feels divided. When love is no longer shared equally, pain emerges—followed by misunderstandings, jealousy, and competition. Psychologically, there's always a subtle trace of self-interest in every relationship, even in those bound by love. We often expect our own blood—our family—to support us unconditionally. But expectations can become burdens.

In Hindu culture, the bond between husband and wife is considered the most sacred of all. The "saat phere," or seven vows, are not just rituals but spiritual commitments. In the beginning, love is fresh, pure, and full of hope. But over time, the dust of life begins to settle on that love. And when this dust is not cleaned, love becomes buried beneath the weight of daily routines and responsibilities.

It becomes the duty of both partners to nurture the relationship, to wipe away that dust and let love shine again. But in the chaos of life, many forget to do so. Just like we clean dust from trees or maintain a bungalow to keep it new, we must also nurture our relationships. We make efforts to keep our homes and appearances beautiful—should we not put the same effort into our emotional bonds?

Relationships are delicate. Both individuals must be committed to working through the layers of emotional dust instead of seeking something newer, shinier, or seemingly better. Why chase after a new bungalow or radiant skin when you can restore the beauty of what you already have?

Let us take the example of the female protagonist in Hayavadana. How could she forget that her husband was an intellectual, a profound thinker? That was his most defining trait. And ultimately, it is a person's thoughts—the depth of their mind—that makes them truly beautiful.

Echoes of the Same Struggle in Modern Times-

They are such tender things — they simply cannot be hidden. And when attraction joins them, it stirs a restlessness within a person, for after all, we are only human. It is natural. Yet this very

pull can be restrained, if you are deeply, wholly, and soulfully connected to your life partner. Then, such fleeting attractions lose their power to unsettle you.

Girish Karnad captured this truth brilliantly with his pen, revealing how these very patterns keep repeating, generation after generation. The names of relationships may change, but the betrayals remain the same, and the pain that follows a broken heart is always identical. Sometimes, we must trust our instincts — what they show us, what they warn us — and act with awareness.

We see this vividly at the start of Hayavadana: Padmini finds herself drawn to the strong, robust Kapila even after marrying Devadatta, who is soon consumed by jealousy. Similarly, when Kapila, understanding Devadatta's feelings, decides to visit Padmini's house, the moment he lays eyes on her, something stirs within him. Yet he crushes that feeling in his heart — all for the sake of his friend, knowing how deeply Devadatta adores her. It was not just affection; it was an intense longing, a fervent wish tied to all the vows he had made to the gods.

Devadatta (to Kapila): "I swear, Kapila, with you as my witness, I swear — if I ever get her as my wife, I will sacrifice my two arms to Goddess Kali. I'll offer my head to Lord Rudra."

Here we can see clearly who desires what. Yet a common thread binds them: Padmini's attraction to Kapila and Kapila's quiet yearning for Padmini. Had either of them acted on their feelings first, the story might have taken a very different turn though perhaps caste would then have intervened, Kapila was a blacksmith's son, whereas Padmini was intelligent, spirited, and passionate. Ironically, it was these very desires that fueled the conflict and gave it such tragic beauty.

Hidden feelings and unspoken attractions can turn into a deadly poison — whether it be an ailment of the body or desires of the heart left unfulfilled. Sometimes a single stubborn desire can either bring a lifetime of peace or steal away all your tranquility forever. Just look at Devadatta: a Brahmin by birth, learned, sensitive, fair, poetic — yet his one relentless desire snatched away all his joy and shook him to his core. His deeply emotional decision cost him dearly. In life, we must learn to be a little practical; rushing into relationships without even understanding ourselves makes it impossible to ever truly understand our partners.

Even in our modern times, we see the same struggles. Whether married or unmarried, people grapple with these very issues. **Loyalty has become a rare treasure — only a handful remain wholly faithful to their partners, and cruelly enough, even they often end up being betrayed, clueless about what is brewing behind their backs.**

Despite recognizing the true nature of Padmini and Kapila's bond, Devadatta admirably upholds the dignity of his own relationships until the very end. His final actions powerfully reveal both his hidden desires and the profound personal anguish he had long carried in silence.

With the weight of his vow heavy upon his heart, Devadatta stepped across the sacred threshold of the Kali temple. The air seemed to hum with a solemn grandeur, perfectly suited to the momentous decision he was about to make. He stood there - not with boastful pride, but with the quiet dignity of a man fully embracing his destiny.

"***For Kapila and Padmini, for their laughter and the life they might yet share," he spoke, his voice ringing through the stillness, "I give this—my very breath, my very essence. May their happiness flourish, unbound and radiant, like a garden where my soul may forever find its rest."***

It was a declaration of love—fierce, selfless, and unyielding—etched into the timeless fabric of existence, a sacrifice so profound that it seemed to elevate the very air around him.

Human desires can never be entirely fulfilled; it is a fundamental truth. There is no medicine for it, nor will there ever be. As **Oscar Wilde** so poignantly said:

"In this world there are only two tragedies: one is not getting what one wants, and the other is getting it."

Where Hearts Are Earned, Not Demanded: Lessons in True Connection-

Essential and necessity — two words often tossed around as if they're interchangeable, yet they couldn't be more different. An essential person is someone who holds irreplaceable value in our lives, someone who vibes with our soul on a level so deep that imagining life without them feels incomplete. On the flip side, a necessity reduces someone to a function, to merely satisfying a need — whether it's physical, emotional, or mental — often involving a trade-off of effort, money, or energy.

In relationships, these two elements tend to blur. We're all guilty of getting swept away by sweet gestures and thoughtful efforts that make us feel special. But at the end of the day, trust remains the ultimate non-negotiable**.As W. B. Yeats put it, "Hearts are not to be had as a gift; hearts are to be earned" (Yeats).**

Whether it's love or raw attraction, drama is inevitable- something that rings true not just in timeless literature but also in the everyday stories of our own lives. Think about it: we rarely go searching for replacements or nitpicking flaws in the love of our parents or siblings, even when they slip up. Why? Because we've accepted them, flaws and all, without expecting anyone else to take their place. If this kind of unconditional acceptance became the standard blueprint for all our relationships, maybe the complications we keep spiraling into wouldn't exist. Padmini, the heartbeat of Hayavadana, is the perfect mirror to this dilemma. She becomes the center of gravity around which every other character spins. Karnad, by putting a woman right at the core of his play, doesn't just highlight the power of beauty — he digs deep into how beauty can trigger desires, choices, and consequences that ripple through everyone's lives.

We often say that Lord Ganesha removes obstacles, and so we begin every good work by first worshipping him. But have we ever truly thought about how even he had to pay a price at one point in his life? It shows how destiny works—no matter who you are, you must sometimes bear the weight of your own mistakes. There is a saying that a person becomes worthy only after passing through certain trials; otherwise, their value is like water that easily slips through your fingers.

Conclusion

Padmini's turmoil arises from her own choices, and each character must bear the weight of their decisions. Her actions expose her hypocrisy and disloyalty as she manipulates both Kapila and

Devadatta — distinguishing between who is essential to her emotional needs and who is merely a necessity to satisfy her physical or intellectual longings.

This intricate dynamic mirrors human nature's tendency to dwell in illusion, only to awaken later to the consequences of misguided choices. Ultimately, both Devadatta and Kapila fall prey to these entanglements, meeting tragic ends as they duel and destroy each other. Burdened by guilt and despair, even Padmini cannot escape the ruin set in motion by her own desires, leading her to end her life.However, Padmini realizes that we often grasp life's truths only after losing everything—something that becomes clear when she thinks of her son just before her death, as she goes to perform Sati. The stories of Lord Ganesha, Padmini, and Hayavadana all reveal important truths about love, sacrifice, and the ties that shape our lives. Lord Ganesha's story shows how even divine beings must face pain and loss—his head was cut off by Lord Shiva in a moment of anger, and only the deep love of his mother, Goddess Parvati, brought him back to life. In Hayavadana, Padmini is shown not just as a wife or woman limited by society, but as a devoted mother. She makes careful choices for her son's future, hoping he can grow strong and free like Kapila in the forest, and later wise and thoughtful like Devadatta in the city. In doing this, she quietly wishes he will live a life better than hers and avoid the mistakes she made.

Bhagavata, who at the beginning of the play, considered Ganesha, an incomplete being, because He has an Elephant-head and human body. But at the end of the play, he praises Ganesha:"*Unfathomable indeed is the mercy of the Elephant-headed Ganesha. He fulfils the desire of all – a grandson to grandfather, a smile to a child, a neigh to a horse. How indeed can one describe his glory in our poor, disabled words?"(139)*

Together, these stories remind us of a timeless truth: the purest bond in life is the love between a mother and her child. ***As Ramakrishna beautifully said, it is the highest kind of relationship, full of selfless care. Through these tales, we see how a mother's love can heal what is broken and guide lives toward peace and fulfillment.***

I have tried my best to deal with the theme of my paper titled *Hayavadana: The Invincible Imperfection and Earthly Desire*, I have tried to explore the theme of human imperfection. This theme can be understood in many ways, especially when it comes to making mistakes and facing their consequences. In the play, Karnad's skill as a writer is clear through his

portrayal of real people in real situations. Because of this, we can relate his work to our own lives, and it stays meaningful for every future generation. In this way, his plays continue to give valuable lessons and new messages to society.Through this, each generation can discover timeless lessons and fresh meanings, reminding society again and again of the subtle dangers of being blinded by outward allure.

Works Cited

- Babu, M. Sarat. "The Concept of Chastity and Naga-Mandala." The Plays of Girish Karnad: Critical Perspectives, edited by Jaydipsinh Dodiya, Prestige Books, 1999, pp. 75–82.
- Bala, A. "Mythological Aspects in Girish Karnad's Naga-Mandala." Language in India: Strength for Today and Bright Hope for Tomorrow, vol. 14, no. 2, 2014, www.languageinindia.com/feb2014/abalamythologicalaspectskarnad.pdf.
- Bhatta, S. Krishna. "Indo-Anglian Drama: Why Meager Achievement?" Journal of South Asian Literature, vol. 22, no. 2, Essays on Indian Writing in English, Summer–Fall 1987, pp. 190–93. Asian Studies Center, Michigan State University.
- Bisaria, Subhash. Girish Karnad: Hayavadana. Rama Brothers India Pvt. Ltd., 2017.
- Butler, Judith. Gender Trouble. Psychology Press, 1992.
- Chaudhary, Soham. Girish Karnad: An Inclusive Study of His Illustrious Plays. Shashwat Publication, 2020.
- Dhanavel, P. The Indian Imagination of Girish Karnad: Essays on Hayavadana. Prestige, 2000.
- Dharwadkar, Aparna Bhargava. "Introduction." Collected Plays: Volume One, by Girish Karnad, Oxford UP, 2005, pp. ix–xxxi.
- Dwivedi, Manisha. "Search for Identity in the World of Tangled Relationships in Girish Karnad's Hayavadana." Journal of Literature Culture and Media Studies, vol. 4, nos. 7–8, Jan.–Dec. 2012, pp. 234–42.
- Gill, L. S. Girish Karnad's Hayavadana: A Critical Study. Asia Book Club, 2005.
- Gupta, Mahendra. The Gospel of Sri Ramakrishna. www.belurmath.org/gospel/index.htm.
- Gupta, Santosh. "Naga-Mandala: A Story of Marriage and Love." The Plays of Girish Karnad: Critical Perspectives, edited by Jaydipsinh Dodiya, Prestige Books, 1999, pp. 83–89.
- Joshipura, P. "Hayavadana and the Interminable Quest for Perfection." The Plays of Girish Karnad: Critical Perspectives, edited by Jaydipsinh Dodiya, Prestige Books, 1999, pp. 90–97.
- Karnad, Girish. "Prologue." Three Plays: Naga-Mandala, Hayavadana, Tughlaq, Oxford UP, 1994, pp. 1–23.
- Three Plays: Naga-Mandala, Hayavadana, Tughlaq. Oxford UP, 1994.
- Hayavadana. Three Plays: Naga-Mandala, Hayavadana, Tughlaq, Oxford UP, 2002.
- Naik, M. K. Dimensions of Indian Literature. Sterling Publishers, 1987.
- "From the Horse's Mouth: A Study of Hayavadana." Girish Karnad's Plays: Performance and Critical Perspectives, edited by Tutun Mukherjee, Pencraft International, 2008, pp. 139–48.

- "Ganesha." Wikipedia: The Free Encyclopedia, 2009, en.wikipedia.org/wiki/Ganesha.
- "History of the Theatre." Wikipedia: The Free Encyclopedia, 2009, en.wikipedia.org/wiki/Mask.
- "Mask." Wikipedia: The Free Encyclopedia, 2009, en.wikipedia.org/wiki/Mask.
- "Sermon on the Mount: The Jesus Manifesto. Adultery, Lust, and the Spirit of Marriage." JesusWalk, www.jesuswalk.com/manifesto/4_adulter.htm.
- Shastri, J. L., editor. Ancient Indian Tradition and Mythology: The Shiva Purana. vol. 1, Motilal Banarsidass, 1970, pp. 229–30.

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

प्रयागराज जनपद में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का क्रियान्वयन एवं चुनौतियाँ

प्रो0 (डॉ0) बी0पी0 सिंह
विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग
टी0आर0एस0पी0जी0 कालेज
रीवा (म0प्र0)

साधना यादव
शोध छात्रा, भूगोल विभाग
टी0आर0एस0पी0जी0 कालेज
रीवा (म0प्र0)

शोध सारांश

ग्रामीण विकास का अभिप्राय ग्रामीण क्षेत्रों मे ंनिवास करने वाले न्यून आय वर्ग के लोगों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाना और उनके विकास के क्रम को आगे बढ़ाना है। यह एक ऐसी व्यूरचना है। जिसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले निर्धन लोगों के आर्थिक और सामाजिक जीवन को उन्नत बनाना है। भारत की लगभग 72 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है तथा उनका मुख्य पेशा कृषि एवं उससे सम्बन्धित कार्य है। कृषि उत्पादकता एवं शिक्षा के बीच प्रत्यक्ष सम्बन्ध है अर्थात् शिक्षा उत्पादकता की वृद्धि में अहम् भूमिका निभाती है तथा अशिक्षा कृषि को आधुनिकीकरण तथा उच्च तकनीकों को व्यवहार में लाने का मार्ग अवरूद्ध करती है। यदि ग्रामीण क्षेत्र के कृषक शिक्षा के महत्व को स्वीकार कर ले तो ग्राम विकास की ऐसी अविरल गंगा बहेगी जिससे ग्राम जीवन के समस्त दोष बह जायेंगे। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु विकास कार्यक्रमों का कुशल क्रियान्वयन सबसे अहम चुनौती है। उक्त कार्यक्रमों का सफल निष्पादन का मुख्य भार पंचायती राज व्यवस्था पर है। अतः पंचायती राज व्यवस्था ही वह सक्षम धरातल है जिसकी छत्रछाया में ग्रामीण विकास की संकल्पना को साकार रूप दिया जा सकता है तथापि इसमें कार्मिक प्रशासन की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है तो उक्त कार्यक्रमों के सफल निष्पादन की मुख्य धुरी है। अर्थात् पंचायती राज साधन है और ग्रामीण विकास साध्य है।

प्रस्तावना –

प्राचीन काल में भारत को सोने की चिड़िया कहा जाता था। उस समय भारत की समृद्धि का आधार मजबूत एवं गतिशील ग्रामीण अर्थव्यवस्था थीं। भारत की अधिसंख्य जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है परन्तु समुचित रोजगार प्रबन्धन और सुविधाओं के अभाव में ग्रामीण जनता शहरों की ओर पलायन कर रही है। भारत विश्व का सबसे बड़ा प्रजातांत्रिक देश है। फलस्वरूप 'जनता का विकास', 'जनता के लिए विकास' तथा 'जनता द्वारा विकास' प्रमुख लक्ष्य रहा है। ग्रामीण विकास एक व्यापक संकल्पना है जिसमें लोक कल्याण, गरीबी उल्मूलन, महिलाओं एवं निम्न वर्गो को समाज की मुख्यधारा से जोड़ना, आधारभूत सुविधाएँ उपलब्ध करवाना एवं ग्रामीण जीवन का सर्वागींण विकास है।

ग्रामीण विकास केवल गांवों में विद्यालय भवन, अस्पताल, शौचालय, पंचायत भवन, कुंआ–बावड़ी निर्माण, नाली, सड़क इत्यादि बनवाना ही नहीं अपितु यह उसका एक भाग मात्र है। ग्रामीण जनता में शिक्षा का सही संचार करना, अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ाना, स्वावलम्बी बनाना तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रति प्रोत्साहित करना आदि को सम्मिलित किया जाना चाहिए। गांव हमेशा से सामाजिक, आर्थिक जीवन की महत्वपूर्ण इकाई के साथ–साथ अतीत से ही प्रशासन की महत्वपूर्ण संस्था रहा है। वैदिक काल के साहित्य में सभा और समितियों का उल्लेख मिलता है। भारत गांवों का देश है। गांवों की उन्नति और प्रगति पर ही भारत की उन्नति एवं प्रगति निर्भर करती है। ये सभा और समितियां लोगों की भलाई के लिए काम करती थी। अथर्ववेद में इस आश्य का एक श्लोक भी मिलता है।

ये ग्रामा वदरण्यं या सभा अथिभूम्याम।
ये संग्रामाः समितियस्तेषु चारू वेदम तें।।

अर्थात् पृथ्वी के ग्रामों, वनों व सभाओं में हम सुन्दर (चाक) वेदयुक्त वाणी का प्रयोग करें। मनु ने अपने साहित्य में (गाँव), पुरा (टाउन) व नागरा (शहर) तीन तरह की आबादी होने का उल्लेख किया है। ग्रामीण विकास के सन्दर्भ में गांधीजी ने सत्य कहा कि भारत गांवों का देश है और भारत की आत्मा गांवों में निवास करती है। किन्तु ग्रामीण जनसंख्या का निरन्तर शहरों की ओर पलायन हो रहा है और दूसरा पहलू यह है कि नगरों की जनसंख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हो रही है। 2011 की जनसंख्या के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या–21,01,93,422 है जिसमें ग्रामीण जनसंख्या 83,30,87,622 है कुल जनसंख्या का 68.84 प्रतिशत है जबकि शहरी जनसंख्या 37,71,05,760 है कुल जनसंख्या का 31.60 प्रतिशत है। इसी प्रकार प्रयागराज की जनसंख्या 59,81,518 है जिसमें ग्रामीण जनसंख्या 4,48,1518 है जो कुल का 75.00 प्रतिशत है। जबकि शहरी जनसंख्या 14,72,873 है जो कुल जनसंख्या का 24.89 प्रतिशत है। अतः स्पष्ट है कि भारत में जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग गांवों में निवास करता है। वर्ष 2011 के अनुसार भारत में गांवों की संख्या 640867 है।[2] वर्तमान में प्रयागराज जनपद में कुल 3074 गाँव है। इनमें से 2799 आबाद गाँव है और 275 गैर आबाद गाँव हैं।

ग्रामीण विकास की अवधाराणा –

ग्रामीण विकास की कोई सर्वमान्य तथा विवाद रहित वैश्विक परिभाषा नहीं है। अर्थशास्त्री इसे आर्थिक उत्पादकता से परिभाषित करते हैं, तो समाजशास्त्री सामाजिक परिवर्तन के सकारात्मक रूप को विकास की दृष्टि से आंकते हैं। राजनीतिक दृष्टि से लोकतंत्रीकरण तथा सरकार का विस्तार ही विकास है जो प्रशासक की दृष्टि में कुशलता तथा कार्मिक क्षमता विकास के मापदण्ड है। जी, पार्थसारथी ने ग्रामीण विकास से तात्पर्य निर्धनों के प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों के अनुकूलतम प्रयोग से उनके जीवन स्तर में सुधार से माना है। इस हेतु पूंजी एवं तकनीक का अच्छा उपयोग व गरीबों की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है।[3]

ग्रामीण विकास का अभिप्राय लोगों को होने वाले लाभों के साथ–साथ समाज के सम्पूर्ण ढांचे में होने वाले अधिकाधिक परिवर्तन से लगाया जाता है।[4] अन्तर्राष्ट्रीय पुननिर्माण एवं विकास बैंक (IBRD) के अनुसार ग्रामीण विकास लोगों के एक विशिष्ठ समूह (ग्रामीण निर्धनों) आर्थिक तथा सामाजिक जीवन में सुधार लाने के लिए अपनाई गई व्यूह रचना है। इस व्यूह रचना में लघु कृषकों, काश्तगारों और भूमिहीन कृषकों के समूह को शामिल किया जाता है।[5]

ग्रामीण विकास का सही अर्थ है, गाँव में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों का जीवन स्तर ऊँचा करना और और गांव को खुशहाल बनाना। इस प्रक्रिया में आर्थिक और सामाजिक दोनों पहलुओं का समावेश होता है।[6] ग्रामीण लोगों के लिए आर्थिक विकास की बेहतर संभावानाएं उसी स्थिति में हो सकती है जब ग्रामीण विकास प्रक्रिया में अधिकाधिक जनसहभागिता सुनिश्चित की जाए, योजना का विकेन्द्रीकरण किया जाए। भूमि सुधारों को उपादेयता से क्रियान्वित किया जाए तथा ऋण व निवेश की पर्याप्त मात्रा में व्यवस्था, शिक्षा, पेयजल, ऊर्जा आपूर्ति, स्वच्छता, आवास आदि की स्थिति में सुधार और ग्राम जनों की मनोवृतियों में परिवर्तन भी समान रूप से महत्वपूर्ण है।[7]

मिचेल पी.टोरेडो के अनुसार ग्रामीण विकास में निम्न तथ्यों पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

1. जीवन स्तर में सुधार अर्थात् रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, आवास तथा समाजिक सेवाओं में सुधार किया जाए।

2. ग्रामीण आय के वितरण में विद्यमान असमानता को कम करना तथा ग्रामों व शहरों के मध्य आय तथा आर्थिक अवसरों में संतुलन स्थापित करना।
3. ग्रामीण क्षेत्रों में सहयोग देकर उनके विकास की गति बढ़ाना।[8]

विश्व बैंक ने अपने प्रकाशित ग्रामीण विकास परिपत्र में कहा है कि ग्रामीण विकास एक रणनीति है जो ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति में एक विशिष्ट श्रेणी के व्यक्तियों को लाभान्वित करने के लिए है। यह श्रेणी ग्रामीण निर्धन व्यक्तियों की है जिसमें छोटे किसान, भूमिहीन और स्त्रियाँ प्रमुख है। अगर विकास इस श्रेणी के व्यक्तियों को नहीं छू पाता तो इसका कोई अर्थ नहीं है।[9] होशियार सिंह ने ग्रामीण विकास को एक लचीली संकल्पना बताया है। जिसका सम्बन्ध ग्रामीण क्षेत्रों से है। इसमें कृषि विकास, सामाजिक–आर्थिक संरचना, उचित मजदूरी, भूमिहीनों को भूमि एवं आवास, ग्रामीण नियोजन, जनस्वास्थ्य, शिक्षा, साक्षरता, सम्प्रेषण इत्यादि सम्मिलित है।[10]

रविन्द्रनाथ ठाकुर के अनुसार, ग्रामीण विकास एक ऐसा प्रयास है जो गांवों की संस्कृति को बरकरार रखते हुए आधुनिक संसाधनों के उपयोग से ग्रामीणें के आर्थिक, सामाजिक, बौद्धिक व नैतिक उत्थान में सहायक हो।[11] विभिन्न विकास कार्यक्रमों के माध्यम से गांवों में गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहे परिवारों को गरीबी रेखा परिसम्पत्तियों का निर्माण करना, सामाजिक–आर्थिक दशा को बेहतर बनाने के लिए व्यक्तिग लाभ की योजनाओं को बेहतर बनाने के लिए और आधारभूत संरचनाओं का निर्माण करना आदि ग्रामीण विकास के प्रमुख घटक कहे जा सकते हैं।[12]

ग्रामीण विकास को यदि संकुचित अर्थ में लिया जाए तो कह सकते हैं कि कृषि उत्पादन में वृद्धि ही ग्रामीण विकास है। किन्तु कृषि उत्पादन बढ़ाने मात्र से ग्रामीणों की सर्वांगीण उन्नति के दृष्टिकोण से आंकना होगा। ग्रामीण क्षेत्रों के सम्पूर्ण जीवन की गुणवत्ता में सुधार ही ग्रामीण विकास का अन्तिम ध्येय। है। अतः ग्रामीण विकास का एक व्यापक एवं सार्थक दृष्टिकोण अपनाना होगा जिसमें अधारभूति सुविधाओं के उन्नयन के साथ ही कृषि का सम्पूर्ण विकास कर उत्पादन में तेजी से वृद्धि अंकित हो सके। इसके अन्तर्गत सिंचाई, विद्युत और भूमि सुधार के साथ–साथ मूलभूत आवश्यकाओं रोटी, कपड़ा और मकान के संसाधन जुटाने के साथ ही रोजगार के अवसरों में वृद्धि करके गरीबी पर सीधा प्रहार किया जाए जिससे ग्रामीण विकास की संकल्पना को परिणामोंन्मुखी की ओर उन्मुख किया जा सके।

ग्रामीण विकास एवं पंचायता राज –

ग्रामीण विकास वर्तमान जीवन की आवश्यकता ही नहीं अपितु अपरिहार्य है, क्योंकि आजादी के 70 वर्षो के बाद भी हमारे गांव आज भी उपेक्षित हैं। गरीबी एवं अशिक्षा ऐसे कारक हैं जिसमें सम्पूर्ण ग्रामीण विकास को प्रक्रिया को अवरूद्ध किया हुआ है। ग्रामीण विकास इसलिए भी अनिवार्य है कि सदियों से ग्रामीण समुदाय (विशेषकर अनुसूचित जाति/जनजाति/महिला वर्ग) अन्धविश्वास एवं सामाजिक कुरूतियों के जंजाल में फंसा हुआ है। अर्थात शिक्षा एवं रोजगार के साथ–साथ सामामजिक परिवर्तन भी आवश्यक है जिससे कि ग्रामीण समुदाय राष्ट्र के आर्थिक विकास को गति प्रदान कर सकें। वह तभी सम्भव है जब गांवों में विकास कार्यक्रमों का क्रियान्वयन सशक्त ढंग से सम्भव हो। अतः ग्रामीण विकास को एक कार्यक्रम ही नहीं अपितु एक आन्दोलन के रूप में अपनाना होगा। यह आन्दोलन तभी सफलता की मंजिल पा सकता है जब समग्र विकास कार्यक्रमों का सफल एवं प्रभावी निष्पादन हो।

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का सफल एवं प्रभावी क्रियान्वयन का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व अन्ततोगत्वा पंचायती राज व्यवस्था पर आ गया है। क्योंकि राज्य एवं जिला प्रशासन केवल पर्यवेक्षण एवं मूल्यांकन करते हैं। वास्तविक धरातल पर उक्त कार्यक्रमों का निष्पादन पंचायती राज द्वारा किया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों का विकास करना एवं रह रहे लोगों की सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों में सुधार लाना प्रारम्भ से ही

विकास योजना का मुख्य ध्येय रहा है। इस तथ्य को स्वीकार करते हुए कि केवल आर्थिक विकास से ही समाज के अत्यधिक उपेक्षित वर्गो को लाभ नहीं पहुचाया जा सकता। इसलिए सरकार ने कमजोर वर्गो पर ध्यान केन्द्रित करते हुए प्रत्यक्ष हस्तक्षेप का सहारा लिया है। ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय ने ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादन एवं सामाजिक विकास में सुधार करने के लिए आधारभूत ढांचे के संवर्धन के अतिरिक्त ग्रामीण गरीबी एवं प्रत्यक्ष प्रहार करते हुए परिसम्पत्तियों के सृजन और मजदूरी रोजगार कार्यक्रमों के जरिये निर्धनतम लोगों तक पहुंचने का प्रयास किया गया है।[13]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व ग्रामीण विकास के क्षेत्र में कई अग्रणी प्रयोग किये गए जिनमें मुख्य थे **रविन्द्रनाथ ठाकुर** द्वारा 'ग्राम श्री' और **महात्मा गांधी** द्वारा 'ग्राम स्वावलम्बन'।[14] स्वतंत्र भारत में ग्रामीण क्षेत्रों का जो ढ़ाँचा है उसमें आर्थिक एवं सामाजिक विषमता को दूर करने के लिए कृषि कार्य में सुविधा, लगान की छूट, शिक्षा व स्वास्थ्य की उचित व्यवस्था और समानता का अधिकार आदि अनेक प्रकार की कल्याणकारी योजनाओं की पूर्ति की आशा सरकार से की जाने लगी। सरकार ने ग्रामीण विकास नीति के अन्तर्गत समुदायों को साधनों की उपलब्धता के अनुरूप विकास कार्यक्रमों का लाभ पहुंचाने का प्रयास से किया। स्वतन्त्रता से पूर्व गांवों में किसानों का शोषण रोकने के लिए सर्वप्रथम कदम जमींदारी प्रथा का उन्मूलन करके उठाया गया। इस कदम से किसानों, मजदूरों और पिछड़ों के विकास के लिए नई योजनाएँ लागू करने का मार्ग प्रशस्त हुआ।

1970 के बाद राजस्थान राज्य द्वारा गरीब और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े लोगों को गरीबी रेखा से ऊपर उठाने के लिए क्षेत्रीय स्तर पर अनेक कार्यक्रम चलाये गए। इनमें से कुछ प्रमुख कार्यक्रम इस प्रकार है – सामुदायिक विकास कार्यक्रम (1952), खादी एवं ग्रामीण उद्योग कार्यक्रम (1957), पैकेज कार्यक्रम (1960), गहन जिला कृषि कार्यक्रम (1964), जनजाति क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम (1972), न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम (1972), काम के बदले अनाज योजना (1977), मरूभूमि विकास कार्यक्रम (1977), ट्राईसेम योजना (1979), समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (1979), राष्ट्रीय रोजगार ग्रामीण कार्यक्रम (1979), नया बीस सूत्री कार्यक्रम (1982), ग्रामीण भूमीहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम (1983), ग्रामीण क्षेत्रों में महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम (1983), जवाहर रोजगार योजना (1989), महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम (2005), प्रधानमंत्री आवसास योजना (ग्रामीण) (2015), प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (2018), दीनदयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल्य योजना (2019), श्यामा प्रसाद मुखर्जी रूरल मिशन (2019), राष्ट्रीय ग्रामीण आजिवका मिशन (2019), वर्तमान समय में राज्य द्वारा प्रयोजित आई.आर.डी.पी. एवं जे.आर.वाई ग्रामीण क्षेत्रों के गरीबी उन्मूलन के प्रमुख कार्यक्रम हैं।

गांवों का बहुमुखी विकास करने में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उक्त संस्थाएँ इन कार्यक्रमों को क्रियान्वित कर रही हैं। इस प्रकार इनका प्रमुख उद्देश्य गरीबी की रेखा से जीवन यापन करने वाले ग्रामीण परिवारों को रोजगारकारी व साधनहीनता के आभास से मुक्ति एवं स्वरोजगार पाना है।[15] ग्रामीण विकास कार्यक्रम पर दिये गये अधिक बल को ध्यान में रखते हुए रिपोर्ट के मुताबिक 2018–19 में 69809 करोड़ रूपये ग्रामीण विकास हेतु मनरेगा के अन्तर्गत खर्च किये गये। वर्ष 2024–25 में ग्रामीाण विकास मंत्रालय को 180233 करोड़ रूपये बजट आवंटित किये गय है। जिससे ग्रामीण भारत का विकास तेजी से किया जा सके। बढ़ती हुई इस प्रवृति को वर्ष 2025–2026 में भी बनाए रखा जायेगा।[16]

विकास योजनाओं के निष्पादन सम्बन्धी चुनौतियाँ –

ग्रामीण विकास योजनाओं के क्रियान्वयन में पंचायती राज और कार्मिक प्रशासन की राष्ट्रीय भागीदारी उपलब्ध कराने हेतु सरकार द्वारा प्रभावी नीतियां बनाने की मंशा निरन्तर की जाती रही है।

विभिन्न राज्यों में पंचायती राज की स्थापना के साथ विकास कार्यक्रमों के समस्त क्रियान्वयन एवं गांवों के समग्र विकास हेतु उत्तरदायी बनाया गया किन्तु दुर्भाग्य यह रहा कि उक्त संस्थाएँ अपेक्षाओं के अनुरूप लक्ष्य प्राप्ति में असफल रहीं।

पंचायती राज के प्रारम्भ से लेकर आज तक यह दुर्भाग्य रहा है कि इनका स्वयं का कोई स्टाफ नहीं है। यहाँ कार्यरत सभी कर्मचारी प्रतिनियुक्ति पर कार्य करते हैं जिससे अधिसंख्य कर्मचारी असंतुष्ठ पाये गये और वे अपने गृह विभाग में जाने को आतुर रहते हैं। इस असंतुष्टि का घातक परिणाम यह होता है कि वे विकास कार्यक्रमों के संचालन में विशेष रूचि नहीं लेते और अपने इस काल को अवकाश काल मानकार समय व्यक्तिगत करने का मानस बना लेते हैं। यद्यपि ग्राम पंचायतों में कुछ पदों पर ग्राम सेवकों की नियुक्ति की जाती है, किन्तु पदोन्नति के अवसर से वंचित रखने के कारण वे जिस पद से कार्य शुरू करते हैं उसी पद से सेवानिवृत्ति हो जाते है। अतः विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन की यह मुख्य समस्या बनी हुई है। इसके अतिरिक्त कुछ प्रमुख चुनौतियां निम्न प्रकार हैं –

1. ग्रामीणों में सक्रिय सहभागिता का अभाव
2. जिला एवं राज्य स्तरीय कठोर नियंत्रण से द्वेध शासन की पुनरावर्ती।
3. निर्वाचित जनप्रतिनिधियों (विशेषकर महिलाओं) के लिए समुचित प्रशिक्षण का अभाव।
4. पंचायती राज के सरकारी एवं गैरसरकारी सदस्यों में सत्ता संघर्ष के कारण शीत युद्ध का प्रारम्भ।
5. भ्रष्टाचार एवं लालफीताशाही के चक्रव्यूह में दम तोड़ती शासन व्यवस्था।
6. जनप्रतिनिधियों एवं प्रशासकों में स्वहित हेतु निर्मित गठबंधन।
7. विभिन्न विकास कार्यक्रमों में एकरूपता का अभाव एवं आंशिक प्रचार–प्रसार।
8. विकास कार्यक्रमों के लाभ की जटिल प्रक्रिया एवं अनावश्यक औपचारिकता।
9. अशिक्षा एवं जागरूकता का अभाव मुख्य चुनौतियाँ।
10. महिला जन प्रतिनिधियों के प्रति भारतीय मानसिकता में आंशिक परिवर्तन इत्यादि।

निष्कर्ष एवं सुझाव –

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का सफल क्रियान्वयन से सम्बन्धित मनुष्यों (कार्मिकों, जनप्रतिनिधियों एवं सामान्य जनसमूह) के कार्य व्यवहार तथा उनके सामाजिक–आर्थिक व शैक्षणिक परिवेश से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होते है। हमारे गांवों की अधिसंख्य जनता अशिक्षा एवं अन्धविश्वास के दलदल से अभी तक निकल पाने में असमर्थ रही है। इस सन्दर्भ में हमारी सरकारें कम दोषी नहीं है, क्योंकि यदि सरकार चाहे तो आने वाले दशक में इस कुचक्र से मुक्ति मिल सकती है। लेकिन वोट बैंक की राजनीति सरकार की इच्छा शक्ति का दमन करती है।

केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा विभिन्न विकास कार्यक्रम संचालित किये जा रहे हैं किन्तु उनकी प्रक्रिया अत्यधिक जटिल एवं अनावश्यक नियमों के मायाजाल में फंसी हुई है। इस अत्यन्त कठोर प्रक्रिया का लाभ भ्रष्ट कर्मचारी, सत्तालोलुप राजनीतिज्ञ तथा मध्यस्थों (दलालों) द्वारा उठाया जा रहा है। उक्त प्रणाली भ्रष्टाचार एवं लालफीताशाही को बढ़ाने में सहायक है और गरीब व लाचार जनता अपने दुर्भाग्य को कोसती रह जाती है। उक्त कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन हेतु सुझाव निम्न प्रकार है –

1. ग्राम स्तरीय सचिवालय एवं स्थायी सतर्कता समितियों की स्थापना।
2. पंचायती राज सेवा गठन एवं पृथक भ्रष्टाचार निरोधक का गठन।
3. विभिन्न विकास योजनाओं का एकीकरण एवं समग्रीकरण।
4. लाभ की प्रक्रिया तथा नियमों को लचीला व सरलीकरण किया जाए।
5. बालिका शिक्षा एवं ग्रामीण जागरूकता व जनसहभागिता पर विशेष बल।

6. सामाजिक कुरूतियों से निपटने के लिए विधि का कठोरता पूर्वक क्रियान्वयन एवं निष्पादन।
7. बजट का प्रभावी क्रियान्वयन एवं लेखा परीक्षण में तीव्रता।
8. पंचायती राज जनप्रतिनिधियां के लिए समुचित प्रशिक्षण व्यवस्था।
9. वास्तविक गरीब तक योजनाओं का लाभ पहुॅचाने की गारंटी।

अन्त में कहा जा सकता है कि विकास कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन में प्रमाणिक तथ्य यह है कि एक और हमारी लोक सेवा अपने–आपको विकास प्रशासन के अनुरूप ढाल पाने में असमर्थ रही है। लोक सेवकों में आज भी अहंवादी भावना, संवेदनशीलता का अभाव, मूल्यविहीन दृष्टिकोण तथा नीतियों व कानूनों के माध्यम से अनुचित प्रभाव जमाने की भावना निहित है। वहीं दूसरी ओर सामान्य जनता में शिक्षा एवं जागरूकता का अभाव है। आज भ्रष्टाचार ने शिष्टाचार एवं लालफीताशाही ने सम्मान का रूप धारण कर लिया है। इस व्यवस्था में सामान्य जनसमूह की तो मिसाल ही क्या, बुद्धिजीवी एवं राजनेता भी नतमस्तिष्क हो जाते है। अतः सामान्य जन को स्वयं अपना दीपक बनना होगा। उनकी सहभागिता, शिक्षा एवं जागरूकता ही ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन की मंजिल है।

सन्दर्भ सूची –

1. महिपाल, पंचायती राज, चुनौतियां एवं सम्भावनाएँ, नेशनल बुक ट्रस्ट, 2021 पृ0 4–5
2. कटारिया, सुरेन्द्र, भारतीय लोक प्रशासन, जयपुर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 2020, पृ0 64
3. पार्थसारथी, जी. इन्टीग्रेटेड रूरल डवलपमेंट : कन्सेटट थ्योरिकल बेस एण्ड कन्ड्राक्शन इन रूरल डवलपमेन्ट इन इण्डिया (एडीटेड) दिल्ली, एग्रीकोल पब्लिशर्स 2018, पृ0 25
4. यादव, सुब्रजह सिंह व सत्यभवन, ग्रामीण विकास का आधुनिक दर्शन, जयपुर सब्लाइन पब्लिकेशन, 2019, पृ0 2
5. स्वामी, एच.आर व गुप्ता, बी.सी. विकास एवं सहकारिता, जयपुर, रमेश बुक डिपो, 2021, पृ0 2
6. मिचेल पी0टोरेडों, इकॉनोमिक्स फॉर डवलपिंग वर्ल्ड, लन्दन, लागमान ग्रुप 2023, पृ0 249
7. जाट, सांवर लाल एवं शर्मा प्रकाश, ग्रामीण विकास एक अध्ययन (ग्रामीण विकास के बन्धक पहलू) सबलाइम पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2022, पृ0 6
8. सरदाना, जयबाला, गैरसरकारी संस्थाएँ और ग्रामीण विकास, ग्रामीण विकास समीक्षा, खण्ड–2, अंक 22, जुलाई–दिसम्बर, 2021, एन.आई. आर.डी. हैदराबाद, पृ. 71
9. माहेश्वरी, एस.आर.रूरल डवलपमेंट इन इण्डिया, नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशन्स, 2024, पृ.18
10. सिंह, होशियार, एप्रोचेज टू रूरल डेवलपमेंट इन इवेल्यूवेटिव सर्वे (एडिटेड) डवलपमेंट इन इण्डिया जयपुर, प्रिन्टवेल पब्लिशर्स, 2022, पृ09
11. शर्मा, बी.जी., जनसहभागिता से ग्रामीण विकास, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2019 पृ0 58
12. नारायण इकबाल, पंचायती राज एडमिनिस्ट्रेशन इन राजस्थान, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 2018
13. कुरूक्षेत्र, नवम्बर 2021, पृ0 13
14. योजना, दिसम्बर, 2022, पृ0 2
15. पंचायती राज का नवीन स्वरूप, ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज विभाग, जयपुर, 2.024, पृ0 39
16. भारत सरकार, ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय, वार्षिक रिपोर्ट 2023–24, पृ0 9

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

वर्तमान शिक्षा प्रणाली पर सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रभाव

पूजा देवी
शोध छात्रा, समाजशास्त्र विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,वाराणसी
Poojadevi6242@gmail-Com

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र वर्तमान शिक्षा प्रणाली में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी पर आधारित है। आज का युग विज्ञान तकनीकी का युग है। वैज्ञानिक आविष्कारों ने मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष एवं क्रिया को प्रभावित किया है, इसके प्रभाव से शिक्षा भी अछूती नहीं रही है। आज शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन आ रहा है। जिससे ज्ञान की नित नवीन शाखाओ का विकास हो रहा है। इस ज्ञान को आत्मसात करने, ज्ञान का संचय करने, प्रसार और वृद्धि एवं संप्रेषण के लिए विकसित तकनीकी ज्ञान एवं उपयोग की आवश्यकता है, और इस आवश्यकता की पूर्ति केवल सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी द्वारा ही संभव है। शिक्षा से संबंधित सभी आयामों शिक्षण, अधिगम, संप्रेषण, मापन एवं मूल्यांकन,प्रस्तुतीकरण शोध प्रकाशन, प्रसारण, शैक्षिक आकाङो का संकलन व विश्लेषण,शिक्षण विधियां, प्रविधिया व युक्तियों के विकास आदि सभी क्षेत्रों में सूचना एवं संचार तकनीकी की उपादेय है। दूरस्थ शिक्षा में समाज व अधिगमकर्ता के अनुकूल शैक्षिक योजनाओं के नियोजन एवं प्रस्तुतीकरण में सूचना एवं संचार तकनीकी अत्यंत प्रभावकारी साधन है,तथा साथ ही जिसके द्वारा संचार तकनीकी के माध्यमो से नवीनतम ज्ञान को औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा के क्षेत्र में अधिक से अधिक उपयोग में लाने का प्रयत्न किया जाता है,जिससे सीखने सिखाने की व्यक्तिगत व सामूहिक दोनों प्रकार की प्रक्रिया में प्रयुक्त किया जाता है।

मुख्य शब्द– शिक्षा, तकनीकी, संचार,संप्रेषण, सूचना, राष्ट्रीय शिक्षा नीति, प्रौद्योगिकी।

प्रस्तावना –

शिक्षा पूर्ण मानव क्षमता को प्राप्त करने एवं एक न्याय संगत और न्याय पूर्ण समाज के विकास और राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिए मूलभूत आवश्यकता है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुंच प्रदान करना वैश्विक मंच पर सामाजिक न्याय और समानता, वैज्ञानिक उन्नति, राष्ट्रीय एकीकरण और सांस्कृतिक संरक्षण के संदर्भ में भारत की सतत प्रगति और आर्थिक विकास की कुंजी है।सार्वभौमिक उच्च स्तरीय शिक्षा वह उचित माध्यम है जिससे देश की समृद्धि प्रतिभा एवं संसाधनों का सर्वोत्तम विकास और संवर्धन है, जिससे व्यक्ति,समाज,राष्ट्र और विश्व की भलाई के लिए किया जा सकता है।

भारत द्वारा 2015 में अपनाए गए सतत विकास एजेंडा 2030 के लक्ष्य 4 (एसडीजी 4) में परिलक्षित वैश्विक शिक्षा विकास एजेंडा के अनुसार विश्व में 2030 तक सभी के लिए समावेशी और समान गुणवता युक्त शिक्षा सुनिश्चित करने और जीवन – पर्यंत शिक्षा के अवसरों को बढ़ावा दिए जाने का लक्ष्य है। इस तरह के लक्ष्य के लिए संपूर्ण शिक्षा प्रणाली को समर्थन और अधिगम को बढ़ावा देने के लिए पुनर्गठित करने की आवश्यकता होगी, ताकि सतत विकास के लिए 2030 एजेंडा के सभी महत्वपूर्ण टारगेट और लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।

शिक्षक ही शिक्षा का प्रमुख बिंदु है। नई एवं तकनीकी जानकारियाँ या किसी भी विषय का संपूर्ण एवं विधिक जानकारी इंटरनेट से लेकर वे शिक्षण में अपना पूरा योगदान देते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में सूचना

और संचार प्रौद्योगिकी (आई.सी.टी) के माध्यम से किसी भी समय कहीं भी संचार माध्यम से ज्ञान को अर्जित किया जा सकता है, और उच्च शिक्षण संस्थानों की प्रभावशीलता को बढ़ रही है। यह शिक्षा एवं साक्षरता की आंदोलन में भी काफी मददगार है। रेडियो, टेलीविजन,संगणक,इंटरनेट, मोबाइल,सोशल साइट्स आदि का उपयोग आज शिक्षा के क्षेत्र में अकल्पनीय एवं विस्तृत है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति देश में समावेशी एवं गुणवत्ता युक्त शिक्षा प्रदान करने की दिशा में एक प्रगतिशील एवं सकारात्मक कदम है।देश की समृद्धि, वैभव एवं उत्कर्ष के लिए जनमानस में मौलिक ज्ञान का होना आवश्यक है, इसके लिए जरूरी है देश में शिक्षा की श्रेष्ठ बुनियादी का निर्माण।चुकि शिक्षा का पहला और बुनियादी पड़ाव विद्यालय है, इसलिए विद्यालय शिक्षा के महत्व को समझते हुए देश की स्वतंत्रता की पश्चात से ही अपने देश में विद्यालय शिक्षा के स्तर को बेहतर बनाने के लिए कई प्रयास एवं दावे किए गए। प्राचीन काल से ही अपने देश के विद्यालयों में विद्यालयी शिक्षा भारतीय समाज में जीवन ज्योति थी, जो सदियों से भारतीय संस्कृति, सभ्यता का पोषण करके भारतीय ज्ञान, परंपरा,सदाचार आदि को अक्षुण बनाए रखती थी।

वर्तमान शताब्दी को सूचना एवं संचार के क्षेत्र में क्रांति युग के नाम से जाना जाता है। सूचना एवं संचार तकनीकी ने मानव जीवन को न केवल सरल व सुगम बनाया अपितु कम श्रम में अधिकतम प्रतिफल तथा श्रम शक्ति के समुचित अधिकतम उपयोग का मार्ग प्रशस्त किया है। शिक्षण प्रक्रिया के प्रत्येक स्तर व पक्ष में इन तकनीकियों का उपयोग प्रभावशाली तरीके से किया जा रहा है। जैसे – शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया, दुरस्थ शिक्षा, मुक्त शिक्षा, प्रशिक्षण,कार्यक्रम निर्माण योजना, प्रश्न पत्र निर्माण,परीक्षा परिणाम व मूल्यांकन प्रक्रिया आदि में इस साधनों का प्रयोग बहुतायत में किया जा रहा है।

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य –

कोई भी अध्ययन कार्य तब तक सफल एवं महत्वपूर्ण नहीं हो सकता है, जब तक वह केंद्रित एवं उद्देश्यपूर्ण न हो इस दृष्टि से प्रस्तुत शोध पत्र के उद्देश्यों को निम्नवत लिपिबद्ध करने का प्रयास किया जा रहा है।

1– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के शिक्षा प्रणाली का अध्ययन करना।

2– वर्तमान शिक्षा प्रणाली में सूचना एवं जनसंचार प्रौद्योगिकी का अध्ययन करना

प्रस्तुत अध्ययन का स्रोत–

प्रस्तुत अध्ययन के तथ्य संकलन के लिए दितीयक स्रोतों का चुनाव किया गया है। जिसके अंतर्गत विषय से संबंधित प्रकाशित शोध प्रबंध पुस्तके एवं समाचार पत्र – पत्रिकाएं और प्रकाशित / अप्रकाशित प्रलेख शोध पत्रिकाएं तथा इंटरनेट आदि के माध्यम से तथ्यों का संकलन किया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति :

शिक्षा किसी भी राष्ट्र को विकसित राष्ट्र बनाने का सबसे मजबूत स्तंभ होता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इक्कीसवीं सदीं के भारत की पहली शिक्षा नीति है। केंद्र सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को स्वीकार किया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मुख्य उद्देश्य 34 वर्ष पुरानी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 को पुनरू स्थापित करना है। वर्ष 1968 और 1986 के बाद स्वतंत्र भारत की तीसरी शिक्षा नीति है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में शिक्षा की पहुंच,समानता, गुणवत्ता, बहनीय शिक्षा और उत्तरदायित्व जैसे विषयों पर विशेष ध्यान दिया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के निर्माण के लिए जून 2017 में पूर्व इसरो ISRO के प्रमुख डॉ.के.कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया। जिसे भारत सरकार द्वारा 29 जुलाई 2020 को राष्ट्रीय शिक्षा की नीति के रूप में घोषित किया गया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 मुख्यतः चार भागों में विभाजित है, और इसके अंतर्गत 27 अध्याय हैं। प्रथम भाग स्कूली शिक्ष। दूसरा भाग उच्चतर शिक्षा। तीसरा भाग केंद्रीय विचारणीय मुद्दे जो व्यावसायिक शिक्षा, प्रौढ शिक्षा, प्रौद्योगिकी एवं भारतीय

भाषाओं कला और संस्कृति से संबंधित नीतियों के संबंध में है। भाग चार इस संपूर्ण राष्ट्रीय शिक्षा नीति का क्रियान्वयन कैसे किया जाए इसकी रणनीति पर आधारित है। इस शिक्षा नीति में छात्रों में रचनात्मक सोच,तार्किक निर्णय, नवाचार की भावना को प्रोत्साहित करने पर बल दिया गया है।

•राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत केंद्र सरकार व राज्य सरकार के सहयोग से शिक्षा क्षेत्र में देश की जी.डी.पी (GDP) के 6 प्रतिशत हिस्से के बराबर निवेश का लक्ष्य रखा गया है।

'कैबिनेट द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत मानव संसाधन प्रबंधन मंत्रालय (Ministry of Human Resource Development MHRD) का नाम बदलकर शिक्षा मंत्रालय (Education Ministry) कर दिया गया है ताकि शिक्षा और सीखने की ओर ध्यान आकर्षित किया जा सके।

'राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने वर्तमान में सक्रिय 10़2 प्रणाली को क्रमशः 3–8,8–11,11–14 और 14–18 वर्ष की आयु के अनुसार एक नया शैक्षिक पाठ्यक्रम को 5़3़3़4 शिक्षा प्रणाली के आधार पर विभाजित करने की बात कही गई है।

'इस शिक्षा नीति में कक्षा– 5 तक की शिक्षा में मातृभाषा / स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा को अध्ययन के माध्यम के रूप में अपनाने पर बल दिया गया है, साथ ही साथ इस शिक्षा नीति में मातृभाषा को कक्षा– 8 और भविष्य की शिक्षा के लिए प्राथमिकता देने का सुझाव दिया गया है।

'वर्तमान शिक्षा नीति में तकनीकी शिक्षा, भाषाई बाध्यताओं को दूर करने, दिव्यांग छात्रों के लिए शिक्षा को सुगम बनाने आदि के लिए तकनीकी के प्रयोग को बढ़ावा देने पर बल दिया गया है।

'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत वर्ष 2030 तक सकल नामांकन अनुपात (Gross Enrolment Ratio GRE) को 100ः लाने का लक्ष्य रखा गया है।

सूचना एवं संचार तकनीकी का अर्थ :

सूचना एवं संचार तकनीकी से तात्पर्य उस सूचना संप्रेषण तकनीकी से है। जिसके माध्यम से संप्रेषण कार्य अत्यधिक प्रभावी ढंग से संपन्न किया जाता है। इसका संबंध वैज्ञानिक तकनीकी के ऐसे संसाधनों व साधनों से होता है, जिसके माध्यम से त्वरित गति से सूचनाओं को प्रभावी ढंग से आदान–प्रदान किया जा सके। इसे सामान्य अर्थ में यह कहा जा सकता है कि षकिसी तथ्य या सूचना को जानना एवं उसे तुरंत उसी रूप में आगे पहुंचाना जिस रूप में वह है ,सूचना संचार प्रौद्योगिकी कहलाता है। "

इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के अनुसार – " एक व्यक्ति या संस्थान से दूसरे व्यक्तियों या संस्थान तक एक बात को पहुंचना सूचना कहलाता है, जबकि संचार का अर्थ है सूचना या अन्य किसी तथ्य का एक स्थान से दूसरे स्थान तक गमन। "

प्रो. पीटर्स का मानना है की सूचना तकनीकी ज्ञान, कौशल तथा अभिवृत्ति प्रदान करने की एक नवीन तथा उभरती हुई विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली एक शैक्षिक प्रक्रिया है। जिसमें समय और स्थान के आयामो का शिक्षण एवं अधिगम में कोई हस्तक्षेप नहीं होता है। इस तकनीकी के माध्यम से दूरस्थ विद्यार्थियों को भी उत्तम गति से शिक्षा प्रदान की जा सकती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में सूचना एवं संचार तकनीकी :

राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मुख्य प्रावधान प्रौद्योगिकी का उपयोग एवं एकीकरण है। आज हम देख रहे हैं कि डिजिटल इंडिया अभियान पूरे राष्ट्र को डिजिटल रूप से सशक्त समाज और ज्ञान अर्थव्यवस्था में बदलने में मदद कर रहा है। प्रौद्योगिकी ही शैक्षिक प्रक्रियाओं और परिणामो के सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी, इस प्रकार सभी स्तरों पर प्रौद्योगिकी और शिक्षा के बीच संबंध दि –दिशात्मक है।

एक शिक्षक सीमित छात्रों को अपने ज्ञान से लाभान्वित कर सकता है। परंतु माइक, रेडियो, दूरदर्शन,मोबाइल, इंटरनेट, ऑनलाइन क्लास के प्रयोग से वह असंख्य छात्रों को अपना ज्ञान प्रदान कर सकता है। शिक्षा तकनीकी के परिणाम स्वरुप शिक्षा प्रक्रिया बदल चुकी है। वैश्विक महामारी के समय करोना काल में भी शिक्षार्थियों तक शिक्षा की निर्बाध पहुंच सुनिश्चित करने के लिए कक्षा– कक्ष परिस्थितियों को भी परिवर्तित कर दिया है। वर्तमान ऑनलाइन मंच का प्रयोग करके शिक्षा प्रदान करने का प्रयास किया जा रहा है। छात्रों को विभिन्न ऑनलाइन माध्यमों से ई – कन्टैंट उपलब्ध कराए जा रहे हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में ऑनलाइन और डिजिटल शिक्षा का उपयोग सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक पहल की गई है। शिक्षा की गुणवत्ता को बनाए रखना ऑनलाइन शिक्षा का अधिक से अधिक लाभ उठाना इत्यादि विषयों पर भी अध्ययन करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है। शिक्षक एवं शिक्षार्थी दोनों ऑनलाइन शिक्षा का भरपूर लाभ उठा सके, जिससे उपयुक्त प्रशिक्षण के विकास हेतु आवश्यक कदम उठाने की आवश्यकता है। इस संदर्भ में राष्ट्रीय शिक्षा नीति की सिफारिशें जिसमें ऑनलाइन शिक्षा के लिए पायलट अध्ययन डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर,ऑनलाइन शिक्षण मंच और उपकरण जैसे – आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, मशीन लर्निंग, ब्लॉकचेन,स्मार्ट बोर्ड, हेडहेल्ड कंप्यूटिंग डिवाइस, स्टूडेंट डेवलपमेंट के लिए अनुकुली कंप्यूटर टेस्टिंग और अन्य प्रकार के एजुकेशन सॉफ्टवेयर और हार्डवेयर एवं ऑनलाइन शिक्षा सामग्री का निर्माण में व अन्य विभिन्नता एवं असमानता को कम करने हेतु जनसंचार माध्यमों का अधिक से अधिक उपयोग वर्चुअल लैब डिजिटल रिपोजिटरी ऑनलाइन परीक्षा एवं मूल्यांकन इत्यादि बहुत महत्वपूर्ण है।

वर्तमान युग से लेकर आधुनिक युग तक शिक्षकों और विद्यार्थियों के बीच की गतिशीलता में काफी बदलाव आया है। विद्यार्थियों को उनकी मनोवैज्ञानिक समस्याओं,अभिप्रेरणा देने, कैरियर संबंधी विकल्पों, विषयों का चयन करने में उनकी सहायता आदि करने में एक मार्गदर्शक के रूप में अधिक आवश्यक योगदान दे रही है।

सूचना एवं संचार तकनीकी की आवश्यकता :

1– शिक्षा की बढ़ती हुई मांग की पूर्ति हेतु व विद्यार्थियों की शैक्षिक एवं व्यवसायिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए।

2– शिक्षा क्षेत्र से संबंधित विभिन्न प्रकार की प्रामाणिक एवं आद्यतन सूचनाओं की प्राप्ति हेतु।

3– विद्यार्थियों की मानसिक योग्यता व कुशलता के अनुरूप पाठ्य सामग्री को विकसित करने एवं प्रस्तुतीकरण हेतु ।

4– दूरस्थ शिक्षा के विभिन्न माध्यमों को सशक्त एवं प्रभावशाली बनाने हेतु।

5– शैक्षिक सूचनाओं एवं आंकड़ों के संकलन संग्रह व उपलब्धता का एक आधारभूत मंच बनाना जो की सभी के लिए सर्व सुलभ हो।

6– ऐसी तकनीकी संसाधनों को विकसित करने हेतु जिसके द्वारा कम समय तथा न्यून लागत में अधिकतम लोगों को लाभान्वित किया जा सके।

7– एक राष्ट्रीय तंत्र के सृजन एवं वेब– आधारित सामान्य व विशिष्ट मुक्त संसाधन विकसित करने हेतु।

8– देश एवं राज्य के प्रत्येक दुर्गम व दूरस्थ क्षेत्रों तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की पहुंच बनाने हेतु।

9– शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया को रूचिकर, सरल, सुगम एवं बौद्ध पूर्ण बनाने हेतु।

10– सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी वर्तमान समय में शैक्षणिक योजना बनाने क्रियान्वयन,नीति निर्धारण एवं निर्णय लेने में उपयोगी है।

सूचना एवं संचार तकनीकी के लाभ :

1– सूचना एवं संचार तकनीकी के साधनों के माध्यम से शैक्षिक अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावशाली एवं महत्वपूर्ण बनाया जा सकता है।

2– नवीन आई.सी.टी. के उपयोग से अभिभावकों व विद्यालयों के मध्य सकारात्मक एवं बाधा रहित संप्रेषण को बढ़ावा मिला है, जिसके सकारात्मक परिणाम विद्यालय एवं विद्यार्थी दोनों को प्राप्त हो रहे हैं।

3– शिक्षा की बढ़ती हुई मांग की पूर्ति करने एवं विद्यार्थियों की शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सूचना एवं संचार तकनीकी सहायक है।

4– शैक्षिक,व्यावसायिक, आर्थिक व वैयक्तिक सूचनाओं को एक स्थान पर संग्रहीत करने एवं उपयोग में लाने में सहायक है। जैसे आधार कार्ड, पैन कार्ड आदि डाटाबेस।

5– सूचना एवं संचार तकनीकी शिक्षा के सभी माध्यमों में जैसे – औपचारिक,अनौपचारिक तथा निरौपचारिक आदि में तकनीकी के विविध माध्यम उपयोगी एवं सहायक है।

सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी उपयोग की सीमाएं :

1– सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी के उपयोग संबंधी सुविधाएं हमारे गांव के विद्यालयों में उपलब्ध नहीं है,जो एक डिजिटल डिवाइस की समस्या बनी हुई है और न ही लोग तकनीकी उपकरण खरीदने के सक्षम है।

2– संचार तकनीकी के उपयोग से एक बड़ी आबादी वर्चुअल दुनिया में जीने लगी है। वास्तविक संबंधों के बजाय वर्चुअल दुनिया के संबंध अधिक महत्वपूर्ण होने लगे हैं।

3– सूचना संचार तकनीकी के प्रसार से वर्तमान भारतीय समाज में सामाजिक हिंसा, अपराध एवं साइबर अपराध में वृद्धि हो रही है।

4– संचार तकनीकी के प्रभावी होने से वैश्वीकरण को बढ़ावा मिल रहा है, जिससे भारतीय समाज संस्कृति को भारी नुकसान हो रहा है, और उसका अस्तित्व भी खतरे में पडने लगा है।

5– सोशल मीडिया से बच्चों की मानसिक एवं सामाजिक समस्या बढ़ रही है, जिससे बच्चे अनसोशल या असामाजिक हो जाते हैं।

6– सोशल मीडिया के अधिक प्रयोग से स्वास्थ्य की समस्या अधिक बढ़ रही है

निष्कर्ष :

राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मुख्य उद्देश्य वर्तमान भारतीय शिक्षा प्रणाली में सकारात्मक परिवर्तन लाना है। जिससे छात्रों को ऑनलाइन और डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करने के अधिक अवसर मिले।ई– लर्निंग प्लेटफॉर्म और डिजिटल संसाधनों का उपयोग बढ़ रहा है, छात्रों को विभिन्न तकनीकी कौशल,जैसे – कोडिंग, रोबोटिक्स और डेटा साइंस में प्रशिक्षण दिया जा रहा है, जिससे वे तकनीकी रूप से सक्षम बन सके। राष्ट्रीय शिक्षा नीति एक महत्वकांक्षी और व्यापक योजना है। जिसका लक्ष्य भारत की शिक्षा प्रणाली को नई ऊंचाइयों पर पहुंचना है। इस नीति को आवश्यक बनाने के लिए सभी हित धारकों के बीच सहयोग और समन्वय की आवश्यकता है। यह नीति न केवल शिक्षा को अधिक समावेशी और प्रभावी बनती है, बल्कि छात्रों के समग्र विकास पर भी जोर देती है। नई संरचना, उच्च शिक्षा में सुधार व्यावसायिक शिक्षा का महत्व और शिक्षकों का विकास सभी इस नीति की प्रमुख विशेषताएं हैं।वर्तमान शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य छात्रों को बेहतर अवसर प्रदान करना और भारतीय शिक्षा को वैश्विक मानको के अनुरूप बनाना है।इसके सफल कार्यान्वयन से भारत का भविष्य और भी उज्जवल होगा। सूचना संचार प्रौद्योगिकी ने नित्य नए विकास को और प्रभावी बना दिया है। तथा इसे विस्तृत आयाम प्रदान किया है।

संदर्भ सूची :

1– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, मानव संसाधन विकास मंत्रालय,भारत सरकार,नई दिल्ली।

2– सिंह,डॉ. अविनाश कुमार, यादव, राम डॉ राम प्रकाश सिंह,राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020ः एक समग्र अध्ययन, गंगा प्रकाशन, दिल्ली

3– सिंह,डॉ.पंकज कुमार सूचना संचार प्रौद्योगिकी एवं पुस्तकालय वाई.के.पब्लिशर्स, आगरा

4– सिंह, डॉ. मिथिलेश कुमार,भारत में सामाजिक रूपांतरण,प्रभा श्री विश्व भारती प्रकाशन,इलाहाबाद (उ. प्र.)

5&https://www-dristiias-com/hindi/burning-issues&of&the&month/new&education&policy-

6& https://www bbc-com/hindi/India&53581084

7&https://hindi-wikipedia-org/woki%Eo-

8& https://Nep 2020 -hinsali- Com/2020/08/2020[22:00] 25/01/2025]

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

दलित सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका : एक विमर्श

तेजबली
शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

सारांश

समानता, न्याय और अधिकार प्राप्ति के लिए शिक्षा महत्वपूर्ण विषय है। भारत में दलित समुदाय ऐतिहासिक रूप से सामाजिक भेदभाव, आर्थिक शोषण और शैक्षिक अवसरों की कमी से पीड़ित रहा है। यह शोध दलित सशक्तिकरण शिक्षा की भूमिका पर केन्द्रित है, इस परिप्रेक्ष्य में शिक्षा को एक शक्तिशाली उपकरण के रूप देखा गया है, जो दलित समुदाय को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक बनाने उनके सामाजिक और आर्थिक हालात सुधारने और उन्हें समाज की मुख्यधारा में शामिल करने में मदद करती है। यह दलितों को समाज में बराबरी का दर्जा प्राप्त करने और उनके साथ होने वाले भेदभाव को समाप्त करने में मदद करती है। शिक्षा दलित समुदाय को यह भी सिखाती है कि वे अपने अधिकारों के लिए लड़ सकते हैं और एक न्यायपूर्ण समाज का निर्माण कर सकते है। शिक्षा ने दलितों के आत्मसम्मान और आत्मनिर्भरता को बढ़ावा दिया है।

सरकारी योजनाएँ, जैसे समग्र शिक्षा अभियान और छात्रवृत्ति कार्यक्रम इस दिशा में सहायक साबित हुई है। हालांकि भारतीय संविधान ने इन दलित समुदाय के लिए समान अधिकार और अवसरों की गारंटी दी है। फिर भी समाज में उनका उत्थान एक चुनौती बना हुआ है। शिक्षा जो समाज में सशक्तिकरण समाज में सशक्ति का मुख्य साधन माना जाता है, दलित समुदाय के लिए एक महत्वपूर्ण माध्यम है।

मुख्य शब्द– दलित, शक्तिकरण, शिक्षा, सामाजिक, आर्थिक, अधिकार, राजनीतिक

प्रस्तावना

भारत मे ंसमाज की सामाजिक संरचना ऐतिहासिक रूप से जाति आधारित रही है, जिसमें विभिन्न जातियाँ अलग–अलग सामाजिक और आर्थिक स्थिति में रही है। इनमें से दलित समुदाय को सदियों तक उत्पीड़न और भेदभाव का सामना करना पड़ा, बल्कि उन्हें शिक्षा के अधिकार से भी वंचित रखा गया। शिक्षा के अभाव में दलितों को न केवल अपनी सामाजिक स्थिति को सुधारने में विफल किया बल्कि आर्थिक विकास और सामाजिक समावेश से भी बाहार रखा। हालांकि भारतीय संविधान ने सभी नागरिकों को समान अधिकार देने का वचन दिया लेकिन वास्तविक परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा एक अहम भूमिका है।

दलित सशक्तिकरण का वास्तविक अर्थ है दलित समुदाय को अपने अधिकारों और समाज में समान स्थान प्राप्त करने का अवसर देना। यह केवल राजनीतिक और सामाजिक अधिकारों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह दलित समुदाय को आर्थिक, सांस्कृतिक और बौद्धिक दृष्टिकोण से भी सशक्त बनाता है। इस प्रक्रिया में शिक्षा सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, क्योंकि यह व्यक्ति के व्यक्तित्व, आत्मविश्वास, और सामाजिक स्थान को बदलने की क्षमता रखता है। शिक्षा से ही व्यक्ति अपने अधिकारों के बारे में जागरूकता होता है और अपने सपनों को पूरा करने के लिए आवश्यक कौशल और ज्ञान करता है।

आज भी भारत में दलितों के बीच शिक्षा का स्तर बहुत निम्न है और इस समुदाय के लिए शिक्षा दरवाजे पूरी तरह से खुले हुए नहीं है। सामाजिक और आर्थिक स्थितियों के कारण दलितों को स्कूलों और विश्वविद्यालयों में प्रवेश में कई प्रकार की कठिनाईयाँ का सामना करना पड़ता है। हालांकि पिछले कुछ दशकों में शिक्षा क्षेत्र में कुछ सुधार हुए हैं, लेकिन फिर भी दलित समुदाय को अपनी जाति, समाज और आर्थिक स्थिति के कारण कई बाधाओं का सामना करना पड़ता है।

शिक्षा का प्रभाव केवल व्यक्तिगत स्तर पर नहीं बल्कि राष्ट्र स्तर पर भी महत्वपूर्ण है। जब दलित समुदाय के लोग शिक्षा प्राप्त करते है, तो खुद को आत्मनिर्भर और सशक्त महसूस करते है, बल्कि उनके आस–पास के लोग भी प्रेरित होते हैं। यह समाज में सकारात्मक बदलाव लाने के साथ–साथ सामाजिक समानता को बढ़ावा देता है। इसके अतिरिक्त शिक्षा समाज में जातिवाद और भेदभाव को समाप्त करने की दिशा में एक कारगर कदम साबित हो सकता है, क्योंकि शिक्षा के माध्यम से सामाजिक भेदभाव के खिलाफ खड़े हो सकते है भारत सरकार ने दलित समुदाय के सशक्तिकरण के लिए कई योजनाए और नीतियां बनाई है, जिनमें आरक्षण, छात्रवृत्ति और विशेष शैक्षिक संस्थान शामिल है।

इन योजनाओं का उद्देश्य दलित समुदाय को शिक्षा के क्षेत्र में अवसर प्रदान करना और उनके जीवन स्तर सुधार करना है। इसके बावजूद शिक्षा के क्षेत्र में अभी भी कई चुनौतियाँ मौजूद है जैसे की स्कूलों में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की कमी, शिक्षकों की अनुपलब्धता और समाज में व्याप्त जातिवाद। इन समस्याओं के समाधान के लिए सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि शिक्षा दलित सशक्तिकरण की नींव है। यह न केवल व्यक्तिगत विकास को बढ़ावा देती है बल्कि सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया को भी तेज करती है। शिक्षा के माध्यम से ही दलित समुदाय अपने अधिकारों, कर्तव्य का ज्ञान होता है, वे सामाजिक असमानता के खिलाफ आवाज उठा सकते हैं। समाज में अपने लिए एक स्थान बना सकते है।

डॉ0 अम्बेडकर के मशहूर नारे 'शिक्षित बनो, संगठित रहो, संघर्ष करो' में शिक्षा को ही प्राथमिकता देते है। शिक्षा के बारे में कहाँ शिक्षा वह है जो व्यक्ति को निडर बनाये, एकता का पाठ पढ़ाये लोगो ंको अधिकारों के प्रति सचेत करें संघर्ष की सीख दे और आजादी के लिए लड़ना सिखाए डॉ0 अम्बेडकर के लिए चिन्ता का मूल विषय था देश में व्याप्त सामाजिक असमानता, इसको समाप्त कर देश में समानता लाने में वे शिक्षा की अहम् भूमिका मानते थे। शिक्षा ही समाज में परिवर्तन लाने का एक प्रभावशाली साधन माना। उनका प्रसिद्ध उद्धकरण, ''शिक्षा वह शेरनी का दूध है, जो पिया वह दहाड़ेगा।'' शिक्षा के प्रति उनके विश्वास को स्पष्ट रूप से व्यक्त करता है।

अम्बेडकर का यह कथन शिक्षा की ताकत और प्रभाव को दर्शाता है। शेरनी का दूध जो एक शक्तिशाली और प्रभावशाली गुण रखता है ठीक उसी तरह शिक्षा भी एक व्यक्ति को सशक्त बनाती है, जो व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करता है, वह अपने अधिकारों की बात करता है, तो उसकी आवाज गूंज उठती है। अम्बेडकर का यह विचार दलितों अन्य पिछड़े वर्गों के लिए एक प्रेरणा था, क्योंकि वे जानते थे कि शिक्षा ही वह साधन है जो उनके समुदाय को समानता और अधिकार दिला सकता है। उन्होंने हमेशा शिक्षा को एक महत्वपूर्ण उपकरण माना जो किसी भी व्यक्ति को सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से सशक्त बना सकता है।

इस प्रकार दलित शिक्षा सशक्तिकरण न केवल समाज में समानता और न्याय स्थापित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है, बल्कि यह राष्ट्र निर्माण में भी महत्वपूर्ण योगदान देने वाला है। जब तक सभी वर्गों को समान शिक्षा के अवसर नहीं मिलते, तब तक हम एक सशक्त और समृद्ध समाज की कल्पना नहीं कर सकते।

दलित शिक्षा का इतिहास

भारत में दलित समुदाय को 'अछूत' और 'नीच' समझा जाता था और इन समुदायों के सदस्यों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं था। जातिवाद सामाजिक भेदभाव के कारण स्कूलों में प्रवेश नहीं दिया जाता था। उन्हें धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजनों से भी बाहर रखा जाता था। इसके परिणामस्वरूप दलितों के पास ना केवल सामाजिक सम्मान की कमी थी, बल्कि उन्हें अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए भी कोई रास्ता नहीं दिखता था।

ब्रिटिश काल में शिक्षा का प्रसार बढ़ने लगा, लेकिन यह मुख्यरूप से उच्च जातियों तक ही सीमित था और दलितों को शिक्षा से पूरी तरह वंचित रखा गया था। उन्हें स्कूलों में प्रवेश नहीं दिया जाता था और अगर कोई दलित शिक्षा प्राप्त करने की कोशिश करता था तो उसे गम्भीर दण्ड और सामाजिक बहिष्कार का सामना करना पड़ता था। यह स्थिति और भी जटिल हो जाती थी, जब धार्मिक और सांस्कृतिक मान्यता यह मानती थी कि शिक्षा केवल उच्च जातियों का अधिकार है, और दलितों को पढ़ाई लिखाई का कोई हक नहीं है।

ब्रिटिश काल में कई दलित समाज सुधारक और नेता हुए जिन्होंने शिक्षा को दलितों के लिए एक हथियार के रूप में देखा ज्योतिराव फूले, बाबा साहेब अम्बेडकर ने दलित समुदाय के लिए शिक्षा ही समाज समानता लाने का रास्ता है।

अम्बेडकर का मानना था कि शिक्षा ही दलितों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक कर सकती है, और उन्हें अपने जीवन को बेहतर बनाने की शक्ति दे सकती है।

दलित सशक्तिकण में शिक्षा का महत्वः–

शिक्षा समाज में समानता और न्याय की स्थापना की सबसे प्रभावी साधन है। यह व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाने के साथ–साथ सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक रूप से सशक्त बनाने में मदद करती है।

1. **सामाजिक सशक्तिकरणः–** शिक्षा दलित समुदाय को सामाजिक भेदभाव और अन्याय से मुक्त करने में सहाक है। जब कोई व्यक्ति शिक्षित होता है, तो वह अपने अधिकारों और कर्तव्यों को बेहतर समझ पाता है, और समाज में व्याप्त असमानता के चुनौती देने में सक्षम होता है।

(i) शिक्षा से जातिगत भेदभाव और छुआछूत जैसी कुप्रथाओं को समाप्त करने में मदद मिलती है।

(ii) शिक्षा दलित युवा सामाजिक समरसता और समानता के पक्षधर बनते हैं, जिससे समाज में एकता और भाईचारे की भावना विकसित होती है।

(iii) शिक्षा दलित समुदाय को आत्मसम्मान और आत्मनिर्भर की ओर ले जाती है, जिससे वे हीनभावना से मुक्त होकर गर्व और आत्मविश्वास के साथ जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

2. **आर्थिक सशक्तिकरणः–** शिक्षा दलित समुदाय को आर्थिक रूप से सशक्त बनाती है, जिससे वे गरीबी और आर्थिक शोषण से बच सके।

(i) सरकारी और निजी क्षेत्रों में नौकरी पाने के लिए शिक्षा अनिवार्य है। जब दलित युवा उच्च शिक्षा प्राप्त करते है तो वे सम्मानजनक नौकरियों में स्थान पा सकते हैं।

(ii) तकनीकी और व्यवसायिक शिक्षा दलित समाज को स्वरोजगार और उद्यमिता की ओर प्रेरित करती है, जिससे वे आत्मनिर्भर बन सकते है।

(iii) अनुसूचित जाति (SC) के लिए आरक्षण नीति के कारण सरकारी नौकरियों और उच्च शिक्षा संस्थानों में विशेष अवसर प्राप्त होते है, जिससे दलित समुदाय को आगे बढ़ने का मौका मिलता है।

3. **राजनीतिक सशक्तिकरणः–**

(i) शिक्षा दलित समुदाय को उनके संवैधानिक अधिकारों और कानूनी प्रावधानों के प्रति जागरूकता बनाती है।

(ii) भारतीय संविधान में दलितों के लिए विशेष अधिकार दिए गए है, जैसे कि आरक्षण, समानता का अधिकार और अत्याचार निवारण अधिनियम। लेकिन जब तक दलित समुदाय शिक्षित नहीं होंगे, तब तक वे इन अधिकारों का लाभ नहीं उठा पायेंगे।

(iii) शिक्षा दलित नागरिक राजनीति में सक्रिय भागीदारी कर सकते है और अपने समुदाय के लिए आवाज उठा सकते हैं।

(iv) डॉ0 भीमराव अम्बेडकर जो स्वयं शिक्षा के माध्यम से दलित समुदाय के महान नेता बने, इस बात का सबसे बड़ा उदाहरण है कि शिक्षा किस तरह का सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन ला सकती है।

दलित शिक्षा सरकारी नीतियाँः–

भारत में दलित समुदाय को शैक्षिक रूप से सशक्त बनाने के लिए सरकार ने कई नीतियाँ और योजनाएँ बनाई है। ये नीतियाँ दलितों के लिए विशेष अवसर प्रदान करती हैं। ताकि सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से सशक्त हो सकें। इन नीतियों का उद्देश्य शिक्षा के क्षेत्र मे भेदभाव को समाप्त करना और दलित समुदाय को मुख्यधारा में लाना है। यहाँ कुछ प्रमुख सरकारी नीतियाँ और योजनाएँ दी गई है।

1. **संविधान में प्रावधान और आरक्षण नीतिः–** भारतीय संविधान ने देश के सभी नागरिकों को सम्मान अवसर और अधिकार प्रदान करने का प्रावधान किया गया है। इसमें विशेष रूप से समाज के कमजोर वर्गों जैसे दलित, आदिवासी, पिछड़े वर्गों और महिलाओं के लिए विभिन्न संरक्षण और अवसर दिये गये है।

शिक्षा के अधिकार को लेकर भी संविधान (Right to Education) के रूप में स्वीकार किया गया है। भारतीय संविधान के तहत, शिक्षा के अधिकार का प्रमुख स्थान है। संविधान की धारा 21 में यह स्पष्ट किया गया है कि जीने का अधिकार ''प्रत्येक नागरिक का मौलिक अधिकार है, और इसमें शिक्षा का अधिकार भी शामिल किया गया है। हालांकि संविधान की प्रारम्भिक धारा में शिक्षा को मूल अधिकार नहीं माना गया था, लेकिन समय के साथ शिक्षा के अधिकार को संवैधानिक संरक्षण मिला।

भारत में शिक्षा का अधिकार, विशेष रूप से 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए 2009 मे एक कानून के रूप में लागू किया गया जिसे ''शिक्षा का अधिकार अधिनियम'' (Right to Education Act RTE) कहा जाता है। यह कानून भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21ए के तहत प्रसारित हुआ था।

अनुच्छेद 15 यह अनुच्छेद भेदभाव पर प्रतिबन्ध लगाता है, और राज्य को यह निर्देश देता है कि वह समाज के सभी वर्गों को समान अवसर प्रदान करें।

अनुच्छेद 16 के तहत दलितों के लिए सरकारी नौकरियों और शैक्षिक संस्थानों में आरक्षण का प्रावधान है। उच्च शिक्षा और सरकारी सेवाओं में दलितों के लिए 15 प्रतिशत आरक्षण सुनिश्चित किया गया है।

अनुच्छेद 17 यह 'अछूतों' को शैक्षिक और सामाजिक अधिकारों से वंचित करने वाले भेदभाव को समाप्त करता है।

अनुच्छेद 46 यह विशेष रूप से अनुसूचित जातियों (दलित) और अनुसूचित जनजातियां के लिए शिक्षा और आर्थिक क्षेत्रों में सुधार हो सकें। ताकि वे समाज की मुख्यधारा में शामिल हो सकें।

2. **मध्यान्ह भोजन योजनाः–** (Mid Day Meal Scheme) के तहत, स्कूलों में गरीब बच्चों को मुफ्त भोजन उपलब्ध कराया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य है कि बच्चों को शिक्षा बनाए रखना है। योजना खासतौर पर दलित समुदाय छात्रों के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके माध्यम से उनकी पोषण संबंधी जरूरतों को पूरा किया जाता है।

3. **राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020ः–** नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में दलित छात्रों के लिए कई महत्वपूर्ण प्रावधान किए गए हैं। इसमें शिक्षा को अधिक समावेशी, सुलभ और गुणवत्ता युक्त बनाना है। ताकि सभी वर्गों के बच्चों को शिक्षा प्राप्त हो सके। विशेष रूप से दलित और आदिवासी बच्चों के लिए शिक्षा में सुधार

की दिशा में ठोस कदम उठाए गए है, जैसे कि डिजिटल शिक्षा को बढ़ावा देना और शिक्षा प्रणाली में समावेशिता सुनिश्चित करना।

4. **छात्रवृत्ति योजनाएँः–** सरकार ने दलित छात्रों के लिए विभिन्न छात्रवृत्ति शुरू की ताकि वे अपनी शिक्षा को जारी रख सके।

(i) **प्री–मैट्रिक छात्रवृत्ति योजनाः–** यह योजना 9वीं और 10वीं कक्षा के अनुसूचित जाति के छात्रों के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करती है।

(ii) **पोस्ट–मैट्रिक छात्रवृत्ति योजनाः–** उच्च शिक्षा के लिए अनुसूचित जाति के छात्रों को आर्थिक सहायता प्रदान करने के लिए यह योजना बनाई गई है।

(iii) **डॉ0 अम्बेडकर छात्रवृत्ति योजनाः–** यह योजना जो भारत सरकार और विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा अनुसूचित जाति (SC), अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) और आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग (EWS) के छात्रों को वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए चलाई जाती है। जो उन्हें विदेशी विश्वविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर सके।

5. **समग्र शिक्षा अभियानः–** शिक्षा का उद्देश्य भारत में शिक्षा के बुनियादी ढांचे को मजबूत करना और विशेष रूप से दलित छात्रों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना है। इसके अंतर्गत दलित बच्चों के लिए स्कूलों में अतिरिक्त सुविधाएँ और संसाधन प्रदान किया।

चुनौतियां

1. दलित छात्र को स्कूलों में जातिवाद और भेदभाव का सामना करना पड़ता है। शिक्षकों द्वारा भेदभाव, जातिवाद और समाज के अन्य वर्गों तिरस्कार दलित छात्रों के लिए एक बड़ी बाधा है।
2. बहुत से दलित परिवार में आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण पढ़ाई छोड़ देते हैं।
3. सरकारी स्कूलों में शिक्षकों की कमी और संसाधनों की अनुपलब्धता।
4. दलित छात्र को शिक्षित होने के बावजूद सरकारी नौकरी पाने में कठिनाई होती है।

निष्कर्षः–

दलित सशक्तिकरण में शिक्षा का महत्व बहुत अनमोल है। यह न केवल व्यक्तिगत स्तर पर परिवर्तन लाती है, बल्कि समाज में बहुत बड़े बदलाव भी करती है। जब दलित समुदाय के लोग शिक्षा प्राप्त करते हैं। तो वे अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति जागरूक हो जाते हैं, समाज में सम्मान प्राप्त करते हैं और वे अपनी समाज में जिन्दगी बेहतर बना सकते हैं। हालांकि दलित समुदाय को अभी भी शिक्षा प्राप्त करने कई कठिनाइयाँ का सामना करना पड़ता है, लेकिन अगर समाज और सरकार मिलकर काम करे तो हम दलितों के लिए कए सशक्त और समान भविष्य बना सकते हैं।

संदर्भ सूचीः–

1. तोमर, लज्जाराम : 2022, प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति, सुरूचि प्रकाशन, दिल्ली।
2. रवि, एन0.आर0 2015 'दलित शिक्षा एवं विकास' एसके पब्लिशिंग कंपनी।
3. दुबे, ए0के0 (2007) 'आधुनिकता के आईना में दलित' दिल्ली वाणी।
4. शाह, घनश्याम (2007) : दलित पहचान और राजनीति नई दिल्ली : साधु
5. सिंह, रामगोपाल : 1986 ''भारतीय दलित की समस्या एवं उनका समाधान'' भोपाल, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
6. भारतीय संविधान अनुच्छेद 15, 17, 46

7. सिंह, रामगोपाल : 2010 सामाजिक न्याय एवं दलित संघर्ष राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
8. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 'भारत सरकार' मानव संसाधन विकास मंत्रालय।
9. ठाकुर यतींद्र, समावेशी शिक्षा, अग्रवाल प्रकाशन।
10. दुबे के0ए0 शर्मा राजकुमारी श्रीमती, समावेशी शिक्षा, राधा मंदिर प्रकाशन।

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

वर्तमान परिदृश्य में फ्रायड के मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त की उपादेयता

डॉ0 उमेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर शिक्षाशास्त्र
महाराज बलवंत सिंह पी0 जी0 कालेज गंगापुर, वाराणसी

सारांश

सिगमण्ड फ्रायड का मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त वर्तमान में बहुत उपयोगी है। मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त का जन्म मनोचिकित्सा के क्षेत्र में हुआ परन्तु इसकी उपादेयता सबसे अधिक शिक्षा के क्षेत्र में है क्योकि शिक्षा वह प्रक्रिया है जो व्यक्ति के व्यक्तित्व को उन्नत करके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफल बनाती है। लिबिडो का विकास व्यक्ति को जीवनपर्यन्त सक्रिय बनाए रखती है। यह शक्ति व्यक्ति के आनन्द का स्रोत है। मनोलैगिक विकास की प्रथम तीन अवस्थाएं व्यक्ति के जीवन का आधार निर्मित करती है अतः जन्म से 5 वर्ष तक बालक के विकास को सही ढंग से विकसित करना चाहिए। जहाँ तक सम्भव हो व्यक्ति में अचेतन को बढ़ने से रोकने के प्रयास होने चाहिए। जिस व्यक्ति की अतृप्त इच्छाएं ज्यादा होगी वह व्यक्ति उतना ही मनोविदालता की ओर बढ़ेगा। अचेतनता ही समाज में विकृति को बढ़ाती है मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त को प्रभावी ढंग से लागू करके समाज को विकृति से बचाया जा सकता है विकसित समाज की संकल्पना को साकार किया जा सकता है। व्यक्तित्व विकास के गत्यात्मक पक्ष वे साधन है जिनके द्वारा मूल प्रवृतियों से उत्पन्न मानसिक संघर्षों का समाधान होता है। व्यक्ति के अहं को मजबूत करने का साधन शिक्षा है शिक्षा द्वारा जब अहं को मजबूत बना दिया जाएगा तो मानसिक संघर्षो का ह्रास होगा और व्यक्ति का व्यक्तित्व पूर्णत्व को प्राप्त कर सकेगा। व्यक्ति में शारीरिक ऊर्जा के साथ–साथ मानसिक ऊर्जा भी होती है। मूलप्रवृत्ति ऐसी जन्मजात शारीरिक उत्तेजना है जिसके द्वारा सभी तरह के व्यवहार निर्धारित किए जाते है। सामान्य व्यक्तित्व में एरोस एवं थैनाटोस का एक ऐसा संतुलन रहता है जिसमें एरोस की सक्रियता अधिक रहती है। चिन्ता एक ऐसी भावात्मक एवं दुखद अवस्था होती है जो व्यक्ति के अहं को सम्भावित खतरों से सतर्क करती है।

मनोविश्लेषण सिद्धान्त के जन्म से शिक्षा जगत में क्रान्ति का संचार हुआ तथा बहुत से अनसुलझे व्यवहारों को समझने और सुधार करने का मार्ग निकला। मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त को अपनी उपयोगिता के कारण शिक्षा, मनोविज्ञान एवं चिकित्सा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है इसे निम्न प्रकार से समझा जा सकता है :–

महत्वपूर्ण शब्द :– मनोचिकित्सा, मनोलैंगिक, इदं, अहं, परा अहं, चेतन, अचेतन, मूल प्रवृत्ति, इरोस, थैनाटोस, चिन्ता, रक्षात्मक युक्ति आदि।

सिगमण्ड फ्रायड (1856–1939) का जन्म 6मई 1856 ई0 में मुराविया (वियना) के सामान्य परिवार मे हुआ था। उन्होने 1881 ई0 में वियना विश्वविद्यालय से चिकित्सा की उपाधि प्राप्त की तथा उसी चिकित्सालय (विश्वविद्यालय) में डॉक्टर के पद पर नियुक्त हो गए। इसी समय उनकी मुलाकात प्रो0 अर्नेस्ट ब्रुक विज्ञानी से हुई। ब्रुक ने उन्हें इस विषय का गहन अध्ययन कराया। चिकित्सक के रुप में फ्रायड ने तंत्रिकातंत्र, शारीरिक बीमारियों, विस्मृति एवं लकवा में विशेष योग्यता प्राप्त कर ली। 1884 ई. में कोकीन के सम्बन्ध में उन्हें विशेष जानकारी मिली कि कोकीन का इंजेक्शन देकर शरीर के किसी अंग को पीड़ा रहित बनाया जा सकता है। बाद में फ्रायड का संम्पर्क हिस्टीरिया एवं सम्मोहन विधि के चिकित्सक से हुआ। विभिन्न प्रयोगों के पश्चात उन्होंने ज्ञात किया कि सम्मोहित अवस्था में चिकित्सक रोगी के बारे में गुप्त जानकारी भी प्राप्त कर सकता है। सिगमण्ड फ्रायड एक मनोचिकित्सक थे। हिस्टीरिया के मरीजो का

इलाज करते करते इस निष्कर्सन पर पहुँच कि कामेच्छा के दमन से व्यक्ति का व्यक्तित्व अवरुढ़ होता है। काम एक अन्तः प्रेरणा है जो जन्म लेते ही सक्रिय हो जाती हैं। इसी आधार पर बताया कि व्यक्ति के विकास पर काम शक्ति का बहुत प्रभाव पड़ता है। उन्होने कामशक्ति को लिबिडों (Libido) की संज्ञा दी जो व्यक्ति को जीवनपर्यन्त सक्रिय बनाए रखती है। यह व्यक्ति के आनन्द का स्रोत है जो उसके जीवन के प्रारम्भ से ही विद्यमान रहती है। यह कामूकता व्यक्ति के व्यवहार को जीवन भर प्रभावित करती रहती। शिक्षा मनोविज्ञान में मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त को सिग्मण्ड फ्रायड द्वारा 19वीं शताब्दी के अन्त में प्रतिपादित किया गया।

मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त मानव स्वभाव के बारे में कुछ मूल पूर्व कल्पनाओं पर आधारित है। मानव व्यवहार वातावरणीय कारकों द्वारा निर्धारित होता है वातावरणीय कारकों द्वारा निर्धारित व्यवहार अविवेक पूर्ण, अपरिवर्तन शील, समस्थितिक तथा जानने वाले होते है। मानव प्रकृति सम्पूर्णता, शरीर संरचना तथा सक्रियता से थोड़ी बहुत मात्रा में प्रभावित होती है जबकि व्यक्तिनिष्ठता की पूर्वकल्पनाओं से कम प्रभावित होती है। इन्ही प्राक्कल्पनाओं के आधार पर मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त की व्यवस्था की जा सकती है।

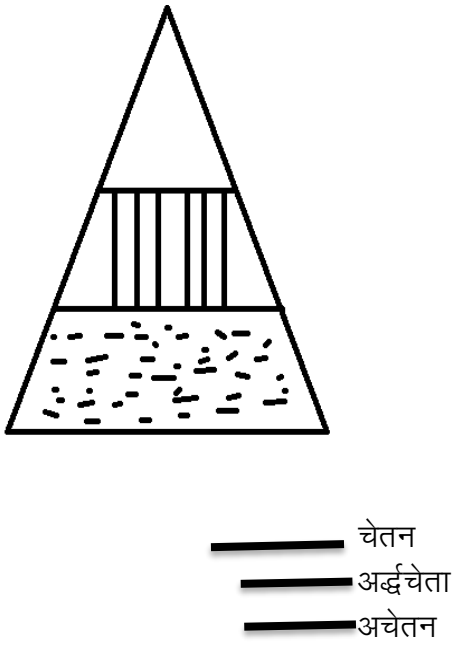
वयस्क व्यक्तित्व, शैशवावस्था और बाल्यावस्था के भिन्न–भिन्न तरह की अनुभूतियों द्वारा नियन्त्रित होती है तथा जन्म के समय उपस्थित लैगिक उर्जा, विभिन मनोलैंगिक अवस्थाओं से होकर विकसित होती है। मनोलैंगिक सिद्धान्त के अनुसार मानव विकास का आधार लैंगिक मूलप्रवृत्ति होता है जो प्रारम्भिक विकासात्मक वर्षो में कामुकता क्षेत्र से होकर विकसित होता है। मुखीय अवस्था विकास की पहली अवस्था है जो जन्म से प्रारम्भ होकर 12 माह तक चलती है। इस अवधि में बालक अपने सुख–दुख और पीड़ा का प्रदर्शन मुँह के माध्यम से करता है। बालक अपनी काम शक्ति का प्रदर्शन माँ का स्तनपान करके करता है बालक बोतल द्वारा दूध पीना पसन्द नही करता क्योंकि उसे इससे आनन्द की अनुभूति नही होती है. न ही यह बालक के विकास के लिए उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त चूसना, निगलना, जबड़े से कोई चीज दबाना आदि करके लैगिक सुख प्राप्त करता है। मुख का कम प्रयोग करने वाले बालक आगे चलकर आशावादी होते है तथा उन्हें दूसरें व्यक्तियों पर विश्वास अधिक होता है। मुख का अधिक प्रयोग करने वाले आगे चलकर दूसरों पर अधिक प्रभुत्व दिखलाते है तथा उनका शोषण भी करते है ऐसे व्यक्तियों को पर पीड़न के कार्यो में अधिक अभिरुचि होती है।

शौच अवस्था, विकास की दूसरी अवस्था है। यह अवस्था 18 माह से लेकर 3 वर्ष आयु तक चलती है। यह अवस्था विभिन्न समाजों में अलग–अलग हो सकती है अब बालक की काम शक्ति का क्षेत्र मुँह से हटकर गुदा पर हो जाता है और वह मलमूत्र के विसर्जन के माध्यम से आनन्द प्राप्त करता है। इस अवस्था में बालक आत्मकेन्द्रित होता है उसका लिबिडो सबसे अधिक केन्द्रित होता है। इस आयु में बालक को उसकी माँ द्वारा शौच प्रशिक्षण भी दिया जाता है। मल–मूत्र को धारण (रोकने) करने वाले बालक आगे चलकर हठ, कंजूसी तथा क्रमबद्धता व समयनिष्ठा आदि गुणों की प्रधानता को धारित करने है। मल–मूत्र निष्कासन में रुचि रखने वाले बालक आगे चलकर क्रूरता, विनाशिता, विद्वेष, क्रमहीनता आदि शीलगुणो की प्रधानता रखते है। लैगिक अवस्था विकास की तीसरी अवस्था है। यह अवस्था प्रायः तीन से छः वर्ष की आयु तक चलती है। इस आयु में बालक की जननेन्द्रियों का विकास प्रारम्भ हो जाता है। बालक जननेन्द्रियों के उद्दीपन से आनन्द प्राप्त करता है। बालक अपने माता पिता के व्यवहार का अनुकरण करना प्रारम्भ कर देता है। वह जननेन्द्रियों को स्पर्श करके, सहलाकर या प्रदर्शित करके भी आनन्द की प्राप्ति करते है। प्रत्येक बालक में पितृविरोधी ग्रन्थि (ओडिपस कॉम्पलेक्स) तथा प्रत्येक बालिका में मातृविरोधी ग्रन्थि (इलेक्ट्रा कॉम्प्लेक्स) विकसित होता है। जिसके कारण लड़कियों में लिंग ईर्ष्या तथा

लड़को में बंधियाकरण चिन्ता उत्पन्न होती है। इन मनोग्रन्थियों का सफलतापूर्वक समाधान होने पर लड़को तथा लड़कियों मे नैतिकता विकसित होती है परन्तु ठीक ढंग से समाधान नही होने पर लड़को में आगे चलकर उतावलापन, सेखीबाजी व उच्च आकांक्षा आदि शील गुणों की अधिकता जबकि लड़कियों में आगे चलकर इश्कबाजी, सम्मोहकता तथा स्वच्छन्द संभोगिता आदि शील गुणों की प्रधानता पायी जाती है।

अदृश्यावस्था विकास की चौथी अवस्था है यह 6 से 12 वर्ष तक चलती है इसे स्पेश विद्यालयी अवस्था भी कहते है। इस उम्र में बालक का ध्यान स्वयं के शरीर की अपेक्षा बाहर की वस्तुओं पर अधिक रहता है। वह सांसारिक वस्तुओं को यथार्थवादी दृष्टिकोण से समझने का प्रयास करता है। इस अवस्था में बालक अपने ही लिंग के बालको के साथ खेलना पसन्द करते है। इस उम्र में बालको में यौन विरोध की भावना प्रबल होती है इसलिए लड़के व लड़कियां एक दूसरे को परेशान करते रहते है। इस आयु में कोई नया कामुकता क्षेत्र विकसित नही होता है साथ ही साथ लैगिक इच्छाएं भी सुषुप्त हो जाती है। सही अर्थ में इस अवस्था में लैंगिक इच्छाओं का उदात्तीकरण होता पाया जाता है अर्थात लैंगिक इच्छाओं की अभिव्यक्ति अलैंगिक क्रियाओं जैसे–शिक्षा, चित्रकारी, खेलकूद आदि के रुप में होती है। बालक अपने माता–पिता की अपेक्षा मित्रों की अधिक सुनता है। बालक–बालिकाओं के व्यवहार में स्वतन्त्रता होती है. तथा आत्मप्रदर्शन की भावना प्रबल होती है।

विकास की पांचवी व अन्तिम अवस्था जननांगी अवस्था है। जो 13 वर्ष की आयु से प्रारम्भ होकर निरन्तर चलती रहती है। इस आयु काल में बालकों में लैगिक परिवक्ता आ जाती है तथा सन्तानोत्पत्ति की क्षमता भी विकसित हो जाती है। इस अवस्था में किशोरावस्था तथा प्रौढ़ावस्था दोनों ही सम्मिलित होती है। प्रारम्भिक किशोरावस्था में समलिंगी कामुक्ता की प्रवृत्ति होती है जबकि उत्तर किशोरावस्था व वयस्कावस्था में विषमलिंगी कुमकता की प्रवृत्ति का विकास होता है इस अवस्था में नैतिकता का भी विकास होता है जिससे वे काम शक्ति एवं नैतिक व्यवहार में सन्तुलन स्थापित करने का प्रयास करते है। फ्रायड ने मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त के अन्तर्गत व्यक्तित्व की संरचना सिद्धान्त को प्रस्तुत कियाः जिसमें व्यक्तित्व के स्थलकृति पक्ष के अन्तर्गत चेतन, अर्द्धचेतन तथा अचेतन मन को तीन स्तरों में प्रस्तुत किया। फ्रायड ने मनुष्य की मानसिक क्रियाओं का विश्लेषण करके यह निष्कर्ष निकाला कि मनुष्य का व्यवहार उसके चेतन से अधिक अचेतन पर निर्भर करता है। उन्होने इस प्रत्यय को स्थापित करने के लिए बर्फ एवं पानी का उदाहरण दिया। मन की तुलना सागर में तैरते बर्फ के टुकड़े से की जिसका 9/10 भाग पानी के अन्दर व 1/10 भाग पानी के बाहर रहता है पानी के बाहर वाला भाग चेतन मन, अन्दर वाला भाग अचेतन मन तथा ऊपरी सतह से स्पर्श करता हुआ भाग अर्द्धचेतन कहलाता है। चेतन मन का सम्बन्ध वर्तमान से है इसमें निरंतरता का गुण पाया जाता है। यह व्यक्ति की जागृत अवस्था है जिसमें मनुष्य की अनुभूतियां एवं संवेदनाएं आती है। किसी भी क्षण व्यक्ति के मन में आ रही अनुभूतियों का सम्बन्ध उसके चेतन से ही होता है। अर्द्धचेतन मन चेतन एवं अचेतन के मध्य की स्थिति है यह आवश्यकता पड़ने पर चीजों को चेतन मे लाता है। फ्रायड ने मुक्त साहचर्य विधि द्वारा अर्द्धचेतन मन के अनुभवों को चेतन में लाने का प्रयास किया। मुक्त साहचर्य विधि में वह मानसिक रोगियों से प्रश्न पूछता था जाने अनजाने में रोगी अपनी दमित इच्छाओं को अभिव्यक्त करता था और इस आधार पर वह मानसिक रोगियों का उपचार करता था। यदि व्यक्ति कुछ भूल जाता है तो थोड़ा याद करने पर वह याद आ जाता है। अर्द्धचेतन, चेतन एवं अचेतन के मध्य सेतु का काम करता है। इसमें वैसी इच्छाएं, विचार भाव आदि होते है जो हमारे वर्तमान चेतन या अनुभव में नही होते है। अर्द्धचेतन को अवचेतन व सुलभ स्मृति के नाम से भी जाना जाता है जैसे आलमारी में कोई किताब खोलने पर नही मिलती है हम थोड़ी देर परेशान हो जाते है कि किताब क्यों नहीं मिल रही फिर कुछ सोचने पर याद आता है कि उस किताब को तो हमने अपने मित्र को दे दिया था।



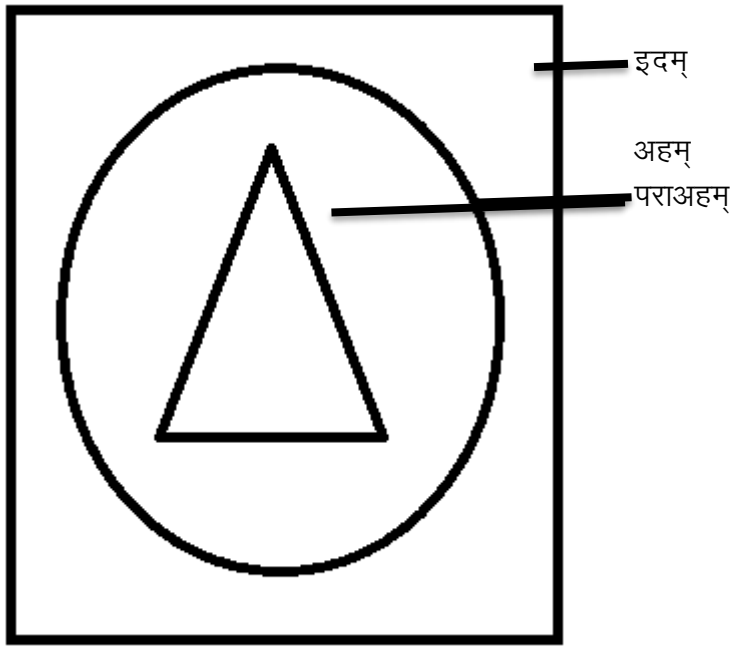
चेतन, अर्द्धचेतन एवं अचेतन का आरेजीय चित्र

अचेतन व्यक्ति के मन का 9/10 भाग होता है। फ्रायड के अनुसार व्यक्तित्व की संरचना में अचेतन मन की सबसे अहम् भूमिका होती है। मानव की अनुभूतियां संवेदनाएं जो अतृप्त रहती है, अचेतन मन में एकत्रित रहती है। अचेतन मन में रहने वाली इच्छाओं का स्वरुप कामुक, असामाजिक अनैतिक तथा घृणित होता है चूँकि ऐसी इच्छाओं की पूर्ति जिन्दगी में पूरा करना संभव नहीं हो पाता है, अतः उसको चेतन से हटाकर अचेतन में दमित कर दिया जाता है जहाँ जाकर ऐसी इच्छाएं समाप्त नहीं हो जाती हैं, हाँ थोड़ी देर के लिए निष्क्रिय अवश्य हो जाती है और चेतन में आने का भरसक प्रयत्न भी करते रहते है।

व्यक्तित्व विकास के गत्यात्मक पक्ष से तात्पर्य उन साधनों से होता है जिनके द्वारा मूल प्रवृत्तियों से उत्पन्न मानसिक संघर्षो का समाधान होता है। फ्रायड के अनुसार व्यक्तित्व का निर्माण इदं, अहम् एवं पराअहम् से हुआ है। बालक जब जन्म लेता है तो जो कुछ भी उसकी संरचना में निहित होता है वह पूरी तरह इद्म होता है। यह पूर्ण रुप से अचेतन अवस्था है जो जन्मजात व वंशानुगत होती है। इद्म इच्छाओं की जनक अवस्था है और इसमे व्यक्ति को उचित व अनुचित का ज्ञान नही होता है। यह मानव ऊर्जा का स्त्रोत है। इस अवस्था में व्यक्ति केवल सुख चाहता है। इदम् पाशविक प्रवृत्ति का होता है। इदं मूलतः दो तरह के उपक्रम अपनाता है इदम् सहज प्रक्रिया में तनाव उत्पन्न करने वाले स्रोत के प्रति अपने आप अनुक्रिया कर तनाव को दूर करता है खांसना, छीकना, आँख मिचकाना आदि कुछ ऐसी ही सहज प्रक्रियाओं के उदाहरण है। प्राथमिक प्रक्रिया में व्यक्ति वैसे उद्दीपकों जिनसे पहले इच्छा सन्तुष्ट होती थी के बारे में कल्पना कर अपना संघर्ष या तनाव दूर करता है। एक बच्चा जिसे किसी खिलौने जिससे वह खेलता था, नही देने पर उस खिलौने की कल्पना कर ही अपनी इच्छाओं की पूर्ति करता है तथा मानसिक तनाव को दूर करता है।

अहं चेतन की वह अवस्था है जिसमें जैसे–जैसे शिशु बड़ा होने लगता है उसे वातावरण के प्रभाव के कारण अपने व पराये में विभेद करना आ जाता है। अहं, इद्म और पराअहम् के बीच में संयोजनकर्ता का कार्य करता है। अहम् का प्रमुख कार्य बाहरी वातावरण के खतरों से जीवन की रक्षा करना है। अहम्

व्यक्ति को असामाजिक कार्य करने से रोकता है। अहम् का विकास इदम् से होता है यह मानव शरीर की विवेचन शक्ति है जो स्वाभाविक गतियों पर नियंत्रण रखता है तथा यह इंद्रियों की ऐसी अनुभूतियों और संवेदनाओं पर नियंत्रण रखता है जो घृणित कामुक तथा असामाजिक है। जन्म के कुछ वर्षो तक बच्चा पूर्णतः इदम् की प्रवृत्तियों द्वारा नियन्त्रित होता है, परन्तु सामाजिक नियमों एवं नैतिक मूल्यों के कारण उसकी ऐसी प्रवृत्तियों या इच्छाओं की पूर्ति नही होती है जिसके फलस्वरुप उसमें निराशा का अनुभव होता है इस प्रक्रिया से उसमें अहम् का विकास होता है, अहम् को व्यक्तित्व का निर्णय लेने वाला माना गया है अहम् अंशतः इदम्, एवं अंशतः पराअहं होता है।



व्यक्तित्व का संरचनात्मक मांडल

पराअहम्, व्यक्तित्व का नैतिक पक्ष होता है। इसका विकास सबसे बाद में होता है। समाज के लोगों के सम्पर्क में आने के पश्चात् व्यक्ति अच्छे बुरे में अन्तर समझने लगता है। यह अवस्था व्यक्ति को समाज के मान्य व्यवहार का पालन करने को प्रेरित करती है। पराअहं का सम्बन्ध उच्च सामाजिक मूल्यों, आदर्शो एवं मान्यताओं से होता है। यह परम नीतिवादी है जो मूल्यों एवं आदर्शो पर बल देता है यह समाज के दिशा निर्देशन का कार्य करते है। कई बार अत्यधिक नैतिकता पर बल देने के कारण वह विरोध के भी पात्र होते है। अहम् का दायित्व है कि वह पराअहम् को नियन्त्रित रखें। एक पूर्णतः विकसित पराअहम् व्यक्ति के कामुक एवं आक्रामक प्रवृत्तियों पर नियंत्रण दमन के माध्यम से करता है हालाँकि वह दमन का प्रयोग स्वयं नही करता है फिर भी वह अहं को दमन के प्रयोग का आदेश देकर ऐसी इच्छाओं पर नियंत्रण रखता है। यदि अहं इस आदेश का पालन नही करता है, तो इससे व्यक्ति में दोष भाव उत्पन्न हो जाता है। इदम के ही समान पराअहम् को भी अवास्तविक कहा गया है। क्योंकि पराअहम् इस बात का ख्याल नही करता कि उसके नैतिक आदेशों को पूरा करने में वातावरण में उपस्थित किन–किन कठिनाइयों का सामना करना होता है वह आँख मूद कर अपने नैतिक आदेशों की पूर्णता की लक्ष्य ओर अहं को खीचने की भरपूर कोशिश करता है। अहम् समान पराअहम् चेतन, अर्द्धचेतन एवं अचेतन तीनों ही होता है। जब

माता–पिता द्वारा बच्चों को दंड दिया जाता है तो इससे अंतः करण का विकास होता है और जब उन्हें पुरस्कृत किया जाता है, तो इससे अहम् आदर्श का विकास होता है।

फ्रायड ने मानव जीव को एक जटिल तंत्र बताते हुए कहा कि इसमें शारीरिक ऊर्जा के साथ–साथ मानसिक ऊर्जा भी होती है। शारीरिक ऊर्जा की सहायता से जीवधारी शारीरिक क्रियाएं जैसे बोलना, चलना, दौड़ना, लिखना, उछल–कूद करना आदि कार्य करता है जबकि मानसिक ऊर्जा की सहायता से व्यक्ति तरह–तरह के मानसिक क्रियाकलाप जैसे स्मरण, चिन्तन, अधिगम आदि करता है। फ्रायड के अनुसार इन दोनों तरह की ऊर्जाओं का स्पर्श बिन्दु इदम् होता है फ्रायड ने इन ऊर्जाओं से सम्बन्धित मूलप्रवृत्ति, चिन्ता तथा मनोरचनाओं जैसे संप्रत्यय का विकास किया।

मूलप्रवृत्ति से तात्पर्य ऐसी जन्मजात शारीरिक उत्तेजना से होता है जिसके द्वारा व्यक्ति के सभी तरह के व्यवहार निर्धारित किए जाते हैं। मूल प्रवृत्तियों को जीवन मूलप्रवृत्ति (इरोस) तथा मृत्युस्पेशमूलप्रवृत्ति (थैनाटोस) नामक दो भागों में बांटते हुए फ्रायड ने कहा कि रचनात्मक कार्य एवं सकारात्मक व्यवहार जिसमें मानव वर्ग या जाति का प्रजनन भी शामिल है निः स्पेशकम सन्देह जीवन मूलप्रवृत्ति के द्वारा नियन्त्रित होते है जबकि विध्वंसात्मक कार्य एवं आक्रामक व्यवहार मृत्यु मूलप्रवृत्ति से नियन्त्रित होते है। सामान्य व्यक्तित्व में जीवन एवं मृत्युस्पेशमूलप्रवृत्तियों में एक ऐसा संतुलन रहता है जिसमें इरोस की सक्रियता अधिक होती है जबकि थैनाटोस लगभग गौण भूमिका अदा करती है।

फ्रायड के अनुसार चिन्ता एक ऐसी भावात्मक एवं दुखद अवस्था होती है जो अहं को सम्भावित खतरों से सतर्क करती है जिससे व्यक्ति वातावरण के साथ अनुकूली ढंग से व्यवहार कर सके। उसने चिन्ता के तीन प्रकार बताएं हैः पहली–वास्तविक चिन्ता, जिसमें बाह्य वातावरण में व्याप्त आंधी, तूफान, भूकंप, आग दुर्घटना जैसे वास्तविक खतरों के प्रति की जाने वाली चिंता आती है। इस प्रकार की चिन्ता की उत्पत्ति बाह्य वातावरण पर अहं की निर्भरता से उत्पन्न होती है। दूसरी तंत्रिकागत चिन्ता जिसकी उत्पत्ति इदम् की इच्छाओं पर अहं के नियंत्रण ना कर पाने से होती है। इस प्रकार की चिन्ता में व्यक्ति को आशंका रहती है कि वह अपनी आक्रामक और यौन इच्छाओं पर शायद संयम नही रख सकेगा। तीसरी नैतिक चिन्ता, पराअहम् के अनुरुप कार्य करने पर अहम् द्वारा दी जा रही चुनौतियों से सम्बन्धित होती है। इसमें व्यक्ति को भय रहता है कि आदर्शो व नैतिक नियमों के पालन में चूक जाने पर उसे शर्मसार होना पड़ सकता है। वस्तुतः ये तीनों चिन्ताएं एक दूसरे से धनिष्ठ रुप से सम्बन्धित होती है एक तरह की चिन्ता किसी दूसरे प्रकार की चिन्ता को जन्म देती है। इन चिन्ताओं से मुक्ति पाने के लिए व्यक्ति तरह–तरह के रक्षात्मक प्रक्रम का प्रयोग करता हैः रक्षात्मक प्रक्रमों का प्रयोग सभी व्यक्ति करते है परन्तु इसका अधिक प्रयोग होने पर व्यक्ति के व्यवहार में बाह्यता एवं स्नायुविकृति का गुण विकसित हो जाता है। सभी रक्षात्मक प्रक्रम अचेतन स्तर पर कार्य करते है। अतः वे आत्म–भ्रामक होते हैं ऐसे रक्षात्मक प्रक्रम वास्तविकता के प्रत्यक्षण को विकृत कर देते है। फलस्वरुप, व्यक्ति के लिए चिन्ता का स्वरुप कम धमकी पूर्ण हो जाता है।

दमन में रक्षात्मक युक्ति में व्यक्ति अपने मानसिक तनाव, चिन्ता, संघर्ष को कम करने के लिए अपनी असामाजिक इच्छाएं, भावनाएं, विचार, चेतन, मन से हटा कर अचेतन मन में डालकर दबा देता है। दमन को कभी–कभी चयनात्मक विस्मरण की घटना भी कहा जाता है। औचित्य स्थापन (यौक्तिकरण) रक्षात्मक युक्ति के अर्न्तगत व्यक्ति अपने पास जो कुछ भी है उसमें सन्तोष की अनुभूति करता है। जैसे– व्यक्ति गरीब होने पर भी मांगने से अच्छा अपने घर की दाल–रोटी की बात कहता है। इसमें अंगूर खट्टे है, संतरे मीठे है जैसी कहावत चरितार्थ होती है इसमें व्यक्ति अपने अयुक्तिसंगत व्यवहारों को एक युक्ति

संगत एवं तर्कसंगत व्यवहार के रुप में परिणत कर अपने आप एवं दूसरों को संतुष्ट कर अपना मानसिक संघर्ष दूर करने की कोशिश करता है।

प्रतिक्रिया निर्माण रक्षात्मक युक्ति के अर्न्तगत व्यक्ति अपनी कमियों को दबाने के लिए दूसरों की कमियाँ उजागर करता है। इसमें सौ चूहे खाकर बिल्ली हज को चली या मुँह में राम बगल में छूरी जैसी कहावतें चरितार्थ होती है। इसमें व्यक्ति अपने अहम् को किसी कण्टप्रद या अप्रिय इच्छा तथा प्रेरणा से ठीक विपरीत इच्छा या प्रेरणा विकसित कर बचाता है। जैसे भ्रष्ट नेता द्वारा भ्रष्टाचार के विरोध में भाषण देना तथा प्रेम में असफल हो जाने पर अपनी प्रेमिका या प्रेमी से घृणा करना प्रतिक्रिया निर्माण का उदाहरण है। प्रतिगमन का अर्थ है पीछे की ओर लौटना। यह एक ऐसी रक्षात्मक युक्ति है जिसमें तनाव या संघर्ष के समाधान के लिए व्यक्ति में बाल्यावास्था की ओर लौटने की प्रवृत्ति विकसित होती है जैसे कोई वयस्क व्यक्ति बच्चों की तरह व्यवहार करें या बच्चों की तरह तुतला कर बोले या घुटनों के बल चले या एक शादीशुदा लड़की जब सलवार कुर्ता या बेबी शैली में स्कर्ट पहनती है आदि इस रक्षात्मक युक्ति के अच्छे उदाहरण है।

प्रक्षेपण रक्षात्मक युक्ति के अन्तर्गत व्यक्ति अपने दोषों का दोषारोपण दूसरों पर करता है जैसे–बच्चा फेल होने पर कहें कि माता–पिता ने उसका ट्युशन नही कराया या उसकी पढ़ाई की ओर ध्यान नही दिया या घरेलू कार्यो में व्यस्त रखा आदि प्रक्षेपण के उदाहरण है। विस्थापन रक्षात्मक युक्ति में व्यक्ति अपने मानसिक संघर्ष या तनाव को कम करने से सम्बन्धित संवेग या प्रेरणा किसी एक वस्तु स्थान या व्यक्ति में स्थानान्तरित कर देता है। जैसे–बालक की माँ की मृत्यु होने पर बालक दुःख, प्रेम आदि संवेग को अपनी मौसी या चाची के प्रति विस्थापित कर देना, माता या पिता से पिटाई होने पर अपने छोटे भाई या बहन को पीटना, ऑफिस में अपमानित होने पर घर मे पत्नी या बच्चों पर गुस्सा निकालना या संतानहीन औरतों द्वारा दूसरों के बच्चों के प्रति अधिक प्रेम दिखलाना आदि विस्थापन के कुछ उदाहरण है।

फ्रायड का मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त काफी विस्तृत एवं चुनौतीपूर्ण है इसके द्वारा व्यक्तित्व विकास की व्यवस्था बोधगम्य भाषा में की गई हैं। फ्रायड के सिद्धान्त के अधिकांश संप्रत्यय ऐसे है जो आधुनिक व्यक्तित्व मनोवैज्ञानिको के लिए मनोविश्लेषणात्मक क्षेत्र में वर्णनात्मक शोध का महत्वपूर्ण साधन साबित हुआ है। मानव व्यवहार के बारे में ज्ञात तथ्यों को तार्किक रुप से मनोविश्लेषणात्मक ढांचे में आसानी से ढाला जा सकता है। मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त के कारण मनोविज्ञान चेतना का विज्ञान है विचारधारा का जन्म हुआ। मानसिक द्वन्द, कुण्ठा, तनाव, संघर्ष को कम करने की रक्षात्मक युक्तियो का प्रयोग कर मानव विकास को बेहतर किया जा सकता है। इस सिद्धान्त के प्रतिपादन ने मानसिक रोगियों के उपचार को सम्भव बनाया तथा मनोरोगियों के इलाज में स्वप्न विश्लेषण विधि का प्रयोग किया जाने लगा। स्मृति तथा विस्मृति मे अचेतन के महत्व को स्वीकार किया जाने लगा। अचेतन मन का उपयोग किसी घटना के मूल में अभिप्रेरणा या उत्तेजना के कार्य में होता है। सिगमण्ड फ्रायड का अधिकतर समय मानसिक रोगियों की चिकित्सा में व्यतीत हुआ जिससे वह मानव व्यक्तित्व को समझने में अधिक योग्य हो सका। नैदानिक दृष्टिकोण से फ्रायड द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त के तीन प्रमुख अनुप्रयोग है पहला स्वप्न विश्लेषण लगभग सभी स्वप्न इच्छा पूरक होते है क्योकि स्वप्न में व्यक्ति अपने अचेतन की इच्छाओं की पूर्ति होते पाता है। स्वप्न का निर्माण अचेतन में होता है और स्वप्न के माध्यम से ये अचेतन की इच्छाएँ चेतन में अपनी अभिव्यक्ति चाहती है। स्वप्न प्रक्रम संक्षेपण में अचेतन की इच्छाएं व्यक्त विषय में आने के लिए संक्षिप्त रुप धारण कर लेती है जबकि विस्थापन में व्यक्ति की अचेतन की इच्छाएं संबधित व्यक्ति या वस्तु के प्रति प्रकट हो जाती है या कभी–कभी अचेतन के महत्वपूर्ण व्यक्ति या वस्तु के बदले स्वप्न में किसी महत्वहीन व्यक्ति या वस्तु के प्रति प्रकट हो जाती है। स्वप्न विश्लेषण में दो विधियों का प्रयोग करते है साहचर्य तथा

प्रतीक विधि। साहचर्य विधि में स्वप्न देखने वाले से अपने स्वप्न का सम्बन्ध वस्तुओं, घटनाओं या व्यक्तियों से पूँछने के लिए कहा जाता है। ऐसे साहचर्य तार्किक हो या अतार्किक स्वप्न देखने वाले को बतलाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। यदि कोई स्वप्न देखने वाला अपने मन का साहचर्य बतलाने में असमर्थ रहता है तो दूसरी विधि अर्थात् प्रतीक विधि अपनायी जाती है जिसमें स्वप्न के व्यक्त विषय के पीछे छिपे अचेतन तत्वों को प्रतीक के सहारे समझने की कोशिश की जाती है। फ्रायड ने स्वप्न विशलेषण से प्राप्त तथ्यों का उपयोग व्यक्तियों के व्यक्तित्व को समझने तथा उसके व्यवहार के कारणों को समझने में किया है।

अभिव्यक्ति विकास (पाराप्रेक्सेज) एक ऐसा सामान्य पद है जिसका प्रयोग उन भूलों या मनोविकृतियों के लिए किया जाता है जिसे व्यक्ति अपनी दिन–प्रतिदिन की जिन्दगी में प्रायः करता है। इन भूलों में, बोलने की भूल, लिखने की भूल, पहचानने की भूल, छपाई की भूल, वस्तुओं को गलत स्थान पर रखना आदि प्रमुख है। अभिव्यक्ति विकास फ्रायड के लिए कोई अर्थहीन नही बल्कि एक गंभीर मानसिक क्रिया है तथा उसकी उत्पत्ति समवर्ती क्रियाओं से होती है या परस्पर विरोधी विचारों से होता है। इन परस्पर विरोधी विचारों मे एक का स्रोत अचेतन होता है और दूसरे का स्रोत अर्द्धचेतन होता है। दिन–प्रतिदिन का मानव व्यवहार जो ऊपर से अर्थहीन लगता है, परन्तु सच में अर्थहीन नहीं होता है और उनसे भी व्यक्ति के अचेतन को समझने में काफी मदद मिलती है।

मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त का एक महत्वपूर्ण अनुप्रयोग मनोचिकित्सा में है। मनोचिकित्सा का उद्देश्य अचेतन की इच्छाओं को चेतन में लाकर उसके अर्थ एवं महत्व को समझाना, रोगी के अहं को मजबूत करना तथा उसके अहम को पराअहम के प्रभाव से मुक्त करना तथा व्यक्ति के प्रत्यक्षण को वास्तविक बनाना है।

निष्कर्ष :–

फ्रायड के अनुसार व्यक्ति का अचेतन मन उसके व्यवहार को प्रभावित करता है। अचेतन वास्तव में व्यक्ति की अतृप्त अथवा दमित इच्छाओं, भावनाओं का पुंज होता है तथा यह सदैव क्रियाशील रहता है। जिसके फलस्वरुप व्यक्ति का व्यवहार अनजाने में ही इन अतृप्त अथवा दमित इच्छाओं से प्रभावित होता रहता है। इस विधि के अर्न्तगत प्रक्षेपीय विधियों, स्वप्न विश्लेषण तथा मुक्त साहचर्य आदि के द्वारा व्यक्ति के अचेतन मन का अध्ययन करके उसकी अतृप्त इच्छाओं की जानकारी प्राप्त की जाती है जिससे इन अतृप्त इच्छाओं का पंरिण्करण अथवा मार्गान्तरीकरण करके व्यक्ति के व्यवहार को सुधारा जा सके। इस विधि द्वारा व्यक्ति की भावना ग्रन्थियों को ज्ञात करना तथा उसके मानसिक विचारों का निदान व उपचार संभव हो सकता है। इस विधि में व्यक्ति अपने मन की छिपी हुई बातों या समाज विरोधी ग्रन्थियों को अध्यपनकर्ता से चाह कर भी छुपा नही पाता है।

वर्तमान भौतिकवादी युग में आधुनिकता के विकास ने मनुष्य को मशीनो का दास बना दिया है। भौतिकवादी सुख की लालसा में सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों का ह्रास होता जा रहा है। पिता के साथ–साथ माता को भी दिन प्रतिदिन की जरुरतों के लिए कार्य करना पड़ता है जिससे वह अपने बच्चों का उचित लालन–पालन करने में असमर्थ साबित हो रहे है। फ्रायड के अनुसार जन्म के प्रथम पांच वर्षो में ही व्यक्तित्व निर्माण की नींव पड़ जाती है और काफी हद तक ये पांच वर्ष ही बालक के भविष्य का निर्धारण कर देते है। माता–पिता अपने बच्चों पर उचित ध्यान नही दे पाते और बचपन से ही उन्हें मोबाइल या अन्य मशीनो के सानिध्य में रखते है जिससे बच्चों के व्यक्तित्व का उचित निर्धारण नही हो पाता है और भविष्य में लिबिडों उन्हे असामाजिक इच्छाओं की तृप्ति न हो पाने के कारण बहुत से विकारों का सामना करना पड़ता है। यदि वर्तमान समय में फ्रायड के मनोलैंगिक विकास अवस्थाओं को ध्यान में रखकर बच्चों

में उचित यौन क्षेत्र को विकसित होने का प्रशिक्षण दिया जाए तो समाज बहुत लाभान्वित होगा। भौतिक सुखों की लालसा में व्यक्ति तनावों का शिकार हो रहे है फलतः अनावश्यक निराशा, द्वन्द आदि दुश्चिन्ताओं को प्राप्त हो रहे है। व्यक्ति के अहम् को मजबूत करके हम अचेतनता के क्षेत्र को बढ़ने से रोक सकते है। व्यक्ति की अनन्त इच्छाओं को सीमित साधनों से पूरा करना है जिसके लिए अहम् का मजबूत होना आवश्यक है। व्यक्ति अपने जीवन में आने वाली चिन्ताओं को रक्षात्मक युक्तियों के द्वारा दूर करता है। अतः कहा जा सकता है कि वर्तमान युग में फ्रायड के मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त को जीवन में लागू करने की अत्यन्त आवश्यकता है अन्यथा समाज पतित होता चला जाएगा। मानसिक रोगों के उपचार में फ्रायड का सिद्धान्त मील का पत्थर है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1–सिंह, अरुण कुमार और सिंह, आशीष कुमार (2015). व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, नई दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास

2–गुप्ता, प्रो0 एस0 पी0 और गुप्ता, डा0 अलका (2018). उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञानः सिद्धान्त एवं व्यवहार, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद

3–भास्कर, डॉ0 सुरेन्द्र (2022). बाल विकास एवं शिक्षा मनोविज्ञान, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर.

4–सुन्दरम्, डॉ0 (श्रीमती) (2019). बाल्यावस्थाः वृद्धि और विकास, जयपुरः राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी

5–शर्मा, गणपत राम और व्यास, हरिश्चन्द्र (2021). अधिगम शिक्षण और विकास के मनोसामाजिक आधार, जयपुरः राजस्थान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी

6–सिंह, अरुण कुमार (2011). उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान, नई दिल्लीः मोतीलाल बनारसी दास

7–चन्द्र, सोती शिवेन्द्र (2002). मानव व्यक्तित्वः अवधारणाएँ एवं सिद्धान्त, नई दिल्लीः कनिष्का पब्लिशर्स, डिस्ट्रीव्यूटर्स

8–मंगल, एस0 के0 (2021). शिक्षा मनोविज्ञान, दिल्लीः पी एच आई लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड

9–सिंह, अरुण कुमार (2018). उच्चतर नैदानिक मनोविज्ञान, नई दिल्लीः मोतीलाल बनारसी दास

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

सोशल मीडिया और जनमत़ : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

कमला यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर राजकीय
महिला महाविद्यालय सलेमपुर देवरिया.

प्रोफेसर आलोक कुमार कश्यप
समाजशास्त्र विभाग
महाराज बलवंत सिंह पीजी कॉलेज
गंगापुर वाराणसी

सारांश

सोशल मीडिया सूचना के प्रवाह और सामाजिक अंतःक्रिया के लिए एक ऐसे माध्यम के रूप मे सामने आया है जहा वाणी और लिखावट से ज्यादा तस्वीरे (इमेज) महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सूचना के प्रभाव ,अर्थ तथा सामाजिक अंतःक्रिया मे तस्वीरे मध्यस्थ की भूमिका निभाती हैं। सोशल मीडिया जहा एक तरफ आम लोगों के लिए अभिव्यक्ति का एक ताकतवर माध्यम है वही अलगोरिथम के प्रयोग से एकपक्षीय विचारों को थोपने, वैचारिक ध्रुवीकरण और आभासी जनमत के निर्माण द्वारा लोगों को मानसिक रूप से नियंत्रित करने की कोशिश करती है।सोशल मीडिया पर सूचना, खबर और कहानी के माध्यम से ऐसे जंनमत (Public Opinion) का निर्माण किया जाता है जो वास्तव मे जनमत होता ही नहीं है। बल्कि यह एक आभासी जनमत होता है,जो वास्तव मे लोगों का मत न होकर कुछ ताकतवर समूहों का विचार और धारणा होती है, जिसके माध्यम से लोगों के व्यक्तिगत विचारों और मत को प्रभावित करके वास्तविक जनमत को ढकने या गायब करने की कोशिश की जाती है। सोशल मीडिया के द्वारा सत्य सूचनाओ के साथ मिश्रित, झूठी मनगढ़ंत कहानियों , प्रोपोगैंडा ,झूठी खबरों और व्यक्तिगत धारणाओ के आधार पर निर्मित जनमत के माध्यम से लोगों के विचारों को प्रभावित किया जाता है। राजनीति और अर्थव्यवस्था मे कृत्रिम जनमत के माध्यम से लोगों के व्यवहार को नियंत्रित किया जाता है। प्रस्तुत शोध पत्र मे सोशल मीडिया का एकपक्षीय दृष्टिकोण ,वैचारिक ध्रुवीकरण,, अभिव्यक्ति और वैचारिक नियन्त्रण से संबंधों के अलावा सोशल मीडिया की कृत्रिम आभासी जनमत निर्माण मे भूमिका का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द– सोशल मीडिया ,जनमत, (पब्लिक ओपिनियन), पब्लिक स्फीयर, वैचारिक ध्रुवीकरण,राजनीति ,प्रोपोगैंडा, विनिर्मित लोकप्रियता, सामान्यीकृत अन्य, झूठी खबर ,एकपक्षीय दृष्टिकोण , इको चेम्बर ,अभिव्यक्ति ,मिश्रित खबरे, सॉफ्टवेयर रोबोट

प्रस्तावना

सोशल मीडिया जितना सोशल है उससे कही अधिक इसका राजनीतिक और आर्थिक पक्ष महत्वपूर्ण है । राजनीति और अर्थ व्यवस्था एक सिक्के के दो पहलू है जिनको एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है। किसी सामाजिक और आर्थिक मुद्दे को राजनैतिनक मुद्दा बनाने या उसे राजनैतिक मुद्दा बनने से रोकने की प्रक्रिया में सोशल मीडिया एक प्रमुख हिस्सेदार है। सोशल मीडिया के सिद्धांतकारों और विशेषज्ञों द्वारा सोशल मीडिया की अनेक परिभाषाये दी गई हैं । Hill और अन्य(2014,2) के मुताबिक सोशल मीडिया का "सोशल" शब्द लोगों के बीच दो तरफा अंतःक्रिया को दर्शाता है जिसका अर्थ है एक व्यक्ति की एक व्यक्ति से अंतःक्रिया ,एक की एक से अधिक लोगों से अंतःक्रिया या एक से अधिक लोगों की एक से अधिक लोगों से अन्तः क्रिया, वही मीडिया का अर्थ उस यंत्र से है जो सूचनाओ का संग्रह करता है ,भेजता है जिसमे लिखित संदेश ,तस्वीरे या आडियो शामिल होता है।

सोशल मीडिया के दो पहलू है जहा एक तरफ यह लोगों के लिए अभिव्यक्ति के एक प्रभावशाली माध्यम के रूप मे सामने आया है वही दूसरी तरफ खबरों पर नियंत्रण ,अलगोरिथम का प्रयोग ,मिलावटी खबरों ,प्रोपोगैंडा कहानियों के माध्यम से आम लोगों के विचारों को प्रभावित कर, जनमत और राजनीति को प्रभावित करता है। सोशल मीडिया की अलगोरिथम के माध्यम से लोगों के विचारों को नियंत्रित करने तथा कृत्रिम जनमत निर्माण के माध्यम से राजनीति को प्रभावित करने की क्षमता के कारण सोशल मीडिया मुक्तिदाता(अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप मे) की भूमिका से कही ज्यादा नियंत्रक की भूमिका मे ज्यादा मजबूती से उभर कर सामने आई है। सोशल मीडिया का राजनीति से घनिष्ठता इसे सत्ता से जोड देती है। हम समझौते में जीते हैं, राजनीति समझौता सौदेबाजी और प्रतियोगिता की एक सम्मिलित प्रक्रिया है जिसके माध्यम से पब्लिक ऑपिनियन को अपने पक्ष में करके राजनैतिक दलों ,समूहों और संघठनो द्वारा सत्ता प्राप्त करने की कोशिश की जाती है। सोशल मीडिया तकनीकी आधारित एक ऐसा ताकतवर हथियार है जो जनमत (पब्लिक ऑपिनियन) को प्रभावित ही नही करता है बल्कि इससे आगे बढकर उसको नियंत्रित भी करता है। मिचेल फूको ने कहा था ज्ञान और शक्ति प्रत्यक्ष रूप से एक दूसरे मे अंतर्निहित होते हैं ये दोनों एक सिक्के के दो पहलू हैं, शक्ति, वास्तव मे ज्ञान और विमर्श पैदा करती है तथा ज्ञान और विमर्श शक्ति पैदा करते हैं। (Mingers &Willcocks 2004 255)। सूचनाओ के प्रसंसकरण से ज्ञान पैदा होता है, वस्तुतः सोशल मीडिया सूचना तक लोगों की पहुच और और सूचना के प्रसारण को नियंत्रित करने की क्षमता रखता है तथा सूचनाओ पर नियंत्रण के कारण ही सोशल मीडिया ज्ञान तक लोगों की पहुच को भी नियंत्रित करता है। ज्ञान से निकली तकनीकी अर्थात टेक्नोंलाजी का प्रयोग विभिन्न संस्थाओ द्वारा शक्ति को लोगों के ऊपर थोपने के लिए किया जाता है। सोशल मीडिया तकनीकी आधारित ऐसे प्लेटफॉर्म है जो सूचना और खबरों को नियंत्रित करते हैं यही सोशल मीडिया की ताकत है। तकनीकी दृष्टिकोण से सोशल मीडिया अपने आप मे शक्ति का एक स्वरूप है। जिसके पास सूचना होती है उसके पास ताकत होती है,सोशल मीडिया सूचना को नियंत्रित करके अपनी ताकत का एहसास कराती है। सोशल मीडिया सूचना के प्रवाह में एक शक्तिशाली माध्यम के रूप में काम करता है ,सोशल मीडिया पर सूचनाये इलेक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया से ही ज्यादा तेजी से फैलती हैं, ऐसी स्थिति में सोशल मीडिया इलेक्ट्रॉनिक और प्रिन्ट दोनों मीडिया से काफी ज्यादा ताकतवर है। व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है इसलिए उसके व्यक्तिगत विचार समूह के विचारों से प्रभावित होते हैं और समूह के विचार व्यक्त के विचारों पर दबाव डालते है। सोशल मीडिया का दायरा काफी विस्तृत है जिसमें मुख्य रूप से फेसबुक यूट्यूब इंस्टाग्राम व्हाट्सएप ट्विटर आदि शामिल हैं। ये ऐसे प्लेटफार्म हैं जिसके माध्यम से लोग अपने विचारों को व्यक्त करते हैं ,दूसरे के विचारों को सुनते हैं तथा अपने विचारों पर दूसरे लोगों की प्रतिक्रिया को देखते हैं सुनते हैं। तथा उनके अनुसार लगातार खुद के विचारों में संशोधन करते हैं ,दूसरों के विचारों पर टिप्पणी करते हैं। जबकि परंपरागत संचार माध्यम जैसे रेडियो टेलीविजन और समाचार पत्र में एक तरफा संप्रेषण होता है।

सोशल मीडिया ऐसे प्लेटफॉर्म है जहा लोग लोग एक दूसरे से अंतःक्रिया करते है, सूचनाओ अनुभवों और विचारों को साझा करते है लेकिन अधिकांशतः एक दूसरे के लिए अदृश होते है ,संपर्क आमने सामने का नहीं होता है इस तरह से सोशल मीडिया ने अपने आपको पब्लिक स्फीयर (public sphere) के समानान्तर एक विकल्प के रूप मे खड़ा कर लिया है। पब्लिक स्फीयर (public sphere) के बारे जर्मन समाजशास्त्री जुर्गन हेबरमास अपनी पुस्तक "स्ट्रक्चरल ट्रांसफॉरमेसन ऑफ द पब्लिक स्फियर" मे कहते हैं कि इसका विकास 18 वी सदी मे हुआ था, पब्लिक स्फीयर (public sphere) सामाजिक जीवन का वह दायरा है जहा लोग अपने हितों से जुड़े मुद्दों (सामान्य मुद्दों) पर बहस करते हैं ,विचार करते हैं तथा तर्क के माध्यम से वैचारिक मतभेदों को सुलझा लेते है, जिनमे पब्लिक फोरम, क्लब, काफी हाउस, सैलून,कैफे, जर्नल, समाचार पत्र आदि शामिल हैं, जिससे पब्लिक स्फीयर पैदा हुआ (टर्नर 2005,190) । सोशल

मीडिया ने परंपरागत पब्लिक स्फीयर को काफी हद तक विस्थापित करके खत्म कर दिया है। वस्तुतः सोशल मीडिया ने पब्लिक स्फीयर को मजबूत करने का दावा किया लेकिन अलगोरिथम का एस्तेमाल करके विमर्श और विमर्श के मुद्दों दोनों को पब्लिक स्फीयर से हटाने का काम किया है। पब्लिक स्फीयर मे आमने सामने की अंतःक्रिया होती है। लेकिन जब अंतःक्रिया के लिए सोशल मीडिया माध्यम बन जाता है तब माध्यम(सोशल मीडिया) सूचना के संदर्भ और अर्थ को बदलने की क्षमता रखता है तथा अंतःक्रिया को विकृत कर देता है। माध्यम महत्वपूर्ण हो जाता है सूचना गौण हो जाती है। समाजशास्त्री मार्शल मैकलुहान (1994 ,7) ने कहा था "मीडियम इज द मैसेज" अर्थात माध्यम ही संदेश है। अन्य अर्थों मे कहे तो जिसे हम सोशल मीडिया पर सूचना या खबर समझते है वास्तव मे वह माध्यम (सोशल मीडिया)द्वारा निर्मित खुद एक माध्यम है। उदाहरण के तौर पर हम सोशल मीडिया पर तैरती कोई वीडियो या कहानी सुनते देखते है तो यहा पर कहानी या वीडियो निर्माता का मकसद हमे कहानी सुनना या वीडियो दिखाना नहीं है बल्कि कहानी या वीडियो और तस्वीर के माध्यम से हमारे विचारों को एक खास दिशा मे मोड़ना है। इस प्रकार से सोशल मीडिया ने पब्लिक स्फीयर के रूप मे सामूहिक विमर्श के वास्तविक मंच को बहुत कमजोर या लगभग नष्ट करके वास्तविक जनमत निर्माण के आधार को इतना कमजोर कर दिया है कि वह खत्म होने की कगार पर है।

खबर, कहानी और जनमत

इस्राइल के हिब्रू यूनिवर्सिटी के इतिहासकार युवाल नोह हरारी(2011)अपनी बहुचर्चित कृति सेपीयन्स मे कहते हैं कि मानव का स्वभाव ही ऐसा होता है कि उसे कहानिया पसंद होती हैं क्योंकि वह कल्पना कर सकता है, वह भरोसा करता है, कहानिया व्यक्ति को प्रभावित करती हैं, कहानियों के माध्यम से उसे कल्पना लोक मे ले जाकर उसका भरोसा जीता जाता है । सोशल मीडिया पर खबरों के वेश मे तैरती कहानिया लोगों को प्रभावित करती हैं (हरारी 2011 26–27)। खबरों और सूचनाओ के आवरण से ढकी कहानियों और फेक न्यूज के समाज पर पड़ने वाले प्रभावों से संबंधित अनेक अध्ययन मौजूद हैं जिनमे से कुछ महत्वपूर्ण अध्ययनों का विश्लेषण करना आवश्यक है । जैसे कैमब्रिज एमआईटी यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर सिनान अराल ने अपने शोध मे 2009 से लेकर 2017 तक, 2012 और 2016 के अमेरिका के राष्ट्रपति के चुनाओ,रूस द्वारा क्रिमिया के अधिग्रहण ,डेनमार्क मे डाल्फिन हमला, पेरिस बम धमाका(2015) ,बोस्टन मैराथन बम धमाका की घटनाओ से जुड़ी सच्ची खबर ,झूठी खबर, तथा आधी झूठी और आधी सच्ची अर्थात मिश्रित खबर के फैलने का अध्ययन किया और पाया कि मिश्रित या मिलावटी खबरे सबसे तेजी से फैलती हैं, उसमे भी राजनीति से जुड़ी मिलावटी खबरे सबसे ज्यादा तेजी से फैलती हैं, सिनान अराल ने पाया कि रूस द्वारा क्रिमिया के अधिग्रहण मे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म फेसबुक और ट्वीटर के माध्यम से फेक न्यूज (झूठी खबर) के आधार निर्मित जनमत की महत्वपूर्ण भूमिका थी जहा रूस ने झूठी खबरों को फैलाने के लिए सोशल मीडिया का इस्तेमाल किया (Aral 2020 ch- 1) ।

Egelhofer & Lecheler(2019 98) ने अपने अध्ययन मे पाया कि सोशल मीडिया के माध्यम से प्रसारित फेकन्यूज राजनैतिक ज्ञान मे असमानता पैदा करता है ,इनके मुताबिक फेक न्यूज के दो पहलू है पहला यह कि फेक न्यूज जानबूझकर उद्देश्यपूर्वक आभासी पत्रकारिता के माध्यम से बनाई और फैलाई जाती है दूसरा कि फेक न्यूज मूलतः सत्य ,तथ्य परक वास्तविक खबरों ,सूचनाओ को अवैध बताकर प्रचारित करती है। फेक न्यूज के अनेक गंभीर खतरे हैं,। फेक न्यूज का सबसे बड़ा खतरा यह होता है कि आम नागरिकों के लिए वैध सत्य खबरों और फेक न्यूज के बीच भेद करना कठिन हो जाता है (Allcott & Gentzkow, 2017) । सोशल मीडिया किसी जन समूह को किस प्रकार प्रभावित करता है यह इस बात पर काफी निर्भर करता है कि उस जन समूह का शिक्षा का स्तर कैसा है जहां तक सोशल मीडिया की पहुंच का सवाल है तो प्रिंट मीडिया की तुलना में सोशल मीडिया तक पहुंच के लिए शिक्षा बहुत कम बाधक है । बहुत कम पढा लिखा या अनपढ व्यक्ति भी सोशल मीडिया का इस्तेमाल कर लेता है लेकिन सोशल मीडिया पर मौजूद खबर, कहानी और प्रोपेगेंडा में अंतर करना उसके लिए काफी कठिन होता है। सोशल मीडिया में खबर के साथ कहानी और मनोरंजन से जुडी सामग्री आपस में मिली होती है इस स्थिति में

कहानी और खबर में अंतर करना कठिन होता है खबरों के बजाय मनगढत कहानियों के माध्यम से लोगो के राजनीति और सामाजिक मुद्दों से जुडे विचारो को प्रभावित करने की कोशिश सोशल मीडिया के एक बडे हिस्से द्वारा की जाती है।

जर्मन समाजशास्त्री गैबरिएल टारडे ने कहा था कि विचार (आइडिया) ही सामाजिक घटनाओ मे मुख्य कर्ता होता है, अनुकरण और अनुकरण–विरोध दोनों के द्वारा विचारों का फैलाव होता है तथा जब अनुकरण और अनुकरण– प्रतिरोध दोनों आदर्श स्थिति मे मिलते हैं तो नया विचार या आविष्कार पैदा होता है ,जो खुद भी आपने आप मे अनुकरण होता है (Beattie 2019 21)। अर्थात टारडे के मुताबिक हम अनुकरण के द्वारा सीखते हैं । अनुकरण स्वाभाविक रूप से हमारे विचारों को प्रभावित करता है सोशल मीडिया पर मौजूद विचार, कहानी, तस्वीरे और वीडियो लोगों के विचारों को प्रभावित करती है। राजनीतिक दलों के नेताओ, बाजार के उत्पाद से जुडी कहानियों ,विचारो, और वीडियो को सोशल मीडिया के माध्यम से लोगो के सामने प्रस्तुत जाता है तथा उसकी विनिर्मित लोकप्रियता या उसके प्रति विनिर्मित असंतोष को प्रस्तुत करके लोगो के विचारो को प्रभावित करने की कोशिश की जाती है ।

क्या सोशल मीडिया प्लेटफार्म लोगो में मुद्दों या समस्याओं के प्रति एक तरफा दृष्टिकोण पैदा करता है , इसके दो पक्ष हैं एक तरफ अलगोरिथम का एस्तेमाल करके सोशल मीडिया उपभोक्ता के पास उसकी पसंद और विचारों से मिलती जुलती सूचना को ही उसके सामने प्रस्तुत करता है। दूसरी तरफ प्रभावशाली समूह अपने विचार सोशल मीडिया पर मजबूती से रखते हैं जिससे आम लोग प्रभावित होते है, बहुसंख्यकों के विचार के आगे उससे भिन्न विचार दब जाते हैं । 1995 मे MIT के टेक्नॉलाजी विशेषज्ञ Nicholas Negroponte ने एकपक्षीय दृष्टिकोण के निर्माण के संबंध मे "the Daily Me." शब्द का इस्तेमाल किया ,उनके मुताबिक जहा आप खबरों के बारे मे,किसी मुद्दे के बारे मे ,अपनी पसंद की चीजों को देखने या सुनने के बारे मे सूचना प्राप्त करने के लिए परंपरागत माध्यमों जैसे समाचार पत्र या टेलीविजन का इस्तेमाल नही करते है बल्कि आप इसके लिए अपना स्वयं का सम्प्रेषण तंत्र का प्रयोग करते है जो आपके मुताबिक आपकी पसंद का होता है जो आप सुनना ,देखना चाहते है उसका चुनाव आप खुद पहले ही कर लेते हैं (Sunstein 2017,15) । जिसके परिणाम स्वरूप किसी मुद्दे से जुड़े वैकल्पिक विचार आप के पास पहुच ही नहीं पाते हैं, आप एक विचार विशेष के के कैदी बन जाते हैं । यदि आप केवल फूटबाल देखना चाहते हैं या शेक्सपीयर को पढ़ना चाहते हैं तो आपके संचार ध्सम्प्रेषण का माध्यम इन्ही को दिखाएगा या सुनाएगा ,तथा अपने मित्रों ,पड़ोसियों ,समान विचारों वाले लोगों के विचार ही आपके सामने आते है और आप उससे प्रभावित हो जाते है सोशल मीडिया एक ऐसे इको चेम्बर का निर्माण कर देता है जहा जो हम देखना या सुनना चाहते हैं सोशल मीडिया हमे वही दिखाता या सुनाता है (Sunstein 2017 ,15-16)। राजनीति मे जनमत को प्रभावित करने मे इको चेम्बर की महत्वपूर्ण ,भूमिका होती है इस तथ्य की पुष्टि अनेक अध्ययनों से होती है।

जर्मन समजाजशास्त्री एलिजाबेथ नोएल नुमान (Elisabeth Noell Neumann) ने अपने शोध में पाया कि किसी समूह के भीतर ऐसे सदस्य जो वैचारिक रूप से अल्पसंख्यक होते हैं वे अपने आप चुप हो जाते है तथा समूह के प्रभाव शाली विचार के अनुरूप ही ढल जाते हैं इसे वे spiral of silence (स्पाइरल ऑफ साइलेन्स) कहते हैं (अलटोए एवं अन्य 2024 ,7))। अर्थात जिस विचार को समूह में कम समर्थन मिलता है धीरे धीरे उस विचार के लोग भी बहुमत के विचारो का ही समर्थन करने लगते हैं. लोगो को जब पता चलता है कि समाज में अधिकतर लोगो किसी मुद्दे विषेश पर एक विशेष राय रखते हैं तो आम लोग भी अधिकतर लोगो की सोच के अनुरुप ही सोचने लगते हैं। अंतः क्रियावादी समाजशास्त्री चार्ल्स हार्टोन कूले से लेकर हरबर्ट मीड तथा ब्लूमर सभी ने बताया अंतःक्रिया के दौरान दूसरो की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप व्यक्ति के खुद के व्यवहार में बदलाव होता रहता है। मीड ने कहा था कि अंतःक्रिया के द्वारा व्यक्ति के व्यक्तिव का विकास होता है अर्थात उसमे स्व (सेल्फ) का विकास होता तथा ,व्यक्ति सामान्यीकृत अन्य अर्थात समुदाय जिसका व्यक्ति सदस्य होता है या जुड़ा होता है, के विचारो को

ग्रहण करता है(मोरलॉक और नरिता 2021,12)। तथा अन्य के अनुरूप व्यक्ति अपने आप को ढाल लेता है । यहा पर मीड की सामाजिक अंतःक्रिया मे व्यक्ति तथा समान्यीकृत अन्य आमने –सामने है। यहा पर मीड का समान्यीकृत अन्य प्रत्यक्ष और वास्तविक है ,लेकिन जब हम सोशल मीडिया पर अंतःक्रिया करते है तो सोशल मीडिया का समान्यीकृत अन्य विकृत और दूषित ,आभासी और बनावटी होता है। जिसके पीछे कोई अन्य होता है, ऐसी स्थिति मे जब व्यक्ति सोशल मीडिया पर दूषित बनावटी समान्यीकृत अन्य से अन्तः क्रिया करता है तो उसका व्यक्तित्व और विचार भी दूषित हो जाता है। सोशल मीडिया का दूषित समान्यीकृत अन्य व्यक्ति को अपने दूषित विचारों मे इस प्रकार कैद कर लेता है कि उसे कोई अन्य विचार या आवाज सुनाई ही नही देती है। इसके साथ ही सोशल मीडिया का एल्गोरिथम व्यक्ति के विचार से अलग या भिन्न कोई विचार या पसंद व्यक्ति तक पहुंचने ही नही देता है। उसे खुद के विचारो की चहारदीवारी में कैद कर देता है जो इस धारणा को मजबूती से मानता है कि उसका मत या विचार एकमात्र सत्य है। मीड का सामान्यीकृत अन्य विविधतापूर्ण होता है जबकि सोशल मीडिया पर जो सामान्यीकृत अन्य होता है वह सामान्यीकृत अन्य होता ही नही है बल्कि वह समान विचारधारा और पसंद के लोगो का समूह होता है जिनके विचार आप से मिलते जुलते है , जहा आप की ही आवाज ज्यादा जोर जोर से सुनाई देती है।

सास संसटेन(Cass R Sunstein)ने सामाजिक–वैचारिक समानता पर आधारित दुनिया जिसका निर्माण सोशल मीडिया पर होता है को इको चेंबर कहा है , इस शब्द का प्रयोग सबसे पहले इन्होंने ही किया था, इको चेंबर इफेक्ट सोशल मीडिया पर इतना ज्यादा होता है कि व्यक्ति को उसके बाहर की आवाज सुनाई ही नहीं देती है((मोरलॉक और नरिता 2021 ,70)। इको चेम्बर मे बंद व्यक्ति को दूसरा पक्ष सुनाई ही नहीं देता है। मीड का समान्यीकृत अन्य एक ऐसा सामाजिक वातावरण है जो व्यक्ति को आवश्यक रूप से प्रभावित करता है जहा व्यक्ति अन्तःक्रिया के दौरान चेतनपूर्वक वाद प्रतिवाद करता है लेकिन सोशल मीडिया पर अंतक्रिया के दौरान बहुमत के विचारों के सामने समर्पण कर देता है।

सोशल मीडिया के माध्यम से एक आभासी दूषित सामाजिक वातावरण अर्थात समान्यीकृत अन्य को किसी खास उद्देश्य के लिए ताकतवर समूहों द्वारा निर्मित किया जाता है तथा दूषित या आभासी समान्यीकृ त अन्य के माध्यम से आम लोगों के विचारों को एक दिशा मे मोड़ने की कोशिश की जाती है। 2018 मे ईरान मे सरकार के खिलाफ पहले सोशल मीडिया पर आंदोलन चलाया गया तथा साथ मे अनेक शहरों मे बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शन हुए जिसे खत्म करने के लिए सरकार ने सोशल मीडिया के ही माध्यम से सॉफ्टवेयर रोबोट (Bote) का एस्तेमाल किया। यह एक ऐसी तकनीकी है जहा सॉफ्टवेयर खुद सूचनाए भेजता है, सॉफ्टवेयर ने प्रदर्शनकारियो के विरुद्ध विचारों को मजबूती और तेजी से सोशल मीडिया पर फैलाया (मोरलॉक और नरीता 2021)।

एकपक्षीय दृष्टिकोण लोकतंत्र को कमजोर करने के साथ ही अनेक सामाजिक समस्याए पैदा करता है। वैकल्पिक विचारों के अभाव मे जटिल सामाजिक समस्याओ का समाधान संभव नहीं है। विरोध की आवाज सेफ्टीवाल्व का काम करती है, सोशल मीडिया जनित एकतरफा विचार उस सेफ्टीवाल्व को बंद कर देता है। अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन कहते हैं कि जहा पर प्रेस की स्वतंत्रता और निष्पक्ष चुनाव होते है वहा अकाल नहीं पड़ता ,वे आगे कहते है कि अकाल अनाज की कमी के कारण नहीं उत्पन्न होता है बल्कि अकाल समाज का उत्पाद यदि अनाज की कमी है तो सरकार अनाज का वितरण इस प्रकार कर सकती है कि कोई भी भूखा नहीं रह सकता लेकिन सरकार ऐसा तभी करेगी जब स्वतत्र प्रेस होगा और निष्पक्ष इलेक्शन होगा ,क्योंकि स्वतंत्र प्रेस मुद्दे को उठाएगा तथा निष्पक्ष इलेक्शन का सरकार पर दबाव होता है (संसटेन 2017 ,129).। इसके अलावा ताकतवर समूह या राजनैतिक दल जिसके पास संसाधन है, वे अपनी विचारधारा को बड़ी मजबूती से सोशल मीडिया पर रखते है तथा यह बताने की कोशिश करते हैं कि अमुक विचार ही सर्वश्रेष्ठ है यह सबके लिए अच्छा है । सोशल मीडिया पर तैरते ताकतवर समूह के विचार जो

जनहित के लिफाफे मे बंद होते है ये विचार आम लोगों को प्रभावित करते हैं । इसके दो कारण होते है पहला ये कि इन ताकतवर विचारों का विकल्प सोशल मीडिया पर बहुत कम होता है और यदि होता भी है तो उसे ताकतवर समूह पूरी ताकत के साथ उसे नकारता देता है, ऐसी स्थिति मे कुछ खास ताकतवर लोगों के विचार ही सोशल मीडिया पर प्रमुखता से छाए रहते हैं जो आम लोगों को भी प्रभावित करते हैं। उदाहरण के तौर पर राजनैतिक दलों के प्रवक्ता हर कीमत पर अपनी पार्टी की नीतियों का बचाव करते हैं चाहे उनके विचार कितने ही एकांगी और नुकसानदायक हो फिर भी समाज का एक बड़ा तबका उसको सच मान लेता है ,जो समाज मे वैचारिक ध्रुवीकरण पैदा करता है। अमेरिका के राष्ट्रपति के चुनाव मे 2016 मे डोनाल्ड ट्रम्प ने अपनी प्रतिद्वंदी हिलेरी क्लिंटन के बारे जो भी झूठी बाते और दावे ट्वीटर पर किए 40% ट्रम्प समर्थको ने दावों को सच माना (मौंक 2019, 134)। इसके अलावा ऐसे लोगों का समूह जो अपने को स्वतंत्र पत्रकार या समाज सेवी के रूप मे प्रस्तुत करते है और कहते हैं कि उनके विचार निष्पक्ष हैं, लेकिन वास्तव मे वे भी किसी न किसी पार्टी से जुड़े होते हैं। निष्पक्षता के नाम पर उनके विचार भी मूलतः पूर्वाग्रह से ग्रसित होते हैं। राजनैतिक पार्टिया अक्सर अपने विचारों को निष्पक्ष दिखाने के लिए अकादमिक लोगों, विशेषज्ञों, समजसेवियों और पत्रकारों का इस्तेमाल करती हैं।

सोशल मीडिया और वैचारिक ध्रुवीकरण

सोशल मीडिया लोगों को आपसी अंतःक्रिया का मौका देता है तथा किसी ताकतवर समूह या व्यक्ति द्वारा सोशल मीडिया पर दी गई सूचना या विचार बड़ी तेजी से लोगों के पास पहुंचते है जिसमे खबरों के साथ मनगढ़ंत कहानिया भी मिली होती है, जिसके कारण विचारों और सूचनाओ की तथ्यपरक जांच करना कठिन हो जाता है। लेकिन सूचनाओ मे मिली मनगड़ंत कहानिया लोगों को आकर्षित करती हैं, जिससे लोगों के व्यक्तिगत विचार प्रभावित होते हैं । जिससे समाज मे मौजूद अधिकतर लोग किसी विचार, मुद्दे या फैसले के विरोध या पक्ष मे लामबंद हो जाते है । जो अनेक अवसरों पर किसी देश की राजनीति की दिशा का निर्धारक कारक बन जाता है। किसी मुद्दे के समर्थन या विरोध के अलावा अन्य विचार ध्रुवीकरण के नीचे दब जाते हैं। सिनेली (Cinelli) एवम अन्य (2021) ने अपने अध्ययन मे पाया की सोशल मीडिया आधारित इको चेम्बर अधिकतर मुद्दों पर समाज मे लोगों का ध्रुवीकरण करता है ,एक ही मुद्दे पर लोगों का मत विलकुल विपरीत और अलग होता है, लोग दो विपरीत समूहों मे विभाजित हो जाते हैं। सिनेली (Cinelli) एवम अन्य (2021) ने फेसबुक और ट्वीटर पर कोरोना के टीकाकरण और गर्भपात के मुद्दे पर लोगों के विचारों का अध्ययन किया जिसमे दो तथ्य सामने आए पहला कि दोनों ही मुद्दों पर जनमत पूरी तरह ध्रुवीकृत हैं,जितने लोग पक्ष मे है उतने ही लोग लगभग विपक्ष मे भी हैं, दूसरा तथ्य यह सामने आया कि जो लोग गर्भपात और टीकाकरण के पक्ष मे है उनके विचार बहुत ज्यादा उनके मित्रों संबंधियों ,पड़ोसियों के ही समान या मिलते जुलते हैं , ठीक उसी प्रकार जो लोग गर्भपात और टीकाकरण के विरोध मे हैं उनके विचार भी उनके घनिष्ठ मित्रों, और पड़ोसियों से मिलते है या समान हैं । यहा सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म खासकर फेसबुक और ट्वीटर दोनों पर इकोचेंबर प्रभाव ,तथा इको चेम्बर के कारण जनमत का ध्रुवीकरण स्पष्ट दिखाई देता है,कुछ चुनिंदा विचार और सूचनाए जब बार बार उपभोक्ता के पास आती है तो उसके विचारों पूरी तरह से प्रभावित हो जाते है (Cinelli et al 2021 ,3-8) । इसके अलावा गरिमेला(Garimella) एवं अन्य (2018) ने भी अपने अध्ययन मे पाया कि राजनतिक विमर्श के दौरान सोशल मीडिया इको चेम्बर निर्मित करता है ,लोग दो दलों मे बट गए हैं,सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के बजाय बड़ी संख्या मे नागरिक जो सूचना उपभोक्ता है सूचनाओ के संदर्भ मे चौकीदार (गेटकीपर)की भूमिका निभाते हैं । lisa Schirch (2021)ने कोलंबिया मे सोशल मीडिया का जनमत पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि गुरिल्ला समूह एफ ए आर सी –ईपी FARC और सरकार के बीच शांति समझौता पर जनमत संग्रह (2016) और राष्ट्रपति के चुनावो (2014 और 2018)

तीनों मौकों पर समझौते के पक्ष और विपक्ष को लेकर जनमत का स्पष्ट दो धड़ों मे ध्रुवीकरण दिखाई दिया । 2014 मे समझौते का समर्थन करने वाले उम्मीदवार जुआन मैनुअल संतोस जीत गए उनको 50-9 % वोट मिले तो वही समझौते का विरोध कर रहे उम्मीदवार इवान देनकु (Ivan Duque) को भी 44-9 प्रतिशत वोट मिले (Schirch 2021, ch-4)। 2016 मे फिर जनमत संग्रह हुआ तथा समझौते के पक्ष 49--78 तथा विपक्ष मे 50-20 % वोट पड़े सोशल मीडिया पर दोनों पक्षों ने प्रचार किया था इसका प्रभाव 2018 के चुनाव मे हुआ समझौते का विरोध कर रहे दक्षिणपंथी उम्मीदवाए इवान देनकु (Ivan Duque) को 53-9% मिल वो जीत गए वही लेफ्ट उम्मेदवार गुस्ताव पेट्रो (gustav petro) को 41-78 % वोट मिले दोनों चुनाओ मे लोगों का एक मुद्दा शांति समझौता पर स्पष्ट ध्रुवीकरण दिखा जिसमे सोशल मीडिया की मुख्य भूमिका थी ,समझौते के पक्ष या विपक्ष मे कहानिया, वीडियो, भावनाओ,तथा समझौते के प्रति अपनी समझ को फेसबुक व्हाटसप यूट्यूब पर साझा किया गया जिसने लोगों को दो खेमों मे बाँट दिया जिसने राष्ट्रपति पद के उम्मेदवारों की जीत या हार को तय कर दिया(Schirch 2021, ch-4)।ध्र

सोशल मीडिया का प्रयोग ध्रुवीकरण के एक ताकतवर साधन के रूप मे रूस द्वारा यूक्रेन के कृमिया के अधिग्रहण के लिए किया गया, यह अपने तरह का अनोखा प्रयोग था जहा एक देश ने दूसरे देश के एक प्रांत हथियाने के लिए सोशल मीडिया का प्रयोग किया । सिर्फ 10 दिनों मे रूस ने क्रिमिया का अधिग्रहण कर लिया, फरवरी 2014 को कुछ हथियारबंद लोग कृमिया की पार्लियामेंट मे प्रवेश कर गए संचार के सारे उपकरण पर कब्जा कर लिया फिर कुछ ही घंटों मे अंदर से खबर आई कि पार्लियामेंट ने सरकार को को भंग करने के लिए वोट कर दिया है तथा बर्तमान प्रधानमंत्री अनतोली मोहिलोव (Anatolii Mohyliov) को हटा दिया गया है तथा पार्लियामेंट ने रूस समर्थक यूनिटी पार्टी के सेर्गेई अकसयोनॉव(Sergey Aksyonov) को नया प्रधानमंत्री चुन लिया ह ै(अराल 2020 अ–1)। विरोध और समर्थन मे प्रदर्शन का की आड़ मे सेर्गेई अकसयोनॉव ने शांति बहाली के लिए रूस से मदद मागी और रूसी सेना क्रिमिया मे दाखिल हो गई ,जब तक यूक्रेन की सरकार क्रिमिया की नई सरकार को असंवैधानिक घोषित करती इससे पहले ही सोशल मीडिया पर रूस के साथ एकीकरण के समर्थन मे अभियान चलने लगा अचानक सोशल मीडिया पर जनमत दो खेमों मे बँट गया एक तरफ रूस समर्थक तथा दूसरी तरफ यूक्रेन समर्थक(अराल 2020 अ–1) । रूस के समर्थन मे जनमत के निर्माण करने के लिए रूसी इन्टरनेट रिसर्च एजेंसी ने यहां भूमिका निभाई सोशल मीडिया पर फेक अकाउंट के माध्यम से झूठी खबरों कहानियों वीडियो का एस्तेमाल किया गया तथा कृत्रिम जनमत के माध्यम से अधिग्रहण को वैधानिक और जायज साबित कर दिया गया (अराल 2020 अ–1)।

सोशल मीडिया समूह ध्रुवीकरण का ताकतवर साधन है जिसका उपयोग राजनीति मे चुनाओ के दौरान होता है। समूह ध्रुवीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जहा एक समूह के भीतर जैसे जैसे बहस आगे बढ़ती है लोगों के विचार ज्यादा कट्टर होते जाते हैं (संसटेन 2017 69) यदि सोशल मीडिया पर कुछ लोग किसी मुद्दे पर अपना विचार साझा करते है और प्राथमिक तौर पर उनका विचार सामान्य और संतुलित होता है तो भी जैसे – जैसे समान विचारों वाले लोगों कि संख्या बढ़ती जाती तथा बहस आगे बढ़ती है ,लोगों के विचार उस मुद्दे पर ज्यादा एकतरफा और चरमपंथ की तरफ जाने लगता है तथा वे अपने विचार और मुद्दे के घोर समर्थक बन जाते हैं । अमेरिका के राष्ट्रपति के चुनाओ मे बराक ओबामा और डोनाल्ड ट्रम्प दोनों को समूह ध्रुवीकरण का फायदा मिला और दोनों अपना चुनाव जीते । बराक ओबामा अमेरिका के पहले राष्ट्रपति थे जिन्होंने अपने चुनाव मे सोशल मीडिया का एस्तेमाल किया ओबामा के चुनाव जीतने मे सोशल मीडिया की भूमिका का अंदाजा इस आकडे से लगाया जा सकता है कि जहा एक तरफ बराक

ओबामा के 20 लाख फेसबुक समर्थक थे वही उनके प्रतिद्वंदी जान मकैनन के सिर्फ 6 लाख फेसबुक समर्थक थे(संसटेन, 2017 62)।

अलटोए एवं अन्य 2024 ने अपने अध्ययन मे पाया कि किसी व्यक्ति पर ऊसके समुदाय से संबंधित व्यक्ति के विचारों का प्रभाव समुदाय से बाहर के व्यक्ति के विचारों की तुलना मे अधिक होता है इस तरह से इको चेम्बर ध्रुवीकरण पैदा करता है । वैचारिक ध्रुवीकरण के कारण आम लोगों से जुड़े सामान्य मुद्दों पर गहन विमर्श नहीं हो पाता है दोनों खेमे सतही तर्क के द्वारा अपने पक्ष को किसी भी कीमत पर सही साबित करने के लिए आमादा होते है ,दोनों के विचार एक तरफा होते है । एकतरफा विचार हमेश गहन विश्लेषण मे बाधक होते है । सोशल मीडिया वैचारिक ध्रुवीकरण के द्वारा विचार विमर्श को सतही बना देता है (Altoe et al 2024 20)। उपर्युक्त अध्ययनो से इस बात की पुष्टि होती है कि सोशल मीडिया की सरचना ऐसी है कि यह अलगोरिथम का इस्तेमाल करता है जिसके कारण सोशल मीडिया पर खबरों और सूचनाओ के उपभोक्ता के पास वही खबरे या सूचनाए या उसी प्रकार की सूचनाए बार –बार पहुचती जो व्यक्ति पहले देख चुका है या देखने के लिए चुनता है। उसके पास वैकल्पिक विचार या तो पहुचते ही नहीं है या फिर बहुत कम पहुचते है ऐसी स्थिति मे जब उसके पास किसी मुद्दा विशेष से जुड़ी एक ही तरह की सूचना बार–बार पहुचती है तो उसका खुद का विचार उस सूचना या कहानी से सहमत लोगों के समूह मे विलीन हो जाता है इस तरह से वैचारिक ध्रुवीकरण पैदा होता है जो समय के साथ अतिवादी विचार पैदा करता है ।

सोशल मीडिया लोगो के लिए अभिव्यक्त का एक माध्यम है,यह सोसल मीडिया का एक पक्ष है । इसका दूसरा पक्ष यह है कि सोशल मीडिया वैचारिक और सामाजिक नियंत्रण का एक ताकतवर साधन है ,जिसका दायरा काफी विस्तृत है स दोनो चीज अलग होते हुए भी एक साथ चलती है ,सोशल मीडिया के संदर्भ में अभियक्ति और नियंत्रण दोनो एक सिक्के के दो पहलू है जिनको अलग नहीं किया जा सक्ता है । अरब स्प्रिंग में जो ट्यूनीशिया से आरंभ हुई तथा मिस्र, लीबिया , यमन आदि देशों में फैली और तख्ता पलट हो गया लेकिन यह नेतृत्वविहीन क्रांति थी जिसका कोई बडा नेता नही था कोई पहले से स्थापित संगठन नहीं था(Beyat 2017,3)। सोशल मीडिया के माध्यम से ही आम लोगो ने धरना , विरोध प्रदर्शन आदि का प्रबंधन किया जहा प्रदर्शनकारियों के लिए सोशल मीडिया एक माध्यम बना (Beyat 2017 34)। ट्यूनीशिया के छोटे से कस्बे सीदी–बॉउजिड मे ठेले पर सब्जी बेचने वाले एक आम युवक मोहम्मद बॉउजिजी जिसका ठेला महिला पुलिस अधिकारी ने गिरा दिया था क्योंकि उसके पास लाइसेन्स नहीं था। युवक ने सरकारी ऑफिस के सामने खुद को आग लगाकर आत्मदाह कर लिया ,इस घटना की तस्वीरों ,वीडियो को जैसे सोशल मीडिया पर लोगों द्वारा डाला गया खबर आग की रह पूरे अरब के देशों सहित पूरी दुनिया मे फैल गई सोशल मीडिया पर चर्चा आंदोलन मे तब्दील हो गई ((Beyat 2017,7)। ये सोशल मीडिया की ताकत थी जिसने आत्मदाह की एक घटना को आंदोलन और ,फिर क्रांति मे बदल दिया और कई देशों मे तख्ता पलट हो गया। लेकिन सिक्के का दूसरा पहलू भी उतना ही गंभीर है जब आम लोग सोशल मीडिया पर अन्तः क्रिया करते है तो टेक्नोलॉजी आधारित सोशल मीडिया प्लेटफार्म यूजर्स की व्यक्तिगत पहचान ,उसके विचार ,उसकी प्राथमिकताएं और पसंद से जुडे आंकडों का संग्रह करता है यहां तक कि आपकी भौगोलिक स्थिति की जानकारी ,आप किन लोगो से बात करते है की जानकारी भी सोशल मीडिया प्लेटफार्म को होती है। ऐसी स्थिति में राज्य के लिए सोशल मीडिया के माध्यम से नागरिकों की जासूसी आसान है । हालाकि राज्य नागरिको पर नजर रखने के लिए सोशल मीडिया का कितना इस्तेमाल करता है यह राज्य पर निर्भर करता है।

सोशल मीडिया के विशेषज्ञ अधिकतर विद्वानों ने सोशल मीडिया के उदय के आरंभ मे इसके सकारात्मक पहलुओ पर ही ज्यादा जोर दिया, खासकर अभिव्यक्ति की आजादी मे इसकी भूमिका को महत्वपूर्ण और क्रांतिकारी बताया लेकिन 2010 अंत से 2011 के आरंभ मे ट्यूनीशिया मे जैस्मिन रेवलूशन से आरंभ हुई अरब स्प्रिंग जिसमे ट्यूनिशिया ,मिश्र ,समेत मिडिल ईस्ट (मध्यपूर्व) के कई देशों मे तख्ता पलट की घटनाये हुई जिसने सोशल मीडिया के बारे मे अत्यधिक सकारात्मक विचारों को बदल दिया। इसके बाद 2014 में रूस द्वारा क्रीमिया के अधिग्रहण ,ब्रिटेन का यूरोपीय संघ से अलग होना तथा 2016 में डोनाल्ड ट्रंप की चुनाव में जीत में सोशल मीडिया की भूमिका ने बुधजीवियो को चौका दिया । हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के प्रोफैसर याचा मौंक (2019) अपनी पुस्तक द पीपल वर्सेस डेमोक्रेसी में कहते है कि 2014 के अंत या 2015 तक सोशल मीडिया के बारे में स्थापित विचार काफी सकारात्मक थे लेकिन इसके बाद ये सकारात्मक विचार अपने शिर के बल खडा हो गया अर्थात पूरी तरह से उलट गया। स्टेनफोर्ड युनिवर्सिटी के समाजशास्त्र के प्रोफेसर लारी डायमंड जो सोशल मीडिया को मुक्तिदायी टेक्नोलॉजी (Leberation Technology) कहते है, उनके मुताबिक सोशल मीडिया नागरिकों को शक्तिशाली बनाएगा, लेकिन वे भी आरंभ से ही मानते थे कि सोशल मीडिया का उपयोग जितने अच्छे के लिए हो सकता है उतना ही बुरा के लिए भी हो सकता है (मॉक 2019,143) स प्रोफेसर लारी डायमंड का अनुमान था कि जिस प्रकार से रेडियो और टीवी का उपयोग जहा एक तरफ सूचनाओ की विविधता तथा तार्किक वाद विवाद ,विमर्श के लिए हुआ वही दूसरी तरफ अधिनायकवादी सरकारों ने इन माध्यमों को नियंत्रित करके लोगों पर भी नियंत्रित करने की कोशिश की, वैसा ही उपयोग सोशल मीडिया का भी हो सकता है (मॉक 2019,143)। सोशल मीडिया के रू॰ मे फेसबुक, यूट्यूब,गूगल,ट्वीटर और व्हाटस्अप मूलतःसर्विलांस कैपिटलिज्म का हिस्सा है जहा सोशल मीडिया के उपभोक्ता का व्यवहार, विचार, पसंद ही इस उद्योग के लिए कच्चे माल का स्रोत होते है ,इसके अलावा यूजर्स (प्लेटफॉर्म उपयोगकर्ता) के व्यवहार ,विचार और क्रियाविधि से जुड़ी सूचनाओ का उपयोग राज्य द्वारा व्यक्ति पर निगरानी और नियंत्रण के लिए भी किया जाता है ईरान,चीन, अमेरिका और रूस जैसे देश इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है जहा सुरक्षा ऐजेंसिया सोशल मीडिया द्वारा नागरिकों के बारे मे ग्रहण की गई सूचनाओ का उपयोग करती हैं।

सोशल मीडिया पर उपभोक्ता या यूजर के रूप आमलोगों के विचारों ,पसंद भावनाओ ,अभिव्यक्ति से जुड़े आकड़ों को प्रोसेस या प्रसंस्करण करके उसका व्यापार किया जाता है । राजनीति और अर्थव्यवस्था मे सूचना हमेशा कीमती होती है। फेसबूक,गूगल यूट्यूब बृहद कंपनी हैँ जो सूचनाओ को बेचती ,बनाती, और नियंत्रित करती है।गूगल के पास 2016 मे 75000 कर्मचारी और 532 बिलियन डालर की पूजी थी वही फेसबूक केपास 2016 तक 332 बिलियन डालर की पूजी के साथ 18000 कर्मचारी थे ,वही जनरल मोटर को अपनी पूजी 225 बिलियन डालर तक पहुचाने मे चालीस साल लग गए जबकि उनके पास 735000 महिला–पुरुष काम करते थे (Zobuff 2019 468)। जनरल मोटर 40 साल तक गाड़ियों को बेचकर जितना मुनाफा अर्जित कर पाया उसके दोगुने से ज्यादा मुनाफा गूगल और फेसबूक ने दस साल के छोटे से समय मे सूचनाओ ,भावनाओ ,विचारों को बेंच कर अर्जित किया । बाजार मे वस्तुओ की कमी और एकाधिकार से मुनाफा कमाया जाता है।अमेरिकन विद्वान वाल्टर लिपमैन(1922) ने अपनी बहुचर्चित पुस्तक पब्लिक ओपिनियन मे कहा था कि लोगों के पास कौन सी सूचना पहुचेगी तथा तथा कौन सी सूचना नहीं पहुचेगी यह मीडिया तय करता है ,यहा लिपमैन का मीडिया से अर्थ प्रिन्ट और टेलीविजन मीडिया से था क्योंकि उस समय सोशल मीडिया का अस्तित्व नहीं था। लेकिन आज सोशल मीडिया प्रिन्ट और टेलीविजन मीडिया दोनों से बहुत आगे निकल चुका है ,प्रिन्ट और टेलीविजन मीडिया उसके सामने अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहे है।सोशल मीडिया का वर्तमान मे सूचना प्रवाह पर नियंत्रण और एकाधिकार ह।

सोशल मीडिया के विशेषज्ञों बेयात (2017),मॉक (2014),संसटेन(2017)ओर जूबोफ (2019) के अध्ययन के विश्लेषण से तीन तथ्य उभरकर सामने आते हैं , पहला यह कि सोशल मीडिया प्रथम दृष्टया सतही तौर पर आम लोगों के लिए अभिव्यक्ति की आजादी और अपनी समस्याओ को राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर पहुचाने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दूसरा तथ्य यह कि सम्प्रेषण और अंतःक्रिया के माध्यम होने के कारण सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म यूजर्स (उपभोक्ता)के बारे मे प्रत्येक तरह की सूचना एकत्र कर लेता है खासकर निजी ध्व्यक्तिगत जीवन से जुड़ी सूचनाए भी एकत्र कर लेता है,यह निजता के अधिकार का हनन है। तीसरा तथ्य यह कि यूजर्स (उपभोक्ता) के बारे मे सोशल मीडिया द्वारा एकत्र सूचनाओ का उपयोग राज्य द्वारा यूजर्स (नागरिक)के ऊपर निगरानी रखने और उसे नियंत्रित करने के लिए किया जाता है ।

निष्कर्ष

सोशल मीडिया तकनीकि आधारित ऐसे ताकतवर हथियार के रूप मे उभर कर सामने आया है जिसने लोगों के लिए आपस मे अन्तः क्रिया करने, खबरों को लोगों तक पहुचाने, अपने विचारों, भावनाओ और पसंद–नापससंद को साझा करने का मौका देता है। यह आम लोगों के लिए आसान अभिव्यक्ति के एक माध्यम के रूप मे सामने आई है लेकिन यह सिक्के का सिर्फ एक पहलू है जो सकारात्मक लगता है लेकिन सिक्के का दूसरा पहलू भी उतना ही गंभीर है। यह राजनैतिक ध्रुवीकरण,वैचारिक नियंत्रण और निगरानी के एक ताकतवर साधन के रूप मे सामने आया है जैसे ही लोग सोशल मीडिया पर अंतःक्रिया करते है उनकी सोच ,विचार ,पसंद ,नापसंद तथा अनेक क्रिया विधियों से जुड़े आकडे सोशल मीडिया वेबसाईट पर पहुच जाते हैं, जिसका प्रयोग व्यापार ,बाजार और राजनीति के अलावा उनपर निगरानी के लिए किया जाता है । खबरों मे मिश्रित कहानियों ,झूठी खबरों ,प्रोपोगैंडा के माध्यम से व्यापार बाजार के मुताबिक लोगों के उपभोग के प्रति नजरिए अर्थात उपभोग व्यवहार को प्रभावित करके मुनाफा कमाया जाता है। राजनीति मे भी खबर कहानी ,प्रोपोगैंडा धारणाओ के माध्यम जनमत को प्रभावित किया जाता है तथा एक कृत्रिम जनमत का निर्माण किया जाता है। कृत्रिम अलगोरिथम के माध्यम से आम लोगों को एकतरफा विचारों के भीतर कैद करने की कोशिश सोशल मीडिया द्वारा की जाती है।

References-

1. Sunstein,C.R(2017); Republic; Devided democracy in the age of social mediaPrincetonUniversityPress,p1517-
2. Morelock J& Narita F Z(2021)The Society of the Selfie:Social Media and the Crisis of Liberal Democracy, University of Westminster Press.p 12,70
3. Schirch L (2021):Social Media Impacts on Conflict and Democracy :The Techtonic Shift, Routledge.ch-4
4. Harari Y N (2011):Sapiens:A Brief History of Humankind ,Vintage Book London.p -26 27
5. Bayat, A.(2021): Revolutionary Life The Everyday of the Arab Spring ,Harvard university press
6. Aral,S.(2020): The Hype Machine Random House book 37,34-
7. Mounk Y.:(2018)The People Vs Democracy :Why our Freedom in Denger &how to Save It, Harvard University Press p 143
8. Zobuff S :(2019)The Age Of Surveillance Capitalism, PublicAffairs Hachette Book Group p 468
9. Garimella K. Morales GF. Gionis,A. & Mathioudakis M.) 2018:(Political Discourse on Social Media: Echo Chambers, Gatekeepers, and the Price of Bipartisanship. In WWW 2018: The 2018 Web Conference, April 23–27, 2018, Lyon, France. .https://doi.org/10.1145/3178876.3186139

10. Altoe F et al (2024) Online Fake News Opinion Spread and Belief Change: A Systematic Review Hindawi Human Behavior and Emerging Technologies Volume 2024, Article ID 1069670,p 20

11. Egelhofer J L& Lecheler S (2019) : Fake news as a two-dimensional phenomenon : a framework and research agenda, Annals of the international communication 2019 vol 43,no.2 , p 98 ,Routledge.)Taylor and Francis Group) https://doi.org/10.1080/23808985.2019.1602782

12. Hill C A, Dean E& Joe Murphy,J2014)):Social Media, Sociality,and Survey Research John Wiley & Sons, Inc., Hoboken, New Jersey.p2

13. Mingers,J. Willcocks L.(2004):Social Theory and Philosophy for Information Systems ,John Wiley & Sons Ltd, P255

14. Marshall, M(1994)Understanding Media :The Extensions of Man ,MIT Press edition, p 7

ग्रामीण अनुसूचित महिलाओं की सामाजिक स्थिति के बदलते प्रतिमान : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

कु. प्रगति पाण्डेय
शोध छात्रा समाजशास्त्र विभाग
महत्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी उत्तर प्रदेश

सारांश–

यदि हम इतिहास को देखें तो ज्ञात होता है कि भारतीय समाज में प्राचीन काल से अब तक महिलाओं की स्थिति लगभग अच्छी रही है। हर काल में महिलाएं अग्रणी भूमिका में रही है। हालांकि इस सच्चाई को भी नकार नहीं सकते हैं कि मध्यकाल में महिलाओं की स्थिति निम्न स्तर की हो गई थी साथ ही भूमिका भी गौण हो गई थी। मध्यकाल में महिलाओं को ना तो शिक्षा के क्षेत्र में आगे आने दिया जाता था और ना ही समाज में। अनेक रुढ़िवादी प्रथाओं, कुरीतियों का सामना करना पड़ता था। स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही इन महिलाओं ने भी समाज में अपना स्थान सुनिश्चित किया। जाति व्यवस्था से महिलाओं की सामाजिक स्थिति प्रभावित होती है। जाति व्यवस्था विशेष करके अनुसूचित जाति की महिलाओं को प्रभावित करने में कोई कसर नहीं छोड़ती है। स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान में अनुसूचित जाति की महिलाओं को स्वतंत्रता, समानता, सामाजिक न्याय एवं शिक्षा के अवसर प्रदान किये। जिसके परिणाम स्वरुप अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति में सुधार देखने को मिल रहा है। ग्रामीण क्षेत्र के अनुसूचित जाति की महिलाओं को शिक्षा के अवसर उपलब्ध होने के कारण आर्थिक सामाजिक शैक्षणिक राजनीतिक स्थिति में सुधार हो रहा है। आधुनिक शिक्षा, संवैधानिक अधिकार एवं सामाजिक विधानों ने ग्रामीण क्षेत्र की अनुसूचित जाति की महिलाओं की परंपरागत विचारों तथा सामाजिक स्थिति को बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है। इस शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य है ग्रामीण क्षेत्र के अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक स्थिति का पता लगाना।

मूल शब्द–महिलाएं, सामाजिक स्थिति, अनुसूचित जाति, भारतीय संविधान, बदलते प्रतिमान।

भूमिका–

अनुसूचित जाति की महिलायें समाज में प्राचीन काल से ही जाति तथा लैंगिक आधार पर उपेक्षित होती रही हैं क्योंकि वैदिकालीन भारतीय समाज खड़ी हर चतुर्वर्ण व्यवस्था पर आधारित थी। गुण, कर्म एवं सद्भाव इसकी आधारशीला थी। वैदिककाल में स्थिति फिर भी अच्छी थी। उत्तर वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था, जाति–व्यवस्था का स्थान ले लिया था। उसी समय से ऊँची जाति को छोड़कर बाकी सभी जातियों की सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक स्थिति में बदलाव होने लगा था। समाज में इन जातियों को अलग–अलग नाम से जाना जाता है। जैसे–शूद्र, दलित, अनार्य, अस्पृश्य, अछूत, हरिजन एवं पिछड़ी जातियाँ आदि। जिसके कारण अनुसूचित जाति के लोगों को असमानताओं, उच्चता, निम्नता, पवित्रता–अपवित्रता जैसी भेद–भाव का सामना करना पड़ता था। मध्यकाल में भी अनुसूचित जातियों को अस्पृश्य कहा जाने लगा था। जिसके कारण अनेक निर्योग्यताओं का शिकार होना पड़ा था। वर्तमान में जाति के आधार पर भेद–भाव न करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 16 में प्रावधान है।

इस अनुच्छेद के मुताबिक, किसी नागरिक के लिए किसी नौकरी या पद के लिए धर्म, मूल वंश, जाति, लिंग, जन्म–स्थान आदि के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता है।

19वीं सदी में, भारत में ब्रिटिश शासन में नई नीति, नई शिक्षा व्यवस्था, नई प्रशासनिक व्यवस्था और कानून व्यवस्था लागू हुआ था। जिसके परिणाम स्वरूप जाति व्यवस्था में परिवर्तन होना शुरू हो गया था। इस सदी के अन्त तक अनेक समाज सुधारकों ने वर्ण व्यवस्था, जाति व्यवस्था अर्थात् परम्परागत व्यवस्था और उन शास्त्रों का विरोध किया जो जाति के आधार पर समाज में सम्मानजनक स्थिति से वंचित करती थीं। राजा राम मोहन राय, गोपाल कृष्ण, ईश्वरचन्द विद्यासागर, महात्मा गांधी, बाबा साहब अम्बेडकर आदि ने अनुसूचित जातियों के कल्याण के लिए अनेक कदम उठाए और सफल भी हुए।

आजादी के पश्चात् भारत सरकार ने अनुसूचित जातियों के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति में सुधार के लिए कई कानून बनाए जैसे नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम 1955, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम 1989। अनुसूचित जाति के उत्थान हेतु संवैधानिक प्रावधान–अनुच्छेद 15 (4), 16 (4 अ), 17, 46, 375, 330, 332, 342 एवं पंचायतों से सम्बन्धित संविधान के भाग IX और नगर पालिकाओं से सम्बन्धित भाग IX (A) में SC तथा ST के सदस्यों हेतु आरक्षण की परिकल्पना की गई है जो कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को प्राप्त है।

भारत में लैंगिक असमानता प्रत्यक्षतः देखी जा सकती है। महिलाओं के साथ दोयम दर्जे का व्यवहार किया जाता है। यह व्यवहार अनुसूचित जाति की महिलाओं के साथ और बढ़ जाती है। अनुसूचित जाति के महिलाओं को तीन आधारों पर भेदभाव का सामना करना पड़ता है–जाति, वर्ग एवं लिंग। महिला होने के कारण अनेकानेक प्रथाओं, रूढ़ियों तथा निषेधों से जूझती रही है व सहन करती रही है।

वर्तमान में ग्रामीण समाज में अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्थिति में तेजी से बदलाव आया है। ये महिलाएँ अपने ऊपर सदियों से चले आ रहे अन्याय–अपमान, अत्याचार को चुनौती दी है, अपने अधिकारों के लिए सकारात्मक प्रयास किये हैं। साथ ही लोगों की नजरिया में बदलाव देखने को मिल रहा है। इसका प्रमुख कारण है आज के दौर में बदलते सामाजिक प्रतिमानों तथा जातिगत भेद–भाव की प्रबलता में कमी होने से ग्रामीण अनुसूचित जाति की महिलाओं को सम्मानजनक स्थान प्राप्त हो रहे हैं। वहीं दूसरी ओर भारत सरकार द्वारा कल्याणकारी योजनाओं ने इन महिलाओं को आर्थिक रूप से मजबूत किया है।

ग्रामीण समाज में शिक्षा, संचार, नवाचार एवं डिजिटल प्रौद्योगिकी से अछूता नहीं है जिससे भौतिक व सांस्कृतिक परिवर्तन देखने को मिल रहा है, व्यवसायिक अवसरों में वृद्धि हो रही है और आर्थिक स्वायत्तता के नये अवसरों में अनुसूचित जाति की महिलाओं की आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं धार्मिक स्थिति पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। जिससे महिलाओं की स्थिति को दृढ़ता एवं नई दिशा मिल रही है। आज अनुसूचित जाति की महिलाएँ समाज में अन्य वर्गों की महिलाओं के साथ सामंजस्य बढ़ा रही है साथ ही पहले के अपेक्षा सामाजिक रीति–रिवाजों में भी परिवर्तन आया है। आज महिलाएँ समाज में अन्य वर्गों की महिलाओं के साथ सामंजस्य बढ़ा रही है साथ ही पहले के अपेक्षा सामाजिक रीति–रिवाजों में भी परिवर्तन आया है। आज महिलाएँ पंचायत से लेकर विधानसभा एवं संसद तक अपने अधिकार के लिए आवाज उठा रही है। त्रिस्तरीय पंचायत चुनावों में ग्रामीण अनुसूचित जाति की महिलाओं की सहभागिता स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा है।

आज ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है, जहाँ महिलाएँ न पहुँची हों। भारतीय नारी आज सक्रिय राजनीति, कुशल प्रशासन, वाणिज्य प्रबन्धन एवं सूचना प्रौद्योगिकी जैसी उद्धमता के क्षेत्रों में अपनी विशिष्ट क्षमताओं का परिचय पूरे विश्व को दे रही है।

साहित्य सर्वेक्षण :

- शर्मा, सुमित्रा (2019) ने अपने लेख 'ग्रामीण समाज में अनुसूचित जाति की महिलाओं की बदलती सामाजिक–आर्थिक प्रस्थिति' में स्पष्ट किया है कि अनुसूचित जाति की युवा वर्ग की महिलाओं में जाति के आधार पर भेद–भाव के लिए रोष है जबकि बुजुर्ग महिलाए जबकि बुजुर्ग महिलाएँ परम्परागत नियम, स्वाभाव मान कर स्वीकार कर लेती है।
- सिंह, के. एस. (1993) ने अपने लेख 'पिपल ऑफ इंडिया' में स्पष्ट किये है कि अधिकांश अनुसूचित जातियाँ अस्पृश्यता के सामाजिक दंश से पीड़ित है। कुछ अनुसूचित जाति की महिला व्यवसायिक व अर्थोपार्जन की क्रियाओं में संलग्न है साथ ही वे अपने समुदाय में सामाजिक क्रियाओं व अनुष्ठानों में भी संलग्न है।
- महेश्वर, चन्द्रप्रभा और सपना शर्मा (2019) ने अपने अध्ययन 'अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन' में पाया की वर्तमान समय में भी महिलाएँ पुरुष प्रधान मानसिकता से पीड़ित हैं। आज भी पुरुष समाज महिलाओं के प्रति अपने दृष्टिकोण को नहीं बदल पाया है। ग्रामीण क्षेत्रों में अनुसूचित जाति की अधिकांश महिला महिलाएँ सफलता के लिए भाग्य को सर्वोपरी स्थान देती है।
- जायसवाल, अनुपमा (2016), ने अपने लेख 'पंचायती राज में अनुसूचित महिला का नेतृत्व एवं राजनीति सहभागिता' में स्पष्ट किया है कि महिलाओं की ग्रामीण सहभागिता में जनसंख्या की दृष्टि से लगभग आधा हिस्सा महिलाओं का है और परिवार के साथ–साथ आर्थिक विकास एवं सामाजिक परिवर्तन में महिलाओं का योगदान एवं भूमिका मुख्य है।
- लता, मंजु (2012), ने अपने पुस्तक 'अनुसूचित जाति में महिला उत्पीड़न' में स्पष्ट किया है कि अनुसूचित महिलाओं को मानसिक, शारीरिक तथा आर्थिक रूप से परेशान किया जाता है। जाति के आधार पर भेद–भाव स्पष्ट दिखायी देता है।
- शिवांशी (2017) ने अपने शोध का 'अनुसूचित जातियों की महिलाओं पर आधुनिकता का प्रभाव' में स्पष्ट किया है कि आधुनिकता के सम्पर्क में आने से अनुसूचित जाति की महिलाएँ अपने अधिकार के प्रति जागरूक हो गई है। आधुनिकता के परिणाम स्वरूप इनके रहन–सहन, खान–पान, वेशभूषा आदि में बदलाव हुआ है। 21वीं सदी में अनुसूचित जाति की महिलाओं के स्थिति में काफी सकारात्मक परिवर्तन हुआ है।
- सुमन, मंजू (2013) ने अपने पुस्तक में 'दलित महिलाओं' को एक जाति के सीमा में रखकर देखने के साथ ही एक वर्ग के रुप में भी देखा गया है। दलित महिलाओं के स्थिति का वास्तविक चित्रण किया गया है, उनके समस्याओं एवं समस्या के समाधान पर चर्चा किया गया है।
- ओमवेट, गेल (2011) ने अपनी पुस्तक 'दलित दृष्टि' में अम्बेडकर की पद्धति का अनुसरण किया है। उन्होंने पितृसत्तावादी आधारित मूल्य एवं नैतिकता को चुनौती दी है। स्त्री उत्पीडकता का विस्तृत चर्चा किया है। दलितों के आत्मसम्मान के लिए मॉडल प्रस्तुत किया है।

शोध प्रविधि :

प्रस्तुत शोध पत्र में विश्लेषणात्मक शोध अभिकल्प का प्रयोग किया गया है। जनपद बलिया के बांसडीह तहसील में कुल 484 गाँव हैं। प्रस्तुत अध्ययन को दृष्टिगत रखते हुए छः ऐसे गाँवों का चयन किया गया है, जिनमें कुल परिवारों की संख्या 200 से अधिक हो। जिसमें अनुसूचित जाति के परिवारों की संख्या 50 से अधिक हो। इस क्रम में छः गाँव सराँक, तिवारी, रामपुर, बभनौली, छितौनी एवं बलिपुर का चयन किया गया। इन छः गाँवों में, अनुसूचित जाति के परिवारों की संख्या क्रमशः 80, 90, 75, 62, 68 एवं

82 थी। इन चयनित छः गाँवों में से दैव निदर्शन कि लाटरी पद्धति से एक गाँवों में से दैव निदर्शन कि लाटरी पद्धति से एक गाँव का चयन किया गया, जिसमें सराँक गाँव अध्ययन के लिए निदर्श के रुप में चुना गया है। जिसमें अनुसूचित जाति के परिवारों की संख्या 80 है। प्रत्येक परिवार की एक महिला उत्तरदात्री है।

यह शोध पत्र प्राथमिक और द्वितीयक आँकड़े पर आधारित है। प्राथमिक आँकड़े में साक्षात्कार अनुसूची यथा अवलोकन का प्रयोग किया गया है। इसके साथ ही व्यक्तिगत अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया जायेगा। द्वितीयक आँकड़ों में पत्र–पत्रिका, पुस्तकें, सरकारी तथा गैर–सरकारी आँकड़े तथा आनलाइन समाग्री का उपयोग किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य :

प्रस्तुत अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य अग्रलिखित है –

1. ग्रामीण अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. अनुसूचित जाति की महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति का अध्ययन करना।
3. अनुसूचित जाति की महिलाओं की प्रस्थिति का अध्ययन करना।

अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक स्थिति :

औद्योगिकरण, नगरीकरण एवं नई प्रौद्योगिकी के सम्पर्क में आने से ग्रामीण क्षेत्र की अनुसूचित जाति की महिलाओं को शिक्षा व रोजगार के अवसर उपलब्ध होने से उनकी शैक्षिक, सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। संवैधानिक अधिकार, सामाजिक विधानों तथा आधुनिक शिक्षा के परिणामस्वरूप अनुसूचित जाति की महिलाओं की स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन हुआ है। आज अनुसूचित जाति की महिलाएँ प्रत्येक क्षेत्र में अहम् भूमिका निभा रही है। आज महिलाएँ प्रत्यक्षः रूप से पारिवारिक दायित्वों का बोझ स्वयं उठाकर पुरुषों के कंधा से कंधा मिलाकर आर्थिक क्षेत्र में भी संलग्न रहती है। वर्तमान में आर्थिक क्षेत्र के क्रियाकलापों में महिलाओं की भागीदारी पुरुषों के अनुपात में अधिक दिखाई दे रही है। ये क्षेत्र है–कृषि, पशुपालन, मत्स्य पालन, मुर्गी पालन और हैण्डलूम व्यवसायों में भागीदारी है।

प्रमिला कपूर का कहना है कि महिलाएँ जब समझने लगी है कि नौकरी करने से उन्हें एक व्यक्तिगत दर्जा तथा स्वतंत्र सामाजिक अस्तित्व मिल रहा है। इसी के साथ महिलाओं के सोचने व अनुभव करने का ढ़ंग भी बदला है। वो हर चीज को तार्किता से जोड़कर सोच रहे हैं।

राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन, स्टार्टअप इंडिया योजना के मदद से अनुसूचित जाति की महिलाएँ परम्परागत् व्यवसायों को नवाचार से जोड़कर नये व्यवसायों के रूप में स्वरोजगार को शुरू किया है। जिससे अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक–व्यवसायिक गतिशीलता बढ़ गई है। जिससे उन्हें सामाजिक व आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हुई है। सराँक गाँव की उत्तरदात्रियों से सामाजिक व आर्थिक स्थिति से सम्बन्धित प्रश्न किया गया। जो निम्नलिखित है–

तालिका : 1

अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति

सामाजिक स्थिति	आवृत्ति	प्रतिशत
अन्य जातियों के लोगों की सामाजिक स्थिति के समान है।	66	82.5
अन्य जातियों के लोगों की सामाजिक स्थिति से नीची है।	9	11.25
पता नहीं है	5	6.25
कुल	80	100

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि सराँक गाँव की अनुसूचित जाति की 82.5 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि समाज में उनकी स्थिति अन्य जातियों के लोगों की सामाजिक स्थिति के समान है। 11.25 प्रतिशत महिलाओं ने कहा कि उनकी सामाजिक स्थिति अन्य जातियों के लोगों की सामाजिक स्थिति से निम्न है। 6.25 प्रतिशत महिलाओं ने अपनी राय व्यक्त नहीं किया।

तालिका : 2

क्या आप सामान्य जातियों के साथ पुजा–पाठ में संलग्न होती है?

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	57	71.25
नहीं	23	28.75
कुल	**80**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि सराँक गाँव की अनुसूचित जाति की उत्तरदात्रियों ने बताया है कि सामान्य जातियों के साथ ये भी पुजा–पाठ में संलग्न होती है। प्रश्न किया गया कि किस प्रकार संलग्न होती है तो उन्होंने बताया कि वार्षिक पुजा (काली माता) में सम्मिलित होते हैं। माया ने बताया कि वर्ष में दो बार काली माता का पुजा होता है उसमें हम सब भी पुजा करते हैं। वहीं सरिता, फुलकुमारी तथा रोशनी ने बताया कि पास में मंदिर है हम सब नित्य पुजा करने जाते है। कोई रोक–टोक नहीं है। वहीं 28. 75 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने कहा कि हम अपनी स्वेच्छा से मंदिर नहीं जाते हैं।

तालिका : 3

क्या आप व्यवसायिक कार्य में संलग्न है?

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	67	83.75
नहीं	13	16.25
कुल	**80**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 83.75 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ व्यवसायिक कार्यों में संलग्न है जबकि 16.25 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ घरेलू महिला है।

तालिका : 4

किस प्रकार के व्यवसायिक कार्य में संलग्न है?

व्यावसायों का वर्गीकरण	आवृत्ति	प्रतिशत
कृषि	12	15.00
स्वरोजगार	28	35.00
सरकारी नौकरी	4	5.00
मजदूरी / श्रमिक	23	28.75
गृहणी	13	16.25
कुल	80	100

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 35 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के पास स्वरोजगार हैं। स्वरोजगार में पशुपालन, मुर्गीपालन, सिलाई कुछ महिलाएँ पास के नगर में जाकर बुटीक एवं ब्यूटीपॉर्लर का कार्य कर रही है। इसके साथ ही महिलाऐं स्वयं सहायता समूह से जुड़ी हैं जिसकी सहायता से वे महिलायें भी अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ कर रही हैं जो कभी गाँव के समाज में अंतिम पायदान पर खड़ी रहती थीं।

अनुसूचित जाति की महिलाओं में शैक्षणिक स्थिति :

मानव जीवन का मुख्य आधार शिक्षा है। शिक्षा के द्वारा ही मानव का विकास होता है। स्वामी विवेकानन्द कहते है कि मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता के अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है। किसी भी समाज में परिवर्तन लाने में शिक्षा की भूमिका महत्वपूर्ण मानी जाती है। महिलाओं की स्थिति और सुधार करने के लिए शिक्षा महत्वपूर्ण साधन माना जाता है। शिक्षा ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओ में सदियों से चली आ रही। असामानता को दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। उत्तरदात्रियों से शिक्षा सम्बन्धित प्रश्न कि गया जो अग्रलिखित है–

तालिका : 5

उत्तरदात्रियों का शैक्षणिक स्तर

शैक्षणिक स्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
आठवीं–हाईस्कूल	8	10.00
इण्टरमीडिएट	37	46.25
ग्रेजुशन	10	12.50
तकनीकी शिक्षा/व्यावसायिक शिक्षा	2	2.5
कुछ भी नहीं	23	28.75
कुल	80	100

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि 46.25 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ इण्टमीडिएट है। जबकि सबसे कम 2.5 प्रतिशत उत्तदात्रियाँ तकनीकी शिक्षा ली हैं। वहीं 28.75 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ अनपढ़ है।

तालिका : 6

उत्तरदात्रियों की शैक्षणिक स्थिति पर प्रभाव

प्रभाव	आवृत्ति	प्रतिशत
सकारात्मक	54	67.50
बहुत कम	12	15.00
कोई प्रभाव नहीं	7	8.75
पता नहीं	7	8.75
कुल	80	100

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि अधिकांश 67.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियों का मानना है कि शिक्षा से उनके सामाजिक स्थिति पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

अनुसूचित जाति की महिलाओं की प्रस्थिति :

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् महिलाओं की प्रस्थिति में अधिक सुधार हुआ है। सरकारी, गैर–सरकारी संगठनों तथा समाज सुधारकों के प्रयासों के परिणामस्वरूप वर्तमान की महिला की स्थिति मध्यकाल से कहीं ऊँची है। वर्तमान में भारतीय महिलाओं को शिक्षा और रोजगार की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। जिससे उनकी प्रस्थिति में सकारात्मक सुधार हुआ है।

उत्तरदात्रियों से प्रस्थिति सम्बन्धित प्रश्न किया गया है जो अग्रलिखित हैं–

तालिका : 7

क्या परिवार के आर्थिक निर्णय में आपकी संलग्नता होती है?

निर्णय होने में सहमति	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	35	43.75
नहीं	23	28.75
कभी–कभी	22	27.50
कुल	80	100

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 43.75 प्रतिशत उत्तरदात्रियों का परिवार आर्थिक निर्णय में संलग्नता है।

तालिका : 8

क्या आर्थिक निर्णय रूप से आत्मनिर्भर महिलाओं के प्रस्थिति में बदलाव आया है?

प्रस्थिति में परिवर्तन	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	37	46.25
नहीं	5	62.50
कुछ कहा नहीं जा सकता	38	47.50
कुल योग	80	100

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 46.25 प्रतिशत उत्तरदात्रियों का कहना है कि आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर महिलाओं के प्रस्थिति में बदलाव आया है। जबकि 47.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियों का कहना है कि कुछ कहा नहीं जा सकता है।

निष्कर्ष :अध्ययन क्षेत्र की अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति को बदलने में आधुनिक शिक्षा, संविधानिक प्रावधान, नवाचार तथा सरकार द्वारा चलाए जा रहे योजनाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा किया है। जो स्पष्ट रूप से ग्रामीण अनुसूचित जाति की महिलाओं पर दिखाई दे रहा है।

ग्रामीण अनुसूचित जाति की महिलाएँ वर्तमान में विभिन्न स्वरोजगार एवं स्वयं सहायता समूह से जुड़कर सामाजिक व आर्थिक स्थिति सुदृढ़ कर समाज के विकास में अहम् भूमिका निभा रही है। अब महिलाएँ हर विषय, घटना को तार्किता से सोच रही है। अनुसूचित जाति के महिलाओं की प्रस्थिति में बदलाव का प्रमुख आधार शिक्षा और रोजगार है। अन्ततः कह सकते हैं कि समाज में जाति के आधार पर भेद–भाव कम हुआ है। महिलाओं की प्रस्थिति सशक्त हो रही हैं। ये समाज के लिए उदाहरण बनकर सामने आ रही है।

सुझाव

- ग्रामीण अनुसूचित जाति की वे महिलाऐं जिनकी सामाजिक व आर्थिक स्थिति में सुधार नहीं हुआ है या कम हुआ है उनकी स्थिति को बदलने के लिए शिक्षित किया जाए।
- ग्रामीण अनुसूचित जाति महिलाओं को जागरुक किया जाए जिससे कि पुरानी मान्यताएँ, अन्धविश्वासों को न अपनाए।
- सरकार द्वारा चलाई जा रही योजना का प्रचार–प्रसार किया जाए जिससे गाँव के अंतिम छोर में निवास करने वाली महिलाओं तक पहुँचे और वह लाभान्वित हो सके।
- कुटीर उद्योग–धंधों को बढ़ावा देना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ :

- शर्मा, सुमित्रा (2019), ग्रामीण समाज में अनुसूचित जाति की महिलाओं की बदलती सामाजिक–आर्थिक प्रस्थिति, श्रृंखला एक शोधपरक विचारक पत्रिका, वॉल्यूम (6)
- सिंह, के.एस. (1993), पिपल ऑफ इंडिया, एंथ्रोपोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया, वॉल्यूम 21
- महेश्वर चन्द्रप्रभा और शर्मा सपना (2019), अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन, जर्नल ऑफ एडवांसेज एण्ड स्कॉलरली रिसर्च इन एलाइड एजुकेशन, वॉल्यूम (9)
- जायसवाल, अनुपमा (2016), पंचायती राज में अनुसूचित जाति महिलाओं का नेतृत्व एवं राजनीतिक सहभागिता, ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज संस्थान, हैदराबाद
- लता, मंजु (2012), अनुसूचित जाति में महिला उत्पीड़न, अर्जुन प्रकाशन, दिल्ली
- शिवांशी (2017), अनुसूचित जातियों की महिलाओं पर आधुनिकता का प्रभाव जर्नल ऑफ ह्यूमिनिटिज एण्ड कल्चर, वॉल्यूम (4)
- कपूर, प्रमिला, (1970), मैरिज एण्ड दि वर्किंग वूमन इन इण्डिया, विकास पब्लिकेशन, दिल्ली
- सूमन, मंजू (2013), दलित महिलाएँ, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली
- ओमवेट, गेल (2011), दलित दृष्टि, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
- अमर उजाला, (2020), प्रदेश के निर्माण से लेकर विकास तक में महिलाओं की बड़ी भूमिका
- कश्यप, आलोक कुमार (2012), भारत में अनुसूचित जातियॉ : कल और आज, अर्जुन पब्लिकेशन, दिल्ली
- https://villageinfo.in//uttar-pradesh/balliajbansdih.html
- https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-news analysis/national-commission-for-scheduled-castes-2

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

सोशल मीडिया का युवाओं पर प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

ज्ञानती सिंह
शोध छात्रा समाजशास्त्र विभाग
महाराज बलवन्त सिंह पी0जी0 कॉलेज गंगापुर वाराणसी
प्रो0 आलोक कुमार कश्यप
समाजशास्त्र विभाग
महाराज बलवन्त सिंह पी0जी0 कॉलेज गंगापुर वाराणसी

सारांश :–
वर्तमान समय को डिजिटल युग कहा जाता है। और इस युग में सोशल मीडिया ने युवाओं के जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाया है। जैसे फेसबुक, इंस्टाग्राम, टविटर, स्नैपचैट इत्यादि प्लेटफार्म युवाओं के लिए संवाद या जानकारी साझा करने और मनोरंजन के लिए प्रमुख माध्यम बन गए हैं।सोशल मीडिया मनुष्य जीवन के लिए एक वरदान है लेकिन इसका आवश्यकता से ज्यादा उपयोग मनुष्य के लिए अभिशाप भी हो सकता है। तकनीकी ने आज मनुष्य के जीवन को इतना सरल बना दिया है कि व्यक्ति दुनिया के किसी भी व्यक्ति से सम्पर्क स्थापित कर सकता है। सोशल मीडिया ने किसी भी क्षेत्र को अपने से अलग नही समझा है बल्कि सभी क्षेत्रों में अपना पूर्ण प्रचार प्रसार करके मनुष्य को अपनी ओर अग्रसर किया हैं।

मुख्य शब्द – सोशल मीडिया ,युवा, डिजिटल प्रभाव

प्रस्तावना :–

सोशल मीडिया का पिछले 15 से 20 वर्षों में तेजी से विकास हुआ है। इन वर्षों में सोशल मीडिया एक स्थान विशेष से निकलकर वृहद स्तर पर स्थापित हो चुका है, जिसमें 3 बिलियन से अधिक इंटरनेट उपभोक्ता जुड़े हैं, वह अपने खाली समय एवं काम के समय दोनो में सोशल मीडिया का प्रयोग करते हैं। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जिस समाज में वह रहता है उस समाज कम बारे में वह अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करना चाहता है।समाज में कब, कहाँ क्यों, कैसे, क्या हो रहा है ? इन सब को जानने का एकमात्र माध्यम मीडिया है।जो समाचार द्वारा लोगों की जिज्ञासाओं को पूर्ण करता है। आए दिन कुछ न कुछ ऐसी घटनाएं व बातें मीडिया द्वारा प्रदर्शित की जाती है।जिसका सम्बन्ध कहीं न कहीं आम लोगों के जीवन से होता हैं।समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है और इन सम्बन्धों का निर्माता स्वयं मनुष्य है। सामाजिक प्राणी के रूप में मनुष्य ही समाज में संगठन एवं व्यवस्था स्थापित करते हुए इसं प्रगति एवं गतिशीलता की दिशाओं में ले जाने हेतु प्रयत्नशील रहा है। भारतीय समाज में पिछले वर्षो में अनेक परिवर्तन हुए है एवं वर्तमान में भी हो रहे है।इस सूचना प्रौद्योगिकी ने सूदुर देशों में बैठे व्यक्तियों को जोडने का जिम्मा बखूबी निभाया। इसकं निरन्तर विकास क्रम में सोशल मीडिया उभर कर सामने आया है। भारत में मीडिया का विकास तीन चरणों में हुआ। पहले दौर की नींव उन्नीसवी सदी में उस समय पडी जब औपनिवेशिक आधुनिकता के संसर्ग और औपनिवेशिक हुकूमत के खिलाफ असन्तोष की अंतर्विरोधी छाया में हमारे सार्वजनिक जीवन की रूपरेखा बन रही थी। इस प्रक्रिया के तहत मीडिया दो ध्रुवों में बँट गया। उसका एक हिस्सा औपनिवेशिक शासन का समर्थक निकला और दूसरे हिस्से ने स्वतंत्रता का झण्डा बुलन्द करने वालों का साथ दिया। राष्ट्रवाद बनाम उपनिवेशवाद का यह दौर 1947 तक चलता रहा। इस बीच अंग्रेजी के साथ साथ भारतीय भाषाओं में पत्र पत्रिकाओं के प्रकाशन की समृद्ध परम्परा पडी और अंग्रेजों के नियन्त्रण में रेडियो प्रसारण की शुरूआत हुई।दूसरा दौर आजादी मिलने के साथ प्रारम्भ हुआ और अस्सी के दशक तक चला। इसी दौर में टी0बी0 का आविष्कार हुआ। और नब्बे के दशक में

भूमण्डलीकरण के साथ तीसरे दौर की शुरूआत हुई जो आज तक जारी है। बढती हुई साक्षरता और निरंतर जारी आधुनिकीकरण के तहत भारतीय भाषाओं के मीडिया ने अंग्रेजी मीडिया को प्रसार और लोकप्रियता में बहुत पीछे छोड दिया । मीडिया का कुल आकार अभूतपूर्व ढंग से बढा । नयी प्रौद्योगिकी मीडिया ने का इस्तेमाल करने वाले लोगो की संख्या में जबरदस्त बढोत्तरी हुई। महज दस साल के भीतर भीतर भारत में लगभग वही स्थिति बन गयी जिसे पश्चिम में मीडियास्फेयर कहा जाता है।वर्तमान समय में सोशल मीडिया के प्रयोग ने युवाओं को समय से पहले ही आक्रान्त बना दिया है युवा तुरन्त ही पहचान बनाना चाहते है,बिना इंतजार किए बिना ही प्रतिष्ठित होना चाहते है और जब इच्छा पूरी नही होती तो वे आक्रामक व आपराधिक कार्यों को करने से भी नही डरते है। वैसे तो सोशल मीडिया के फायदे तो बहुत है, परन्तु इसने युवाओं को दिग्भ्रमित भी खूब किया है। सोशल मीडिया के आगमन ने युवाओं के संवाद करने,खुद को अभिव्यक्त करने और दुनिया के साथ बातचीत करने के तरीके में क्रान्तिकारी बदलाव किया है। यह अध्ययन युवाओं पर सोशल मीडिया के सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रभावो पर विचार करते हुए युवा व्यक्तियों पर सोशल मीडिया के बहुमुखी प्रभाव की खोज करता है। और एक समाधान प्रस्तुत करता है। युवाओं के बीच सोशल मीडिया एक समस्या का निदान भी प्रस्तुत करता है। आधुनिक समय में सोशल मीडिया पहले से कहीं ज्यादा आम हो गई है इस मीडिया ने युवाओं के व्यवहार को सीधे तौर पर प्रभावित किया है, स्थिति यह है कि युवा अपनी ही दुनिया में अकेले रह गये है और उन्हें नही पता कि उनको समाज के साथ कैसे बातचीत करनी है हालॉकि कुछ युवा तो अपने परिवार से भी सम्पर्क खो देते है। साथ ही अपनी संचार कौशल को भी खो रहे है। युवा सोशल मीडिया साइट्स के अधिकाधिक आदि होते जा रहे हैं।

सोशल मीडिया :

अन्द्रेस काप्लान एवं मिशेल हैनलेन (2009) के अनुसार "सोशल मीडिया इंटरनेट आधारित अनुप्रयोग (एप्लिकेशन्स) का समूह है, जो वेब 2.0 के सिद्धांत पर वैचारिक एवं तकनीकी रूप से निर्मित है और यह इसके उपयोगकर्ताओं को वस्तु (कन्टेट) के निर्माण एव ं आदान प्रदान की अनुमति प्रदान करता है"।

स्वर्ण सुमन के अनुसार "सोशल मीडिया तकनीक और सामाजिक व्यवहार का संलयन है"।

सोशल मीडिया एक इन्टरनेट आधारित सॉफ्टवेयर और इन्टरफेस है। जो व्यक्तियो को एक–दूसरे के साथ बात–चीत करने के लिए तथा उनकी व्यवसायिक जानकारी, निजी तस्वीरें और विचारों के रूप में, तथा उनके जीवन के बारे में जानकारी प्रदान करने के लिए अनुमति देतें हैं। सोशल मीडिया युवा पीा कर सकते हैं। सोशल नेटवर्क बिजनेस को कई तरीके से सपोर्ट करता है। प्रचार के दूसरे माध्यमों जैसे – टी. वी., रेडियो और प्रिन्ट मीडिया की तुलना में जो कि लाखों रूपये डिमान्ड करते हैं। उनसे यह प्रचार का बहुत ही सस्ता और प्रभावशाली माध्यम है। कई जगह तो खर्च लगभग न के बराबर है इसमें सिर्फ हमारा समय और ऊर्जा का इस्तेमाल होता है। हमें और कम्पनियों को टारगेट ग्राहक लगभग फ्री में मिल जाते है। आज की दुनियां मे ं फेसबुक, ट्विटर, लिंक्ड्इन बहुत ज्यादा पॉपुलर साइट्स हैं। जिस पर कम्पनियाँ लाखों को टारगेट कर सकती हैं। सोशल मीडिया पर युवा काफी सक्रिय रहते हैं। जिस पर वे अपने मित्रों, रिश्तेदारों, आदि के सम्पर्क में बने रहते हैं और सूचनाओं का आदान–प्रदान करते रहते हैं। सोशल मीडिया का युवाओं पर सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनो ं तरह के प्रभाव पड़ते हैं।

मीडिया का महत्व :

मीडिया एक ऐसा जरिया है जिसके द्वारा देश–विदेश की जानकारी, डाटा को एक साथ लाखों लोगों तक पहुँचाया जाता है पहले लोग अपनी बात दूसरों तक पहुँचाने के लिए डांस, गाने, नाटक आदि का प्रयोग करते थे। जिससे वे अपनी बात दूसरों तक आसानी से पहुँचा सकें। समय के साथ–साथ इसमें बदलाव

आया और इसकी जगह प्रिंट मीडिया फिर मास मीडिया और अब सोशल मीडिया के द्वारा लोग अपनी बात सबके सामने रखते हैं। मीडिया संचार का एक बहुत आसान और मजबूत तरीका हैं। आज कल मीडिया के बहुत आसान तरीके हैं। रेडियो, टीवी, न्यूजपेपर एव ं इंटरनेट आदि। मीडिया का हमारी सोसाइटी में एक महत्वपूर्ण स्थान है। मीडिया ने जब पहली बार काम करना शुरू किया तो प्रिंट मीडिया आया। इसका मतलब, समाचार पत्र आदि से है। समाचार पत्रों के द्वारा लोग अपनी बात या देश–विदेश की जरूरी जानकारी छापने लगे। इसके द्वारा एक साथ बहुत से लोगों तक, बहुत कम समय में जानकारी पहुँचाना आसान हो गया। इसके बाद रेडियो जिसके द्वारा हम गाने, विविध प्रकार की जानकारी, समाचार आदि सुन सकते थे। रेडियो के इतिहास के बारे में जाने तो रेडियो की फ्रीक्वेंसी सेट कर, ये गाँव–गाँव, शहर–शहर पहुँचने लगा, इसके द्वारा और जल्दी जानकारी मिलने लगी, इसके बाद टीवी ने मीडिया के क्षेत्र में एक नयी क्रांति लाई। टी.वी. के भारत में दूरदर्शन चैनल के साथ घर–घर में टीवी आया। टीवी में मनोरंजन के लिए बहुत से चैनल आये अनेकों सीरियल, ज्ञानवर्धक बातें, देश–विदेश की खबरें, खेल से जुड़ी बातें, संगीत, फिल्म, समाचार आदि का प्रसारण होने लगा। इसमें किसी भी कार्यक्रम को सुनने के साथ–साथ हम देख भी सकते थे। उस मीडिया चैनल के नाम पर पहले सिर्फ दूरदर्शन था। दूरदर्शन में दिन में दो बार 10–15 मिनट के लिये यह कार्यक्रम आता था, जिसमें देश–विदेश की जरूरी बातों को कवर किया जाता था।

"सोशल मीडिया वर्तमान समय में दोधारी तलवार है।"

युवा

आज का दौर अगर सही मायने में देखें तो युवाशक्ति का दौर है। भारत में इस समय 65 प्रतिशत के करीब युवा हैं जो किसी और देश में नहीं है और इन युवाओं को जोड़ने का काम सोशल मीडिया कर रहा है युवा वर्ग के लोगों में सोशल नेटवर्किंग साइट्स का क्रेज दिन पर दिन बढता जा रहा है।

मीडिया विस्फोट के इस दौर में जब पूरे विश्व की सूचना एक छोर से दूसरे छोर तक त्वरित गति से पहुँचती हो तो ऐसे में युवाओं के विकास में सोशल मीडिया के योगदान को नकारा नही जा सकता है संचार माध्यमों के विकास और बढती भूमिकाओं के स्वीकार व अंगीकार करने के बावजूद कुछ वर्ष पहले तक किसी ने कल्पना भी नही की थी कि सोशल मीडिया का अर्न्तजाल युवाओं की सोच, विचार, समझ व दृष्टिकोण को इस कदर प्रभावित करेगा । सोशल मीडिया के इस नेटवर्क ने सभी यूजर्स, खासतौर से युवाओं को एक सशक्त मंच दिया है। युवाओं ने इसे संवाद के साथ ही मनोरंजन का भी माध्यम बनाया है। सम्पूर्ण विश्व की बात की जाए तो भारत पहले पायदान पर बना हुआ है। कारण साफ है कि भारत युवाओं का देश है देश की लगभग 70 प्रतिशत भाग 35 वर्ष से कम आयु समूह का है। यह युवा अपने आबादी के साथ अनुठे जनसांख्यिकी लाभ के द्वार पर खडा है। देश के सरकारी तंत्र ने इस रूचि को देखते हुए सरकारी परियोजनाओं को सोशल मीडिया के माध्यम से युवाओं तक पहुँचाने की कोशिश कर रहा है। सोशल मीडिया दुनिया भर के लोगों से जुडने का एक महत्वपूर्ण साधन है और इसने विश्व में संचार को नया आयाम दिया है लेकिन सोशल मीडिया का आवश्यकता से अधिक प्रयोग किया जाए तो वह हमारे मस्तिष्क को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकता है। और युवाओं को डिप्रेशन की ओर ले जा सकता है। सोशल मीडिया उन लोगों की आवाज बन सकता है जो समाज की मुख्य धारा से अलग है और जिनकी आवाज को दबाया जाता रहा है। लेकिन सोशल मीडिया साइबर बुलिंग को बढावा देता है। यह शोध पत्र द्वितीयक स्त्रोत पर आधारित है तथा इसमें सोद्देश्यपूर्ण प्रणाली का प्रयोग किया गया है।

साहित्य का पुनरावलोकन :–

गिडिंस एंथोनी (2000) के अनुसार जिस आधुनिक समाज को आज हम जानते पहचानते हैं, उस आधुनिक समाज के विकास में इलेक्ट्रनिक संचार व्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका है। व्यक्ति और समाज के बीच की अंतःक्रिया आपस में ज्ञान का आदान प्रदान करने में सहायक होती है। इस आदान–प्रदान को संचार व्यवस्था ने आज कई गुना बढा दिया हैं। सिनेमा टेलीविजन लिखित साहित्य आदि संचार के ऐसे साधन है जो व्यक्ति समाज के संबंधों को व्यापक बनाते हैं। यह समझना भूल होगी कि बढती हुई रिफ्लेक्सीविटी अनिवार्य रूप से हमारे ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करती है। यह अंतःक्रियाएं हमें पुनःपरंपरा की ओर ले जाती हैं, जो रूढिवादी मानसिकता हमें एशिया और दक्षिण अफ्रिका में देखने को मिलती है।वह इसी का परिणाम है

लिविंग स्टोन और बॉबर (2005) ने बताया कि सोशल मीडिया का किशोरो पर अलग–अलग तरीके से प्रभाव पडता है।

मुंबई मिरर डेली (2006) के अनुसार कई कुख्यात आतंकी सरगना ऑरकुट से जुड़े हैं। उदाहरण के रूप में दाऊद इब्राहिम एवं छोटा शकील का नाम ले सकते हैं यह आतंकी नए लोगों को आरकुट के माध्यम से जोड़ते हैं।

के. सुब्रमण्यम एवं जी0 लिन (2007) के अनुसार किशोर सोशल नेटवर्किंग साइटों पर अपना एक वैक्तिक खाता (अकाउंट) बनाते हैं तथा अन्य को किसी वस्तु (कन्टेन्ट) का आदान प्रदान करने की अनुमति प्रदान करते हैं।

डॉ0 प्रज्ञेश कुमार मिश्र (2008) ने कहा है कि सोशल मीडिया पर अच्छी जानकारियों व चीजें परोसने से युवाओं में अपराधिक प्रवृत्ति रूकेगी और सोशल मीडिया का साइड इफेक्ट नही पडेगा दरअसल मानव की प्रवृत्ति अनुकरणात्मक होती है।समाज में जैसा परोसा जाएगा वैसा ही लोग अनुसरण करेगें।

ए0सी0 नेल्सन की "the social media report" (2012) में कहा गया है कि सोशल मीडिया तक पहुँच कायम करने के लिए अधिकाधिक लोग स्मार्टफोन, और टैबलेट्स का इस्तेमाल कर रहे है कनेक्टिविटी के साथ उपभोक्ताओं को सोशल मीडिया के इस्तेमाल करने की अधिक आजादी मिल रही है और वे जहाँ कहीं और जब चाहे सोशल मीडिया का प्रयोग करते है।

श्रेष्ठा लकी (2013) ने बताया है कि सोशल मीडिया लोगों के बीच सम्पर्क का एक माध्यम है,जिसके जरिए पे वर्चुअल समुदायों और नेटवर्क में जानकारी और विचारों का आदान–प्रदान व निर्माण करते है।

लारसन के अनुसार :–"जनसंचार के विकास ने अनेकों नयें विकल्पों को प्रोत्साहित किया है इससे सामाजिक स्तर व अधिकारों की बढोत्तरी हुई है और इसने पुरानी परम्पराओं को चुनौती दी है।"

निष्कर्ष :–

सोशल मीडिया युवाओं के जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया है इसका प्रयोग सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह से किया जा सकता है युवाओं को सोशल मीडिया का उपयोग करते समय सतर्क रहने और इसके नकारात्मक प्रभावों से बचने के लिए आवश्यक कदम उठाने चाहिए। माता–पिता व शिक्षकों को भी युवाओं को सोशल मीडिया का सुरक्षित और जिम्मेदार तरीके से प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। सोशल मीडिया ने युवाओं के जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है यह उन्हें सूचना तक पहुँचने, सामाजिक सम्पर्क बनाने, और रचनात्मकता व्यक्त करने का अवसर प्रदान करता है। हालॉकि इसके अत्यधिक प्रयोग से नकरात्मक प्रभाव भी हो सकते है जैसे मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं, साइबर बुलिंग और शैक्षणिक प्रदर्शन में गिरावट इत्यादि। इस शोध पत्र में हमनें सोशल मीडिया के युवाओं पर पडनें वाले प्रभावों का विश्लेषण किया गया है। यह महत्वपूर्ण है कि हम सोशल मीडिया के सकारात्मक पहलुओं का लाभ उठाए और इसके नकारात्मक प्रभावों को कम करने के लिए प्रेरित करें।

सुझाव :–

विभिन्न उम्र समूहों के युवाओं पर सोशल मीडिया के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। विभिन्न प्रकार के सोशल मीडिया प्लेटफार्म के युवाओं के व्यवहार पर पडने वाले प्रभावों का भी अध्ययन किया जा सकता है। सोशल मीडिया के उपयोग और मानसिक स्वास्थ्य के बीच संबंध का विस्तृत अध्ययन किया जा सकता है। यह शोध पत्र एक सामान्य प्रारूप है आप अपनी विशिष्ठ शोध आवश्यकताओं के आधार पर इसे अनुकूलित कर सकते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः–

- कुमार, डॉ0 सरिता (2019).युवा और सोशल मीडिया, पृथ्वी प्रकाशन,
- कुमार, डॉ0 प्रदीप (2019).सोशल मीडिया और युवा मानसिकता, रावत प्रकाशन,जयपुर
- शर्मा, डॉ0 रेखा (2019).सोशल मीडिया का युवाओं पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव, मनोविज्ञान प्रकाशन, दिल्ली
- कुमार, डॉ0 सुरेश (2019).सोशल मीडिया का युवाओं पर शैक्षिक प्रभाव, शैक्षिक प्रकाशन, नई दिल्ली
- प्रसाद, डॉ0 रामेश्वर (2019). सोशल मीडिया का युवाओं पर राजनीतिक प्रभाव, राजनीतिक विज्ञान प्रकाशन
- कुमार, डॉ0 राकेश (2020).सोशल मीडिया और युवा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
- सिंह, डॉ0 रेनुका (2020). सोशल मीडिया का युवाओं पर प्रभाव, श्री निकेतन प्रकाशन
- कुमार, डॉ0 संजय (2020).युवा और सोशल मीडिया का भविष्य, पियरसन एजुकेशन
- कुमार, डॉ0 राजीव (2020).युवा और सोशल मीडिया का सामाजिक प्रभाव, सामाजिक विज्ञान प्रकाशन, नई दिल्ली

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

युद्ध, आतंकवाद और अतिवाद के बीच संबंध : विभिन्न संदर्भों में एक शोध

डॉ. प्रतिमा श्रीवास्तव
असि० प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
सुधाकर महिला पी.जी. कॉलेज, वाराणसी

सारांश
यह शोध पत्र युद्ध, आतंकवाद और अतिवाद के बीच जटिल और अक्सर परस्पर जुड़े संबंधों का विश्लेषण करता है। यह अध्ययन विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक और वैचारिक संदर्भों में इन कारकों की प्रकृति, कारण, प्रभाव और नीतिगत प्रतिक्रियाओं की गहन पड़ताल करता है। शोध का उद्देश्य यह समझना है कि किस प्रकार युद्ध की स्थितियाँ आतंकवाद और चरमपंथ के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करती हैं, और इस चक्र को तोड़ने के लिए कौन-कौन से बहुस्तरीय प्रयास आवश्यक हैं।

मुख्य शब्दः आतंकवाद और अतिवाद, सामाजिक विघटन, डिजिटल मीडिया, भविष्य की दिशा, धार्मिक पहलू, राजनितिक प्रभाव

1. प्रस्तावना

युद्ध, आतंकवाद और अतिवाद, तीनों ही विश्व शांति और सुरक्षा के लिए गंभीर और परस्पर जुड़ी हुई चुनौतियाँ हैं। इनकी उपस्थिति केवल भौतिक विनाश तक सीमित नहीं है, बल्कि ये सामाजिक ढाँचों को भी विघटित करती हैं।

संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट (UNHCR, 2023) के अनुसार, वर्तमान में दुनिया भर में 114 मिलियन से अधिक लोग जबरन विस्थापित हैं — जिनमें से अधिकांश युद्ध और हिंसा के कारण हैं। युद्ध के बाद उत्पन्न अस्थिरता आतंकवादी संगठनों को नए रंगरूटों की भर्ती और वैचारिक प्रचार के लिए उपजाऊ भूमि प्रदान करती है। इसके साथ ही, चरमपंथी विचारधाराएँ युद्ध से उत्पन्न असंतोष और पीड़ा को अपने पक्ष में उपयोग करती हैं।

2. युद्ध और आतंकवाद: एक जटिल संबंध

2.1 समानताएं

युद्ध और आतंकवाद दोनों ही अत्यधिक हिंसा और रणनीतिक लक्ष्यों को प्राप्त करने की प्रक्रिया में निर्दोष नागरिकों को निशाना बनाते हैं। उदाहरण के लिए, अमेरिकी वायु हमलों और ISIS के आत्मघाती हमलों — दोनों में नागरिक हताहतों की संख्या अत्यधिक रही है।

डेटा: Global Terrorism Index (2024) के अनुसार, 2023 में वैश्विक स्तर पर लगभग 8,000 आतंकवादी घटनाएँ दर्ज की गईं जिनमें 28,000 से अधिक लोग हताहत हुए।

2.2 अंतर्राष्ट्रीय कानून और परिप्रेक्ष्य

युद्ध और आतंकवाद के बीच अंतर अंतर्राष्ट्रीय मानकों में परिभाषित है, जैसे कि जिनेवा कन्वेंशन युद्ध में कुछ आचरणों को नियंत्रित करता है, जबकि संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव आतंकवादी गतिविधियों को अपराध की श्रेणी में रखते हैं। फिर भी व्यावहारिक परिप्रेक्ष्य में, यह अंतर हमेशा स्पष्ट नहीं होता। उदाहरणतः, अफगानिस्तान में तालिबान जैसे समूहों को कुछ राष्ट्र आतंकवादी मानते हैं, जबकि कुछ उन्हें राजनीतिक घटक के रूप में देखते हैं।

3. आतंकवाद और अतिवाद: कारण और संबंध

3.1 आतंकवाद के कारण

राजनीतिक अस्थिरता: जैसे कि अफगानिस्तान, सोमालिया

सामाजिक-आर्थिक असमानता: नाइजीरिया, पाकिस्तान

धार्मिक और वैचारिक ध्रुवीकरण: सीरिया, म्यांमार

दमनकारी शासन और विदेशी हस्तक्षेप: यमन, इराक

Pew Research (2022): 40% युवा मुस्लिमों ने समाज में भेदभाव का अनुभव स्वीकार किया, जो कि चरमपंथी संगठन की विचारधारा की ओर झुकाव का एक मुख्य कारण बन सकता है।

3.2 अतिवाद का उदय

युद्ध और लंबे समय तक चले संघर्ष अक्सर वैचारिक चरमपंथ की उत्पत्ति का कारण बनते हैं। जैसे कि कश्मीर, फिलिस्तीन, और उत्तर-पूर्वी सीरिया जैसे क्षेत्रों में देखा गया है।

डेटा: RAND Corporation की एक रिपोर्ट (2021) के अनुसार, उन क्षेत्रों में जहाँ सैन्य हस्तक्षेप अधिक रहा है, वहाँ चरमपंथी समूहों की संख्या 60% अधिक पाई गई।

4. युद्ध के सामाजिक और राजनीतिक प्रभाव

4.1 मनोवैज्ञानिक और सामाजिक प्रभाव

PTSD (Post-Traumatic Stress Disorder)

- चिंता, अवसाद, आत्मघात की प्रवृत्ति
- सामाजिक अविश्वास और असहिष्णुता

WHO (2020): संघर्ष प्रभावित क्षेत्रों में 1 में से 5 व्यक्ति किसी मानसिक रोग से पीड़ित होता है।

4.2 सामाजिक विघटन

युद्धों से शरणार्थी संकट उत्पन्न होते हैं, समुदायों में विभाजन और धार्मिक व जातीय ध्रुवीकरण होता है।

उदाहरण: सीरिया के गृह युद्ध के बाद लगभग 13 मिलियन लोग विस्थापित हुए। यूरोपीय संघ की रिपोर्ट (2023) के अनुसार, इन विस्थापनों ने यूरोप की सामाजिक और राजनीतिक स्थिरता को भी चुनौती दी है।

5. अतिवाद से निपटने के लिए प्रभावी नीतियां

5.1 आतंकवादी नेटवर्कों पर रोक

- गहन खुफिया सहयोग और डेटा विश्लेषण
- साइबर निगरानी प्रणाली और सोशल मीडिया पर निगरानी
- सामरिक सैन्य अभियानों के माध्यम से नेतृत्व और लॉजिस्टिक ढांचे को समाप्त करना

5.2 समावेशी विकास और सुशासन

- शिक्षा, रोजगार और सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के माध्यम से युवाओं को चरमपंथ से दूर रखना
- प्रशासनिक पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करना
- समुदायों में संवाद और सामंजस्य को प्रोत्साहित करना

OECD Report (2021): समावेशी नीति वाले क्षेत्रों में अतिवादी हिंसा की घटनाएँ 30% कम होती हैं।

5.3 सामूहिक सुरक्षा और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग

- संयुक्त राष्ट्र, इंटरपोल, और NATO जैसे संगठनों के माध्यम से वैश्विक स्तर पर सहयोग
- वैश्विक आतंकवाद विरोधी रणनीति (UN Global CT Strategy) को प्रभावी बनाना
- डेटा साझा करना, प्रशिक्षण, और सामूहिक प्रतिक्रिया योजनाएँ तैयार करना

6. डिजिटल मीडिया और अतिवाद का उभार

6.1 सोशल मीडिया का प्रयोग

आतंकवादी संगठनों ने सोशल मीडिया का इस्तेमाल प्रचार, भर्ती और वैचारिक प्रसार के लिए किया है।

Brookings Institution (2020): ISIS के 46,000+ ट्विटर अकाउंट्स सक्रिय थे।

6.2 फेक न्यूज़ और ध्रुवीकरण

फेक न्यूज़ और साजिश सिद्धांत नफरत और हिंसा को बढ़ावा देते हैं। म्यांमार में रोहिंग्या मुस्लिमों के खिलाफ पोस्ट इसका उदाहरण है।

6.3 साइबर आतंकवाद

साइबर हमलों द्वारा बुनियादी ढाँचे पर हमला कर आतंकवादी संगठनों ने नई चुनौती उत्पन्न की है।

7. सांस्कृतिक और धार्मिक पहलू

युद्ध, आतंकवाद और अतिवाद केवल राजनीतिक और सैन्य गतिविधियाँ नहीं हैं; ये मानव सभ्यता की गहराई तक प्रभाव डालते हैं, विशेष रूप से सांस्कृतिक और धार्मिक संरचनाओं पर। धार्मिक विश्वास और सांस्कृतिक पहचान उन बुनियादी तत्वों में से हैं जो समाजों को एकजुट करते हैं। लेकिन जब इन्हीं तत्वों का दुरुपयोग किया जाता है, तो यह चरम हिंसा और असहिष्णुता को जन्म देता है।

7.1 धर्म का दुरुपयोग

आतंकवादी और चरमपंथी संगठनों द्वारा धार्मिक ग्रंथों की विकृत व्याख्या कर हिंसा को वैध ठहराना एक आम प्रवृत्ति बन चुकी है। उदाहरण स्वरूप, अल-कायदा और ISIS जैसे संगठन इस्लामी शिक्षाओं को विकृत कर अपने एजेंडे को आगे बढ़ाते हैं। हिंदू, बौद्ध, यहूदी और ईसाई समुदायों में भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं, जहाँ धार्मिक पहचान के नाम पर हिंसा को प्रोत्साहित किया गया है। इससे समाजों में धार्मिक ध्रुवीकरण और असहिष्णुता बढ़ती है।

7.2 सांस्कृतिक विलोपन

युद्ध और आतंकवाद के दौरान सांस्कृतिक विरासत को नष्ट करना केवल भौतिक नुकसान नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक पहचान और ऐतिहासिक गर्व को मिटाने का प्रयास होता है। सीरिया के पामिरा, इराक के मोसुल, और अफगानिस्तान में बामियान की बुद्ध प्रतिमाओं का ध्वंस इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। UNESCO के अनुसार, इन घटनाओं से सांस्कृतिक विविधता और ऐतिहासिक चेतना को गहरी क्षति पहुँची है।

7.3 धार्मिक अल्पसंख्यकों पर अत्याचार

युद्धग्रस्त क्षेत्रों में धार्मिक अल्पसंख्यक अक्सर निशाना बनते हैं। जैसे कि म्यांमार में रोहिंग्या मुसलमानों पर हुए हमले, पाकिस्तान में हिंदू और ईसाई समुदायों पर अत्याचार, और भारत में साम्प्रदायिक हिंसा की घटनाएँ — यह सभी धार्मिक असहिष्णुता के चरम को दर्शाते हैं।

7.4 समाधान और संवाद

धार्मिक चरमपंथ से निपटने के लिए केवल सैन्य रणनीतियाँ पर्याप्त नहीं हैं। इसके लिए अंतर-धार्मिक संवाद, सहिष्णुता को बढ़ावा देने वाली शिक्षा, और धार्मिक नेताओं की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है। UNESCO की 'Peace Education Guidelines' (2022) इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण पहल है, जो धार्मिक सहअस्तित्व और सहिष्णुता को बढ़ावा देती है।

8. **मीडिया की भूमिका और ज़िम्मेदारी**

मीडिया आज के युग में न केवल सूचना का माध्यम है, बल्कि यह समाज की सोच, व्यवहार और धारणाओं को प्रभावित करने वाला शक्तिशाली उपकरण बन चुका है। युद्ध, आतंकवाद और अतिवाद जैसे संवेदनशील विषयों में मीडिया की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण और निर्णायक हो जाती है।

8.1 संवेदनशील रिपोर्टिंग की आवश्यकता

मीडिया को तथ्यों पर आधारित, निष्पक्ष और संतुलित रिपोर्टिंग करनी चाहिए। अति-उत्साही या सनसनीखेज रिपोर्टिंग न केवल डर और घृणा फैलाती है, बल्कि यह आतंकवादी संगठनों को अप्रत्यक्ष रूप से प्रचार का मंच भी प्रदान करती है। उदाहरणस्वरूप, भारत-पाकिस्तान सीमा पर तनाव के दौरान कई बार मीडिया ने "देशभक्ति" के नाम पर एकतरफा और भड़काऊ रिपोर्टिंग की, जिससे आम नागरिकों में असुरक्षा और द्वेष की भावना उत्पन्न हुई।

8.2 प्रचार सामग्री का प्रसार

आतंकवादी संगठनों द्वारा सोशल मीडिया और अन्य डिजिटल माध्यमों का उपयोग चरमपंथी विचारों के प्रसार और भर्ती के लिए किया जाता है। Brookings Institution (2020) की रिपोर्ट बताती है कि ISIS के 46,000 से अधिक ट्विटर अकाउंट सक्रिय थे। यदि मीडिया या सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स ऐसे कंटेंट को समय पर नहीं पहचानते और हटाते, तो यह हिंसा और कट्टरता को बढ़ावा देता है।

8.3 जिम्मेदार पत्रकारिता की भूमिका

पत्रकारों को ऐसे मुद्दों पर रिपोर्ट करते समय स्थानीय संदर्भ, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और विविध समुदायों की संवेदनाओं का ध्यान रखना चाहिए। BBC, Al Jazeera और The Hindu जैसे प्रतिष्ठित संस्थान अनेक बार युद्ध और आतंकवाद की रिपोर्टिंग में संवेदनशीलता और तथ्यपरकता का उदाहरण प्रस्तुत कर चुके हैं।

8.4 डिजिटल प्लेटफॉर्म्स की जिम्मेदारी

सोशल मीडिया कंपनियाँ जैसे कि फेसबुक, ट्विटर, यूट्यूब आदि को चरमपंथी कंटेंट, हेट स्पीच और साजिश सिद्धांतों को फैलाने वाली सामग्री के विरुद्ध सक्रिय मॉडरेशन नीति अपनानी चाहिए। कई देशों ने अब इस दिशा में सख्त कानून बनाए हैं, जैसे कि यूरोपीय संघ की 'Digital Services Act'।

8.5 शिक्षा और मीडिया साक्षरता

लंबी अवधि के लिए समाधान मीडिया साक्षरता को बढ़ावा देना है। समाज के प्रत्येक वर्ग को यह समझना जरूरी है कि किस सूचना पर भरोसा करें, और फेक न्यूज़ से कैसे बचें। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में मीडिया साक्षरता को अनिवार्य विषय के रूप में शामिल किया जाना चाहिए।

9. महिलाओं और बच्चों पर प्रभाव

युद्ध, आतंकवाद और अतिवाद का सबसे अधिक और गहन प्रभाव महिलाओं और बच्चों पर पड़ता है। ये दोनों वर्ग न केवल प्रत्यक्ष हिंसा का शिकार होते हैं, बल्कि दीर्घकालिक मानसिक, शारीरिक और सामाजिक पीड़ा का भी सामना करते हैं। इनका शोषण एक रणनीति के रूप में किया जाता है, जो कि मानवाधिकारों का गंभीर उल्लंघन है।

9.1 यौन हिंसा का औजार के रूप में प्रयोग

महिलाएँ युद्ध के दौरान यौन हिंसा का विशेष लक्ष्य होती हैं। यह हिंसा केवल व्यक्तिगत हमले नहीं होते, बल्कि शत्रु समुदाय को नीचा दिखाने और सामाजिक ढाँचे को तोड़ने की एक रणनीति होती है। बोस्निया, रवांडा, कांगो, और हाल ही में अफगानिस्तान में महिलाओं पर यौन हिंसा के सैकड़ों मामले दर्ज हुए हैं।

9.2 बाल सैनिकों की भर्ती

UNICEF (2021) के अनुसार, लगभग 250,000 बाल सैनिक 30 से अधिक देशों में सक्रिय हैं। बच्चों को बंदूक उठाने, बारूदी सुरंगें लगाने और आत्मघाती हमलों में शामिल किया जाता है। यह न केवल उनके बचपन का अंत करता है, बल्कि उनकी मानसिक स्थिति पर गहरा प्रभाव डालता है।

9.3 शिक्षा पर प्रभाव

आतंकवादी संगठन, विशेषकर तालिबान और बोको हराम, विशेष रूप से लड़कियों की शिक्षा को निशाना बनाते हैं। नाइजीरिया में बोको हराम द्वारा लड़कियों का अपहरण इसका ज्वलंत उदाहरण है। शिक्षा के अभाव से न केवल भविष्य की संभावनाएँ समाप्त होती हैं, बल्कि यह बच्चों को चरमपंथी विचारधाराओं के लिए अधिक संवेदनशील बनाता है।

9.4 मानसिक स्वास्थ्य समस्याएँ

युद्ध प्रभावित बच्चों और महिलाओं में PTSD, अवसाद, भय, और सामाजिक अलगाव जैसे लक्षण सामान्य हैं। WHO (2020) के अनुसार, युद्ध प्रभावित क्षेत्रों में प्रत्येक पाँच में से एक व्यक्ति किसी न किसी मानसिक रोग से पीड़ित होता है। महिलाओं में प्रसव के बाद डिप्रेशन और आत्मघात की प्रवृत्ति बढ़ती है।

9.5 पुनर्वास और संरक्षण की आवश्यकता

इन प्रभावों से निपटने के लिए विशेष पुनर्वास नीतियाँ आवश्यक हैं। इसमें मनोवैज्ञानिक परामर्श, स्वास्थ्य सेवाएँ, शिक्षा का पुनः प्रवाह, और सामाजिक सुरक्षा शामिल हैं। संयुक्त राष्ट्र, Save the Children, और अन्य संगठनों ने इस दिशा में कई प्रयास किए हैं, लेकिन ये अभी भी अपर्याप्त हैं।

10. पुनर्वास और पुनर्निर्माण

10.1 ढाँचागत पुनर्निर्माण

शिक्षा, स्वास्थ्य और बुनियादी सेवाओं का पुनर्निर्माण युद्ध के बाद अत्यंत आवश्यक होता है।

10.2 सामाजिक पुनर्संयोजन

शरणार्थियों की वापसी, न्यायिक प्रक्रिया, और सामुदायिक संवाद के माध्यम से शांति की बहाली संभव है।

उदाहरण: रवांडा में 'गचाचा कोर्ट्स' ने पुनर्संयोजन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

11. भविष्य की दिशा

11.1 शिक्षा आधारित रोकथाम

शांति शिक्षा युवाओं को सहिष्णुता और संवाद सिखा सकती है।

11.2 धार्मिक संवाद

अंतर-धार्मिक संवाद और सहयोग चरमपंथ के प्रभाव को कम कर सकते हैं।

11.3 स्थानीय भागीदारी

स्थानीय स्तर पर नीति निर्माण और संवाद अधिक प्रभावी एवं टिकाऊ होता है।

12. निष्कर्ष

युद्ध, आतंकवाद और अतिवाद के बीच परस्पर संबंध केवल सतही नहीं हैं, बल्कि ये तीनों तत्व एक-दूसरे को उत्पन्न, पोषित और पुनः सक्रिय करने की क्षमता रखते हैं। इनकी उपस्थिति किसी भी समाज में केवल हिंसा या अस्थिरता तक सीमित नहीं होती, बल्कि यह सामाजिक संरचनाओं, वैचारिक धाराओं और विकास की संभावनाओं को भी गहराई से प्रभावित करती है।

12.1 युद्ध और अतिवाद का दुष्चक्र

जब कोई समाज युद्ध की चपेट में आता है, तो न केवल उसकी भौतिक संरचना नष्ट होती है, बल्कि सामाजिक ताने-बाने में भी गहरी दरारें पड़ती हैं। युद्ध के बाद उत्पन्न हुई अस्थिरता, प्रशासनिक विफलता और निराशा की स्थिति में आमजन का भरोसा संस्थानों से उठने लगता है। यही वह वातावरण होता है जिसमें अतिवादी संगठन अपनी विचारधाराओं को फैलाने, समर्थन जुटाने और रंगरूट भर्ती करने के लिए उपजाऊ जमीन पाते हैं।

ऐतिहासिक अनुभव इस चक्र को पुष्ट करते हैं — चाहे वह द्वितीय विश्व युद्ध के बाद यूरोप में हुए वैचारिक ध्रुवीकरण की बात हो या अफगानिस्तान, सीरिया और इराक जैसे देशों में युद्ध के बाद आतंकवाद और चरमपंथ के उभार की।

12.2 आतंकवाद और सामाजिक विघटन

आतंकवाद का प्रभाव केवल हिंसा तक सीमित नहीं होता; यह सामाजिक विश्वास और सहअस्तित्व की भावना को भी नष्ट करता है। जब कोई आतंकवादी घटना होती है, तो उसके परिणामस्वरूप अक्सर एक समुदाय विशेष को दोषी ठहराया जाता है, जिससे सामाजिक ध्रुवीकरण बढ़ता है। इससे धार्मिक या जातीय समुदायों के बीच अविश्वास गहराता है और समाज के भीतर अतिवादी रुझान को बल मिलता है। यह एक दुष्चक्र है जिसमें पीड़ित और अपराधी की पहचान कई बार धुंधली हो जाती है।

12.3 चरमपंथ और वैचारिक संघर्ष

चरमपंथ केवल हिंसात्मक नहीं होता; वह एक वैचारिक प्रक्रिया है जो 'हम बनाम वे' की सोच को पोषित करता है। यह समाज में असहिष्णुता, कट्टरता और संवादहीनता को जन्म देता है। यदि कोई समाज लंबे समय तक चरमपंथ के प्रभाव में रहता है, तो वहां लोकतंत्र, बहुलवाद और सहिष्णुता जैसे मूल्य कमजोर पड़ने लगते हैं। अफसोस की बात यह है कि आज डिजिटल माध्यमों ने इस प्रक्रिया को और तेज कर दिया है।

12.4 नीतिगत प्रतिक्रियाओं की आवश्यकता

इस समस्या का समाधान केवल सैन्य बल प्रयोग में नहीं छिपा है। यद्यपि सुरक्षा बलों की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, लेकिन आतंकवाद और अतिवाद की जड़ें सामाजिक असमानता, राजनीतिक हाशिएकरण और वैचारिक असंतोष में होती हैं। अतः इससे निपटने के लिए बहुस्तरीय रणनीतियाँ अपनाना आवश्यक है:

शिक्षा प्रणाली में सुधार: केवल औपचारिक शिक्षा ही नहीं, बल्कि शांति शिक्षा और नागरिक नैतिकता का समावेश आवश्यक है। UNESCO की सिफारिशों के अनुसार, विद्यालयों में संवाद, आलोचनात्मक सोच और बहुसांस्कृतिक समझ को बढ़ावा देना चाहिए।

आर्थिक समावेशन: बेरोजगारी, गरीबी और सामाजिक बहिष्करण चरमपंथ की भूमि बनते हैं। रोजगारोन्मुखी योजनाएँ, स्वरोजगार के अवसर, और युवाओं को सशक्त बनाने की रणनीतियाँ अपनानी होंगी।

राजनीतिक सहभागिता: जब समाज के सभी वर्गों को निर्णय-निर्माण प्रक्रिया में भागीदारी मिलती है, तो असंतोष और अलगाव की भावना कम होती है। इसके लिए विकेन्द्रीकरण और स्थानीय स्वशासन को बढ़ावा देना आवश्यक है।

12.5 अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और डिजिटल चुनौतियाँ

आज की वैश्वीकृत दुनिया में आतंकवाद और अतिवाद की प्रकृति भी सीमाओं से परे है। आतंकवादी नेटवर्क, डिजिटल प्रचार तंत्र, और फाइनेंसिंग चैनल अंतरराष्ट्रीय हो चुके हैं। ऐसे में किसी एक देश द्वारा अकेले प्रयास करना व्यर्थ है। संयुक्त राष्ट्र, NATO, और क्षेत्रीय संगठन जैसे SAARC या African Union को आतंकवाद विरोधी रणनीति में समन्वय बढ़ाना चाहिए।

साथ ही, डिजिटल माध्यमों को लेकर भी स्पष्ट नीति होनी चाहिए। सोशल मीडिया प्लेटफ़ॉर्म्स को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और सुरक्षा के बीच संतुलन बनाए रखते हुए हेट स्पीच, उग्रवाद और फेक न्यूज़ के विरुद्ध सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए।

12.6 महिलाओं और बच्चों की स्थिति

इस शोध ने यह भी स्पष्ट किया कि युद्ध और आतंकवाद का सर्वाधिक प्रभाव महिलाओं और बच्चों पर पड़ता है। महिलाओं के साथ यौन हिंसा, बच्चों की शिक्षा में बाधा, बाल सैनिकों की भर्ती जैसे अमानवीय कृत्य किसी भी समाज की भावी पीढ़ी को क्षति पहुँचाते हैं। इसीलिए, पुनर्वास की किसी भी रणनीति में इन समूहों की विशेष ज़रूरतों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

12.7 सांस्कृतिक पुनर्निर्माण और संवाद

किसी भी समाज में सांस्कृतिक पहचान उसकी आत्मा होती है। युद्ध और आतंकवाद जब सांस्कृतिक विरासत को नष्ट करते हैं, तो वह केवल भौतिक क्षति नहीं होती, बल्कि सामूहिक स्मृति और अस्मिता पर आघात होता है। ऐसे में, शांति स्थापना के प्रयासों में सांस्कृतिक पुनर्निर्माण और संवाद को भी प्राथमिकता देनी चाहिए। रवांडा में 'गचाचा न्याय प्रणाली' इसका उत्कृष्ट उदाहरण है, जहाँ परंपरागत संवाद आधारित न्याय प्रणाली के माध्यम से समाज ने आत्म-निरीक्षण और सामूहिक उपचार की प्रक्रिया अपनाई।

12.8 भावी दिशा: टिकाऊ समाधान की ओर

इस शोध का निष्कर्ष यह है कि युद्ध, आतंकवाद और अतिवाद को केवल सैन्य या सुरक्षा समस्या मानना एक सीमित दृष्टिकोण है। इसके समाधान के लिए बहुआयामी रणनीति आवश्यक है जिसमें निम्नलिखित तत्व प्रमुख हों:

1. राजनीतिक समाधान: संवाद आधारित समाधान, राजनीतिक भागीदारी और संघर्ष समाधान तंत्रों का सुदृढ़ीकरण।
2. सामाजिक-आर्थिक विकास: समावेशी विकास रणनीतियाँ, स्थानीय रोजगार के अवसर, और शिक्षा में निवेश।
3. शांति शिक्षा: विद्यालय और समुदाय स्तर पर सहिष्णुता, संवाद और विविधता की स्वीकृति को बढ़ावा देना।
4. धार्मिक और सांस्कृतिक संवाद: विभिन्न धार्मिक समुदायों के बीच संवाद और सहयोग को बढ़ावा देना।
5. स्थानीय भागीदारी: नीति निर्माण में स्थानीय समुदायों की भागीदारी, जिससे समाधान जमीनी स्तर पर प्रभावी हो।

12.9 निष्कर्ष की अंतिम बात

अंततः यह समझना आवश्यक है कि जब तक समाज में असमानता, असंतोष और असहिष्णुता बनी रहेगी, तब तक युद्ध, आतंकवाद और अतिवाद की पुनरावृत्ति होती रहेगी। इसलिए किसी भी प्रभावी रणनीति का मूल इस सिद्धांत में निहित होना चाहिए कि 'शांति केवल शत्रुता की अनुपस्थिति नहीं है, बल्कि न्याय की उपस्थिति है।'

संदर्भ (References)

1. Global Terrorism Index 2024 – Institute for Economics & Peace
2. UNHCR Global Trends Report 2023
3. Pew Research Center: Attitudes and Experiences of Muslims 2022
4. World Health Organization: Mental Health in Conflict Settings 2020
5. RAND Corporation Report on Extremism and Conflict Zones 2021
6. OECD Report on Education and Inclusive Development 2021
7. United Nations Global Counter-Terrorism Strategy (2006)
8. NATO Strategic Concepts – Counterterrorism Initiatives
9. Human Rights Watch Reports on Syria, Myanmar, and Afghanistan
10. European Commission Migration and Security Report 2023
11. Brookings Institution Report on ISIS and Social Media 2020
12. UNICEF Report on Child Soldiers and Conflict 2021
13. UNESCO Peace Education Guidelines 2022

जाति व्यवस्था : प्रभाव और समकालीन परिपेक्ष्य

डॉ0 अनीता सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
सुधाकर महिला पी.जी. कॉलेज, वाराणसी

सारांश

भारतीय समाज की एक विशेषता जाति व्यवस्था रही है, जो प्राचीन काल से चली आ रही एक सामाजिक संरचना है। यह व्यवस्था मूलतः जन्म पर आधारित थी, जिसमें लोगों को चार वर्णों – ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र – में बाँटा गया था। आरंभ में यह प्रणाली कर्म आधारित थी, लेकिन कालांतर में यह जन्म आधारित बन गई, जिससे समाज में भेदभाव, ऊँच-नीच और छुआछूत जैसी समस्याएँ उत्पन्न हुईं। जाति व्यवस्था का प्रारंभिक उद्देश्य समाज में कार्य विभाजन करना था ताकि हर वर्ग का एक निश्चित सामाजिक और आर्थिक कार्य हो। ब्राह्मणों को शिक्षा और पूजा-पाठ का कार्य, क्षत्रियों को शासन और रक्षा का, वैश्य को व्यापार तथा शूद्रों को सेवा कार्य सौंपा गया था। लेकिन समय के साथ यह व्यवस्था कठोर और असमान हो गई। शूद्रों और उससे भी नीचे समझे जाने वाले दलितों को सामाजिक, धार्मिक और शैक्षणिक अधिकारों से वंचित रखा गया। इस कारण समाज में भारी असमानता, अन्याय और शोषण की स्थिति उत्पन्न हुई। जाति व्यवस्था का सबसे नकारात्मक प्रभाव यह रहा कि इसने सामाजिक एकता को खंडित किया और लोगों में हीन भावना उत्पन्न की। निम्न जातियों को मंदिरों में प्रवेश, सार्वजनिक स्थानों का उपयोग, और शिक्षा के अधिकार से वंचित रखा गया। महिलाओं पर भी इसका गंभीर असर पड़ा, विशेष रूप से दलित और पिछड़ी जातियों की महिलाएँ दोहरी पीड़ा की शिकार रहीं – एक जाति के कारण और दूसरी लिंग के कारण।

स्वतंत्रता के बाद भारत ने जातिवाद के खिलाफ कई कानूनी कदम उठाए। भारतीय संविधान में अनुच्छेद 15 और 17 के तहत जाति आधारित भेदभाव और छुआछूत को अपराध घोषित किया गया। दलितों, पिछड़े वर्गों और अनुसूचित जनजातियों को सामाजिक न्याय और समान अवसर देने के लिए आरक्षण व्यवस्था लागू की गई। शिक्षा, नौकरियों और राजनीति में उन्हें प्रतिनिधित्व का अवसर मिला, जिससे उनके सामाजिक और आर्थिक स्तर में सुधार आया। समकालीन भारत में जाति का प्रभाव पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ है। शहरीकरण, वैश्वीकरण और शिक्षा के विस्तार से लोगों की सोच में बदलाव जरूर आया है, परंतु आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में जातिगत भेदभाव, हिंसा और असमानता मौजूद है। राजनीतिक दल जातिगत आधार पर वोटबैंक बनाते हैं, जिससे जाति एक राजनीतिक औजार बन गई है। साथ ही, आरक्षण व्यवस्था को लेकर भी समाज में कई तरह की बहसें और विवाद हैं। आज के परिप्रेक्ष्य में, जाति व्यवस्था को समाप्त करने के लिए सामाजिक जागरूकता, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, समान अवसर और संवेदनशील नेतृत्व की आवश्यकता है। केवल कानून से बदलाव संभव नहीं है, जब तक कि समाज की मानसिकता में परिवर्तन न आए।

शब्द कुंजी – जाति व्यवस्था सामाजिक भेदभाव ऊँच-नीच, शिक्षा में असमानता, आर्थिक विषमता, सामाजिक सुधार ,समकालीन समाज, न्याय व्यवस्था समानता का अधिकार।

प्रस्तावना -

हिंदू शास्त्रों के मत से जाति का मूल वर्णों में है। इस प्रकार मानव सृष्टि के प्रारंभ से ही चार वर्णों की उत्पत्ति मानी गई है। मनु आदि स्मृतिकारों ने प्रत्येक वर्ण के व्यक्ति के सामाजिक और व्यक्तिगत कार्य जीविका शिक्षा, दीक्षा, संस्कार और कर्तव्य तथा अधिकार संबंधी नियमों का विधान किया है।

भारतीय समाज में जाति दीर्घ और लघु परंपरा तक विस्तृत है। इसमें एक परिवर्तन की प्रक्रिया संस्कृतिकरण है जिसको प्रोफेसर एम.एन.श्रीनिवास ने विस्तृत रूप से विश्लेषित किया है। प्रोफेसर योगेंद्र सिंह संस्कृतिकरण को लघु परंपरा के अंतर्गत विवेचन करते हैं। संस्कृतिकरण विभिन्न संदर्भ में विभिन्न रूप से है। यह निम्न जाति के लोगों का उच्च जाति के अर्थात ब्राह्मण, राजपूत या वैश्यों का सांस्कृति रीतियो का अनुकरण करने की इच्छा या प्रतिनिधित्व है। इनमें निम्न जातियों द्वारा ब्राह्मणों द्वारा रीति-रिवाज का अनुकरण करने की चर्चा राजपूत की पोशाक तथा वैश्यों की शाट स्लाक में की है।ये निम्न जातियां जो उच्च जातियों की दीर्घ परंपराओं में बंधी होती हैं। उच्च जातियों के मूल्यों रीति रिवाजों एवं संस्कृति शैली का अनुकरण करने की सतत् प्रयत्नशील रही है।

जाति की परंपरागत संरचना में परिवर्तन की प्रक्रिया चलती रही है। जन जागरण के समय अधिकांश निम्न जातियों में अपना नाम उच्च जाति में लिखवाया। संचार एवं आवागमन के विभिन्न साधनों के विकास के कारण जाति चेतना एवं उच्च जाति की ओर गतिशीलता में वृद्धि हुई ब्रिटिश प्रभाव से पश्चिमीकरण की एक नई सांस्कृतिक प्रक्रिया प्रारंभ हुई जो निम्न जातियों या आदिवासियों तक ही सीमित नहीं रही अपितु ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा कायस्थ सभी इससे प्रभावित हुए। इस प्रकार पहली बार जाति संस्करण की ऊपरी और निचली दोनों ही सतह सांस्कृतिक परिवर्तन और प्रस्थिति गत्यात्मकता में शामिल हुई। जाति की सांस्कृतिक संरचना बंद होने के स्थान पर धीरे-धीरे पूर्णतया खुल गई।

सांस्कृतिकरण के विपरीत पश्चिमीकरण का बहुत अधिक सांस्कृतिक दबदबा रहा है और इसका परिणाम और अधिक व्यापक हुआ किंतु पश्चिमीकरण की प्रक्रियाओं के बीच का अंतर धीरे-धीरे कम हो गया तथा क्षैतिज सांस्कृतिक गतिशीलता दक्षिण में जहां की उच्च जातियो की अपेक्षा निम्न जातियां बहुसंख्यक है समान्तर एकता का आंदोलन प्रारंभ हो गया क्रोबर ए.एल. के अनुसार जाति एक वर्ग के रूप में है। इनका कथन है की जाति सामाजिक वर्ग का एक विशेष रूप है। वस्तुतः बारनर एवं उसके सहयोगी घुरिये आदि भी क्रोबर के विचार से सहमत हैं। समाज वैज्ञानिक का दूसरा समूह जाति को पद समूह स्वीकार करते हुए जाति का अध्ययन करता है। बेबर के अनुसार जाति एक पद समूह है। बेबर 'बंद' और खुले समूह में अंतर जाति को बंद समूह बताते हैं। समाजशास्त्रियों का तीसरा समूह जाति को स्तरीकरण का एक रूप स्वीकार करता है भारतीय समाज में जाति व्यवस्था आज भी स्तरीकरण का सर्व प्रमुख आधार है । यहां आज भी संपूर्ण जातिगत उच्चता और निम्नता के आधार पर विभाजित है, जिसमें व्यक्ति की स्थिति का निर्धारण उसके व्यवसाय के द्वारा ना होकर जन्म के द्वारा होता है। इस व्यवस्था के प्रत्येक स्तर पर शक्ति को जन्म के आधार पर ही एक विशेष समूह की सदस्यता सामाजिक स्थिति तथा अधिकार प्राप्त होते हैं स्तरीकरण की इस श्रृंखला में ब्राह्मण जातियों का स्थान सर्वोच्च है। जबकि क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र आदि जातियों का स्थान दूसरी तीसरी और चौथी है। वास्तविकता यह है कि भारतीय समुदाय में जाति के आधार पर सामाजिक स्तरीकरण के प्रकृति की विवेचना करना एक जटिल कार्य है। इसका कारण यह है कि भारत के विभिन्न क्षेत्रों में जातिगत स्तरीकरण का एक सर्वमान्य स्वरूप विद्यमान नहीं है। किसी स्थान पर यदि एक जाति विशेष को सर्वोच्च प्रतिष्ठा प्राप्त है तो दूसरे स्थान पर वही जाति विशेष सामान्य स्थिति में है। परंपरागत रूप में जातिगत विभाजन का यह आधार विभिन्न जातियों से संबंधित पवित्रता और अपवित्रता संबंधित विचार है ऐसी स्थिति में विभिन्न अध्ययनों के निष्कर्ष की सहायता से यह सरलता पूर्वक ज्ञात किया जा सकता है कि भारतीय समाज में जातिगत स्तरीकरण के स्वरूप की प्रकृति क्या रही है तथा भारतीय जीवन में वे कौन से आधार हैं जो जातिगत स्तरीकरण की स्थिता बनाए हुए हैं।

भारत में जातिगत स्तरीकरण का अध्ययन करने वाले विभिन्न विद्वानों ने धार्मिक अनुष्ठानों तथा पवित्रता और अपवित्रता संबंधी विचारधारा के आधार पर स्तरीकरण के इस विशेष स्वरुप को स्पष्ट किया है। ऐसे विद्वानों में घुरिये , श्रीनिवास एस.सी. दुबे ए आस्कर लेविस आदि प्रमुख है।

श्रीनिवास ने दक्षिण भारत में कुर्ग जातियों के अध्ययन द्वारा यह स्पष्ट किया है कि भारतीय समाज में विभिन्न जातियों के पारंपरिक सम्बन्धी तथा उसके बीच जातिगत संस्तरण का आधार पवित्रता और अपवित्रता संबंधी मान्यताएं हैं इसका तात्पर्य है कि धर्म और अनुष्ठानों की पूर्ति के क्षेत्र में जिस जातीय समूह को जितना पवित्र समझा जाता है ग्रामीण सामाजिक स्तरीकरण की उसे उतनी ऊंची सामाजिक स्थिति प्राप्त हो जाती है।

डॉ दुबे ने इसी आधार पर स्पष्ट किया है कि पवित्रता और अपवित्रता संबंधी धारणा के आधार पर न केवल सभी व्यक्तियों के व्यवहारों पर नियंत्रण रखा जाता है बल्कि इसी के आधार पर विभिन्न व्यक्तियों की सामाजिक स्थिति का भी निर्धारण होता है। डॉ दुबे ने इसी आधार पर स्पष्ट किया है कि आज भी व्यक्ति की आर्थिक स्थिति को उसकी सामूहिक स्थिति का आधार नहीं माना जाता जाति प्रधान समाज होने के कारण पहले भारत में उदग्र सामाजिक गतिशीलता की गति बहुत धीमी थी और व्यक्ति की सामाजिक स्थिति जन्म पर आधारित होने के कारण बहुत कुछ स्थिर थी और उतार-चढ़ाव की गुंजाइश बहुत कम थी परंतु वर्तमान समय में औद्योगिक और नगरीकरण तथा पश्चिमीकरण के प्रभाव के कारण सामाजिक गतिशीलता की गति में भी तीव्रता आ रही थी है। भारतीय समाज में भी आर्थिक व्यावसायिक और राजनीतिक कारकों में सामाजिक गतिशीलता का स्पष्ट रूप दिखाई देता है। भारतीय समाज में संस्करण और गतिशीलता की कोई भी विवेचना जातिगत संस्तरण के प्रभाव की अवहेलना नही की जा सकती ।

एक सामान्य अवलोकन से भी यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत में जिन जातियों के परंपरागत स्थित उच्च है वे ही जातियां आर्थिक रूप से भी संपन्न है और भूमि पर भी उनका अधिकार तुलनात्मक रूप से अधिक है। इसके विपरीत पिछड़ी जातियों की

सामाजिक गतिशीलता और आर्थिक स्थिति भी ऊंची जातियों से अत्यधिक निम्न है। स्थिति संबंधी यह निम्नता और उच्चता केवल भौतिक देखने को मिलती है। उच्च जाति मानसिक रूप में स्वयं को उच्च और अधिक अधिकार संपन्न मानती है जबकि पिछड़ी जातियों की मानसिक रूप से उनकी अधीनता स्वीकार करने में कोई विशेष संकोच नहीं होता। इन अनेक परिवर्तनों के बावजूद भी भारत में जाति व्यवस्था का ना तो विघटन ही हुआ और ना ही यह समाप्त हो रही है। यह आज भी धर्ममान्य प्रकार्यो को किया जा रही है।

गूल्ड हैरोल्ड का विचार है कि समकालीन नगरीय भारत में जाति आज भी हित समूहों को जटिल जाल के रूप में विद्यमान है, जबकि ग्रामीण भारत में यह सामाजिक श्रेणियां की व्यवस्था के रूप में है, जो कि संस्करण के आधार पर वर्गीकृत है, शहरी एवं ग्रामीण दोनों समुदायों में जाति एक महत्वपूर्ण संस्था है। गत पांच शताब्दियों की अवधि में जाति संरचना में यथेष्ट परिवर्तन हुए हैं। वंशानुगत सदस्यता तथा संस्करण में बिल्कुल परिवर्तन नहीं हुआ है लेकिन अन्तर्विवाहित लक्षण में कुछ परिवर्तन हुए हैं, परंपरागत व्यवसाय सहयोग प्रतिबंधों में तथा जाति पंचायत की शक्तियों में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। जाति व्यवस्था में सबसे महत्वपूर्ण यह हुआ है कि निम्न जातियों में अपनी दशा सुधारने की लालसा जागृत हुई है और परिणामतः उच्च जातियों पूर्वाग्रह एवं संघर्षों का उदय हुआ। यह संघर्ष उन लोगों के बीच है, जो अपने भाग में शीघ्र सुधार की मांग करते हैं तथा वे लोग जो यह अनुभव करते हैं कि अत्यधिक मांग अधिक शीघ्रता से की जा सकती है।

जाति व्यवस्था में जिस प्रकार से तेजी से परिवर्तन आया है इसकी विवेचना करते हुए डी.एन.मजूमदार ने जातियों के जुड़ने विखंडन तथा जनजातियों के सात्मीकरण की प्रक्रियाओं की चर्चा की है, लेकिन दूसरे दृष्टिकोण वाले विद्वान इन परिवर्तनों को समुचित जाति व्यवस्था को विघटित करने वाला नहीं मानते। यद्यपि यह विधान जाति के समाप्त होने के बात स्वीकार नहीं करते तथापि उन्होंने यह कहा कि आज जाति का वह स्वरूप नहीं रह गया जो 100 वर्ष पूर्व था। इस तथ्य का स्पष्ट संकेत मिलता है कि जाति समाप्त नहीं हो रही है तथापि इसमें महत्वपूर्ण परिवर्तन अवश्य हुए हैं। प्रजातंत्र में जनता के सहयोग का एक विशेष महत्व है, लेकिन जाति व्यवस्था के कारण सभी जातियां एक दूसरे से इतनी दूर हो गई है कि विकास योजनाओं में मिलजुल कर कार्य करना उनके लिए असंभव हो गया है। सभी जातियां एक ही समाज का अंग होते हुए भी उसी समाज के विखंडित कर रही हैं। शिक्षा के अभाव से जातीयता का यह प्रभाव कुछ कम हो सकता था लेकिन सरकार शिक्षा का भी "एक बेकार का दायित्व" के रूप में समझती है, इस प्रकार जाति व्यवस्था में जातिवाद को प्रोत्साहन कर नगरीय एवं ग्रामीण समाज ही नहीं अपितु लोकतंत्र के विकास में भी गंभीर बाधा उत्पन्न की है। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि जाति व्यवस्था का जो रूप आज हमारे सामने है उसके आधार पर भारतीय समाज सुरक्षित दिखाई नहीं देता।

भारतीय जाति व्यवस्था में सामाजिक वर्ग की सभी विशेषताओं ने जन्म लेना प्रारंभ कर दिया है। सभी जातियों की सामाजिक स्थिति तो पहले से ही एक दूसरे से भिन्न थी लेकिन वर्तमान युग में कुछ जातियों द्वारा लाभपप्रद व्यवसायों पर एकाधिकार कर लिए जाने के कारण उनके बीच आर्थिक अंतर भी बढ़ गया है। इतना ही नहीं आज जातिगत संस्तरण पूर्णतया बंद भी नहीं हो रहा है। बड़े-बड़े औद्योगिक नगरों में व्यक्ति सुविधा अनुसार अपनी जाति में परिवर्तन कर लेते है और कोई भी व्यक्ति उनकी वास्तविक जाति को जानने की कोशिश नहीं करता। इस आधार पर यह बहुत संभव है कि भविष्य में जातिगत संस्तरण एक वर्गगत स्तरीकरण में बदल जाए। भारतीय शहरों में सांस्कृतिक प्रतिमानों गांव से भिन्न नहीं रही है। प्रभुत्वशाली जातियां शासक वर्ग और उनके मित्र समूह शहरों में सकेंद्रित है। रोवी (1972) द्वारा किए अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि शहरों में भी जजमानी संबंध निहित है ब्राह्मण और वैश्य जाति के परिवारों में समानता भंगी, नाऊ, कुम्हार और पुजारी नियमित श्रमिक के रूप में नियुक्त किए गए हैं। इन श्रमिकों को नगद भुगतान किया जाता है। कुछ विशेष अवसरों पर नाऊ और भंगी श्रमिकों की महिलाओं को भोजन कपड़ा या उपहार दिए जाते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि जजमानी कुछ परिवर्तनों के साथ अभी भी प्रभावी है। नगरीय क्षेत्रों में जाति विशेष का उप क्षेत्रों में सकेन्द्रण पाया जाता है। बहुजातीय क्षेत्रों की संरचना भी गांव के समान पाई जाती है। आधुनिक भारतीय समाज में पश्चिमी प्रारूपों से मिलते जुलते संगठन और संस्थाएं सामाजिक जीवन में संरक्षित हो रहे हैं। इन संगठनों और संस्थाओं की संख्या शहरी क्षेत्र में तेजी से बड़ी है। विश्वविद्यालय वैज्ञानिक प्रयोगशाला कल कारखानों व्यावसायिक प्रतिष्ठान राजनीतिक दल न्यायालय और विधान मण्डल आदि नगरों में ही अवस्थिति है। अधिकांश संस्थाओं और संगठनों में श्रृंखलाबद्ध पद पाए जाते हैं। जिनके शुद्धता एवं अशुद्धता की अवधारणा परंपरागत जाति संरचना की भांति निहित नहीं है। नगरीय प्रभावों से सामाजिक रूपांतरण में गति पकड़ी और जाति श्रेणी क्रम में प्रस्थिति परिवर्तन प्रारंभ हो गया। परंपरागत मूल्य व्यवस्था और नई मूल्य व्यवस्थाओं में संघर्ष हो रहा है।

आधुनिक आर्थिक विकास में जाति संरचना के ऐसे तत्व विलुप्त हो रहे हैं जो पूर्णतः नकारात्मक भूमिका रखते हैं। अतः आधुनिक भारत में कुछ जातियां पूर्णतः आधुनिकृत हो गई है। पिछड़ी जाति और अन्य जातियों की परंपरागत संरचना में भी वृहद परिवर्तन आया है।

निष्कर्ष :

जाति व्यवस्था का प्रारंभिक उद्देश्य समाज को व्यवस्थित रूप से चलाना था, लेकिन समय के साथ यह जन्म-आधारित भेदभाव और सामाजिक अन्याय का माध्यम बन गई।इस व्यवस्था ने समाज को ऊँच-नीच में बाँट दिया, जिससे सामाजिक एकता, समानता और भाईचारे को गंभीर क्षति पहुँची।निम्न जातियों को शिक्षा, नौकरी, और संसाधनों से दूर रखा गया, जिससे उनका समग्र विकास बाधित हुआ।संविधान में समानता और आरक्षण जैसे प्रावधान होने के बावजूद, जातिगत भेदभाव अब भी व्यवहार में देखा जा सकता है, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में। कई राजनीतिक दल जातिगत वोट बैंक को ध्यान में रखकर नीतियाँ बनाते हैं, जिससे जाति व्यवस्था को अप्रत्यक्ष रूप से समर्थन मिलता है।शहरों, शिक्षा, और जागरूकता के प्रसार से जातिवाद में कुछ हद तक कमी आई है, विशेषकर युवा पीढ़ी में।जाति प्रथा को समाप्त करने के लिए केवल कानून ही नहीं, बल्कि मानसिकता में बदलाव और सामाजिक चेतना की जरूरत है।जाति व्यवस्था को समाप्त करना केवल एक कानूनी नहीं, बल्कि नैतिक और सामाजिक जिम्मेदारी है। जब तक हर व्यक्ति को समान अवसर, सम्मान और स्वतंत्रता नहीं मिलेगी, तब तक एक सशक्त और समतामूलक समाज का निर्माण अधूरा रहेगा।

संदर्भ सूची

1. Srinivas, M.N. “Caste in Modren Indian and the other Essays” Asis Publicating House Bombay, 1962, Chapter 2, p.48.
2. Snigh Yogendra : Modernization of Indian , Tradition, “A Systemalic Study of Social Chauge Delhi.
3. Crover A.L.(1930) P 245 – 257.
4. Srinivas.M.N.: Religion and Society among the Coorgs of South India.
5. Dubey S.C.: Ranking of Castes in Telengana Villages’ D.N.Majumdar. Rural Profeles(ed) p.59.
6. Gould, Harold : The Hindu Caste System,Chankaya Publication New delhi,1987.
7. Rowe,W.L. “The New Chauhans : A Caste Mobility in Movement in North India I.J. Silverberg(ed). Social Mobility in the caste system in India Moulon, The Haque, PP-66-78.
8. Quoked in Sinha R.K., Op. Cit.

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

जैन समाज की प्राचीनता एवं ऐतिहासिकता

प्रो. उपमा वर्मा* एवं विजय कुमार वर्मा**
*प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष : प्राचीन इतिहास
का.सु. साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अयोध्या, उ.प्र.
**शोध–छात्र : डॉ. रा.म.लो. अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या

सारांश

जैन समाज काफी प्राचीन है। इसकी जानकारी उसकी ऐतिहासिकता से प्राप्त होती है। इतिहासकार जैन धर्म को परम्परा के साथ जोड़ते हैं। इसका सम्बन्ध मोहनजोरदड़ो की खुदाई से प्राप्त योगमूर्ति से जोड़ते हैं। अतः जैन धर्म काफी प्राचीन है। सिन्धु सभ्यता के उत्खनन सिन्धु नदी घाटी क्षेत्र में हुए हैं। भारत–पाक थार मरुस्थल के क्षेत्र को सिन्धु सरस्वती सभ्यता के नाम से जाना जाता है। सरस्वती नदी सिन्धु की सहायक नदी है। सिन्धु सरस्वती सभ्यता के अवशेष एक विस्तृत क्षेत्र में मिलते हैं, जिसे हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो की सभ्यता के नाम से जाना जाता है। जैन धर्म के संस्थापक ऋषभदेव को माना जाता है, लेकिन उनके शासनकाल के बारे में सही जानकारी नहीं है। उस समय मनुष्य को सभ्यता का ज्ञान नहीं था। ऐसे समय में ऋषभदेव न ही ज्ञानप्राप्त करने के बाद धार्मिक उपदेश दिया और जैन धर्म की परम्परा का आरम्भ किया।

मुख्य शब्द– नारी समाज, सिन्धु सरस्वती सभ्यता, सप्तसिन्धु, मोहनजोदड़ो, वैदिक एवं वैदिकोत्तर युग।

जैन धर्म और उसकी परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। कतिपय इतिहासकार जैन धर्म को पूर्व ऐतिहासिक परम्परा से जोड़ते हैं और उसका सम्बन्ध मोहनजोदड़ो की योगमूर्ति से बतलाते हैं। जैन समाज के इतिहासकार यह बतलाते हैं कि यह मूर्ति जैन धर्म से जुड़ी हुई है। इसलिए यह सबसे प्राचीन धर्म है।[1] सिन्धु सभ्यता के जितने उत्खनन हुए हैं। उसमें अधिकांशतः पाकिस्तान में अब चले गये हैं। सिन्धु नदी के मैदानी वाले क्षेत्रों में सिन्धु सभ्यता के अनेक केन्द्र स्थल हैं जिनमें मोहनजोदड़ो, चान्हूदड़ों, अमरी मुख्य है। सिन्धु नदी का अधिकांश भाग पाकिस्तान में ही है। भारत–पाकिस्तान के थार मरुस्थल के समीप सिन्धु की सहायक सरस्वती नदी का मैदानी भाग है। इस प्रकार इस क्षेत्र की सिन्धु सभ्यता को सरस्वती सभ्यता के नाम से जाना जाता है। इसका केन्द्र राजस्थान के गंगानगर और पाकिस्तान के बहावलपुर है।[2] भारत के हरियाणा और भारत–पाक के पंजाब को भी इसमें शामिल किया गया है।

ऋग्वेद की रचना सप्तसिन्धु प्रदेश में हुई है। इस का उल्लेख ऋग्वेद में आर्यों ने स्वयं किया है। प्रारम्भ में आर्यों का प्रसार इसी क्षेत्र में हुआ था। यह सिन्धु प्रदेश आधुनिक अफगानिस्तान से लेकर गंगा नदी के पश्चिमी क्षेत्र तक फैला हुआ था, क्योंकि ऋग्वेद में अफगानिस्तान की कुछ नदियों का उल्लेख मिलता है। जिन नदियों का उल्लेख मिलता है, उनमें कुमु (काबुल), सुवास्तु (स्वात), क्रुमु (कुर्रम), और गोमती (गोमल) मुख्य है। इसी प्रकार ऋग्वेद में सरस्वती, सिन्धु और पंजाब की पाँचों नदियों वितस्ता (झेलम), असिक्नी (चिनाब), परुष्णी (रावी), विपासा (व्यास) और शत्रुदि (सतलज) का वर्णन है। इन सातों नदियों के कारण यह देश सप्तसिन्धु प्रदेश कहा गया है। ऋग्वेद में यमुना नदी का वर्णन तीन बार और गंगा का एक बार मिलता है। इससे स्पष्ट होता है कि ऋग्वेद काल में आर्य गंगा–यमुना के दो–आब में नहीं बसे थे। परन्तु विन्ध्याचल, अरावली, सतपुड़ा, दक्षिण का पठार आदि के विषय में कोई उल्लेख नहीं मिलता है। इससे यह प्रमाणित होता है कि ऋग्वेद काल में आर्यों का प्रसार उत्तर में हिमालय से लेकर

दक्षिण में अरावली और मालवा तक तथा पश्चिम में अफगानिस्तान से लेकर पूर्व में गंगा के पश्चिमी तट तक हो चुका था। इसमें जैन धर्म के अनुयायी भी शामिल थे।

सिन्धु सरस्वती सभ्यता के अवशेष एक विस्तृत भूभाग में मिलते हैं। हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो की सभ्यता मुख्य है। मोहनजोदड़ो की सभ्यता से जैन धर्म को जोड़ा जाता है। कुछ विद्वान ऋग्वेद में उल्लिखित तपस्वियों और जैन श्रमणों में सम्बन्ध स्थापित करते हैं। जैन धर्म के संस्थापक के रूप में ऋषभदेव को माना जाता है। उनके कार्यकाल के बारे में सही जानकारी का पता लगा पाना काफी कठिन है।[3] जैन साहित्य से इस बात की पुष्टि होती है कि ऋषभदेव के समय सभ्यता का ज्ञान नहीं था। लोगों को भोजन पकाकर खाने का भी ज्ञान न होने के कारण मांस का सेवन करते थे। मनुष्य की मृत्यु होने पर न तो उन्हें जमीन में गाड़ते थे और न ही जलाते थे बल्कि खुले में छोड़ दिया जाता था। ऋषभदेव के ज्ञान प्राप्त करने के बाद धर्मोपदेश के साथ ही जैन धर्म की परम्परा आरम्भ होती है। उसके बाद सभ्यता के विकास का प्रारम्भ हुआ।[4]

सिन्धु सरस्वती सभ्यता में कुछ ऐसे प्रमाण उत्खनन से प्राप्त हुए हैं, जिसमें आभूषण तथा वस्त्र स्त्री–पुरुष समान रूप से पहनते थे। कुछ ऐसे वस्त्र थे जो स्त्री या पुरुष विशेष रूप से ही पहनते थे। उत्खनन में कुछ ऐसी मूर्तियाँ मिली हुई हैं जिसमें स्त्री–पुरुष को नग्न दिखाया गया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि पूर्व में कभी जब वस्त्र का आविष्कार नहीं हुआ था तो लोग नग्न अवस्था में ही रहते थे। उस समय की अनेक ऐसी मुद्राएँ मिली हुई हैं, जिन पर ढोल, वीणा, तुरुही तथा नर्तकी के रेखांकित चित्र बने हुए हैं।[5]

सिन्धु सभ्यता के अवशिष्ट प्रमाण इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं कि उस समय मातृसत्तात्मक परिवार था। मातृप्रधान परिवार में नारी को सर्वोच्च स्थान प्राप्त था। मातृका देवी प्रमुख उपास्या थी। यह स्त्रियों की महत्वपूर्ण स्थिति का प्रमाण है। उत्खनन द्वारा जितनी मानव आकृतियों के चित्र प्राप्त हुए हैं, उसमें अधिकांश स्त्रियों के चित्र हैं। अतः यह इस बात का प्रमाण है कि जीवन के सभी क्षेत्रों में स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त था या उन्हें अधिक आदर के साथ देखा जाता था। स्त्री का मुख्य कर्तव्य गृह संचालन तथा सन्तानोत्पत्ति करना था। सामाजिक एवं आर्थिक कार्यों में नारी को उच्च स्थान प्राप्त था।[6] उस समय मातृदेवी की उपासना होती थी। उत्खनन से मातृदेवी के चित्र प्राप्त हुए हैं। उनके गले में हार, शीश पर कुल्हाणी की आकृति शिरस्त्राण तथा अन्य अनेक आभूषण आदि मातृदेवी के विभिन्न रूपों तथा प्रतीकों का परिचायक है। सिन्धुवासियों की यह धारणा थी कि सृष्टि का निर्माण, संचालन तथा विनाश की शक्ति मातृदेवी में ही निहित है। सर जान मार्शल के अनुसार सिन्धु प्रदेश में मातृदेवी की पूजा आद्य शक्ति के रूप में की जाती थी।[7] सिन्धु सभ्यता में लिंग पूजा, योनि पूजा (स्त्रीलिंग का प्रतीक), वृक्ष पूजा, जल पूजा, पशु पक्षी एवं नाग पूजा के प्रमाण मिलते हैं।

सिन्धु सरस्वती सभ्यता वैदिक युग के पूर्व की घटना मानी जाती है। ऐसा माना जाता है कि वैदिक सभ्यता का प्रारम्भ 1500 ई.पूर्व में हुआ था। इससे यह प्रमाणित होता है कि जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव का जीवनकाल वैदिक सभ्यता के पहले का है। कुछ विद्वानों ने उनके उल्लेख की चर्चा ऋग्वेद में की है।[8] अतः ऋग्वेद की रचना के पहले या उसके समकालीन ऋषभदेव जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर (संस्थापक तथा ज्ञान प्राप्त महात्मा) थे। जैन ग्रन्थों में कहा गया है कि उनके जन्म के समय भारत असभ्य और बर्बर था। यहाँ के निवासियों को भोजन पकाने के लिए अग्नि के प्रयोग का ज्ञान नहीं था। वे पूरी तरह निरक्षर थे। उस समय विवाह नामक संस्था भी नहीं थी। ऐसे समय में समाज में सभ्यता का पाठ जैन धर्म के संस्थापक ऋषभदेव ने ही पढ़ाया।[9] इस सामाजिक दशा के आधार पर ऋषभदेव का समय अत्यन्त प्राचीन सिद्ध होता है।

भागवत पुराण में वर्णित ऋषभदेव का जीवन चरित्र जैन पुराणों से मेल खाता है। भागवत पुराण के अनुसार विष्णु ने राजा नाभि की रानी मेरूदेवी के गर्भ से वातरशना श्रमण ऋषियों के धर्मों को प्रकट करने की इच्छा से अवतार ग्रहण किया।[10] इस प्रकार नाभिराज और मेरूदेवी के पुत्र ऋषभ थे, जो धर्म प्रवर्तकों में श्रेष्ठ थे। कल्पसूत्र के अनुसार इनका जन्म अयोध्या में हुआ था। वे चक्रवर्ती सम्राट थे। ये सैकड़ों वर्ष तक जीवित रहे और वृद्धावस्था के समय अपने पुत्र भरत को राजगद्दी सौंपकर जैन धर्म के तीर्थंकर हो गये। इनका देहान्त कैलाश पर्वत पर हुआ। हिन्दुओं ने इन्हें विष्णु का अवतार माना है। विष्णु का यह अवतार राम और कृष्ण से पहले हुआ था।[11]

जैन धर्म के दूसरे तीर्थंकर अजितनाथ के नामों का उल्लेख यजुर्वेद में हुआ है। इससे यह स्पष्ट होता है कि इनका समय ऋषभदेव के काफी बाद में आया है। ऋषभदेव ने अपने ज्ञान के बल पर दुनिया में सभ्यता के विकास में काफी सहायता प्रदान की। जैन धर्म की नींव उन्हीं के द्वारा रखी गयी। जैन धर्म के बारे में यह कहा जाता है कि सबसे प्राचीन धर्म यही है। अन्य धर्मों की उत्पत्ति बाद में हुई है।

सिन्धु सरस्वती सभ्यता के उपरान्त वैदिक सभ्यता का विकास हुआ। सिन्धु सभ्यता एवं संस्कृति का पतन आर्यों के आक्रमण के कारण हुआ। इस सम्बन्ध में मोहनजोदड़ो से हिंसा के कई प्रमाण मिलते हैं। उत्खनन से प्राप्त नरकंकाल के अवशेष आक्रमण संघर्ष एवं प्रबतिशोध की सूचना देते हैं।[12] आर्यों के आक्रमण की अन्तिम शृंखला में हत लोगों के शव उसी स्थान पर हैं, जहाँ वे लोग लड़े थे। ऐसा लगता है कि आक्रमणकारी आगे बढ़ते गये और प्रतिरोधी मारे गये या बन्दी बना लिये गये। यह सभ्यता लगभग 1750 ई. पूर्व से 1500 ई.पू. के मध्य समाप्त हो गयी। कुछ क्षेत्रों में प्राकृतिक परिवर्तन भी हुए। विदेशियों का कई नगरों पर आधिपत्य भी हुआ। इन विदेशियों का आगमन पश्चिमोत्तर ईरान से हुआ था।[13] ह्वीलर का विचार है कि सिन्धु सभ्यता का विनाश करने वाले आर्य ही थे।[14] सिन्धु सभ्यता के बाद सबसे प्राचीन ग्रन्थ ऋग्वेद की रचना हुई, जिसके नाम पर वैदिक सभ्यता का नाम पड़ा। ऋग्वेद के रचनाकाल के सम्बन्ध में विचारकों में काफी मतभेद है। अधिकांश इतिहासकारों ने ऋग्वेद की रचना के समय को लगभग 1500 ई. पूर्व के आसपास माना है।[15] कुछ विद्वान इसका रचनाकार 1000 ई.पू. बतलाते हैं।[16] वर्ष 1889 के अपने भाषण में प्रो. मैक्स मूलर ने कहा था– हम यह नहीं कह सकते हैं कि इसकी रचना कब शुरू हुई।

अधिकांश इतिहासकारों ने वैदिककाल को 1500 ई.पू. से 1000 ई.पू. के मध्य माना है, जबकि इसके बाद वैदिकोत्तर युग आता है, जिसे उत्तर वैदिक काल कहा गया है। उत्तर वैदिक काल 1000 ई. पूर्व से 500 ई.पू. के मध्य माना गया हे। इतिहासकारों एवं अन्य विद्वानों ने ऋग्वेद में उल्लिखित ऋषि, मुनि और यति शब्दों को स्पष्ट करते हुए यह विचार दिया है कि उस समय ऋषि शब्द का प्रयोग वैदिक परम्परा के धार्मिक गुरुओं के लिए तथा मुनि और यति शब्द का श्रमण परम्परा के साधुओं के लिए होता था। सम्पूर्ण वैदिक साहित्य, जैन एवं बौद्ध साहित्य तथा शिलालेखों में जैन एवं बौद्ध साधुओं को श्रमण कहा गया है। अथर्ववेद, सामवेद, कात्यायन और आपस्तम्बीय श्रौतसूत्रों में व्रात्यों का वर्णन हुआ है। उन्हें संस्कारहीन अदीक्षित, प्राकृतभाषी और प्रत्यंचारहित धनुष धारण करने वाला कहा गया है। व्रात्यस्तोम विधि के द्वारा शुद्ध कर उन्हें वैदिक धर्म में दीक्षित करने का विधान बतलाया गया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि ये व्रात्य भी श्रमण परम्परा के साधु या गृहस्थ थे, क्योंकि जैन धर्म में प्रमुख पाँच नियमों– अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह को व्रत कहा गया है। और उन्हें ग्रहण करने वाले गृहस्थों को अणुवर्ती और मुनियों को महावर्ती की संज्ञा दी गयी है।[17]

जैन धर्म में गृहस्थ अनुयायियों के लिए पंच अणुव्रतों के पालन का नियम बतलाया गया है।[18] ये व्रत हैं– पंच अणुव्रत–

(i) अहिंसा व्रत, जहाँ तक सम्भव हो हिंसा न करें।

(ii) सत्याव्रत, जीवन में सत्य का अनुसरण करें।

(iii) अस्तेयाणुव्रत, कोई ऐसा कार्य न करें, जिससे दूसरे के कार्यों में हस्तक्षेप हो।

(iv) ब्रह्मचर्याणुव्रत, पर स्त्री के विषय में न सोचे और गृहस्थ सीमाओं में रहें।

(v) अपरिग्रहाणुव्रत, जितना आवश्यक हो उतने ही धन का संचय करें।

गृहस्थों को समय–समय पर तीन गुणव्रतों का पालन करना चाहिए–

(i) प्रत्येक गृहस्थ को अपनी सुविधानुसार अपना कार्यक्षेत्र निर्धारित करना चाहिए।

(ii) केवल योग्य तथा अनुकरणीय कार्य करें।

(iii) अपने भोजन की सीमा निर्धारित करके उसका उल्लंघन न करें।

प्रत्येक गृहस्थ नारी को जैन धर्म में चार शिक्षाव्रत का पालन करना चाहिए–

(i) एक ऐसे क्षेत्र का निर्धारण करें, जिसमें कभी पदार्पण न करें।

(ii) सांसारिक कार्यों से विरत होकर चिन्तन करें।

(iii) अष्टमी तथा चतुर्दशी को मुनियों के समान जीवन व्यतीत करें और धार्मिक कथाओं का श्रवण करें।

(iv) भिक्षुणियों तथा मुनियों, साध्वी का सदैव स्वागत करें।

वैदिक काल में सामाजिक परम्पराओं के अनुसार नारी का पद बहुत उच्च था। समाज के सामाजिक तथा धार्मिक नेतृत्व में नारी का पर्याप्त सहयोग रहता था। इस समय परदा–प्रथा महिलाओं में नहीं थी। शिक्षा का द्वार नारी के लिए खुले थे। धार्मिक साहित्य में रुचि रखने वाली नारी को अपने प्रवृत्ति के पालन में कोई रोक–टोक नहीं थी। कई ऋषि स्त्रियों की रचनाएँ ऋग्वेद संहिता में मिलती है।[19] साहस तथा वीरता में स्त्रियाँ काफी आगे थी। इसका यह प्रमाण है कि विष्पला नामक स्त्री लड़ाई में गयी थी और वह घायल हो गयी, तो आश्विनों ने उसकी चिकित्सा की थी।[20] प्रत्येक माता–पिता की अभिलाषा पुत्री की अपेक्षा पुत्र प्राप्त करने की होती थी। पुत्र अपने पिता के कार्यों में सहायक होता था और पुत्री को माता के कार्यों में सहायक माना जाता था। जनधन की रक्षा के साथ पूर्वजों का तर्पण पुत्र ही करता था, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं था कि पुत्री को हेय तथा घृणा की दृष्टि से देखा जाता था, उसे समाज में काफी सम्मान प्राप्त था।

वैदिक समाज में पितृसत्तात्मक सत्ता थी, परन्तु नारी को मातृरूप में पर्याप्त सम्मान प्राप्त था। पिता की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी पुत्र को प्राप्त था। पुत्री को उस पर कोई अधिकार नहीं था। पत्नी अपने पति के साथ धार्मिक अनुष्ठानों में भाग लेती थी। ऋग्वेद में कहा गया है कि पत्नी ही गृह है, वही गृहस्थी है तथा उसी में आनन्द है।[21]

वैदिक काल में शृंगार में नारी की रुचि अधिक थी। वे अपने केशों को अनेक प्रकार से गूथती थी। शृंगार विभिन्न प्रकार के फूलों के द्वारा किया जाता था। वे काजल एवं तिलक भी लगाती थी। अनेक स्त्रियाँ अपने शृंगार एवं सौन्दर्य पर फूली नहीं समाती थी।[22] नारी को आभूषण प्रिय था। वे हाथों में कड़े, गले में मणियां पहनती थी। आभूषणों में प्रयोग की जाने वाली सामग्री सोना, चांदी, कीमती पत्थर हाथी दाँत तथा मोती मूँगे थी। ऋग्वेद की ऋचाओं से जिस सामाजिक जीवन का वर्णन मिलता है, उससे यह प्रतीत होता है कि प्रजा का सामान्य जीवन सुखी एवं समृद्धि से भरा पड़ा था। इस समय आर्थिक विषमता नहीं थी। कर्म प्रधान होने के कारण सभी कर्म समान रूप से आदरणीय थे। उदारता, दानशीलता एवं सहानुभूति के कारण ऋग्वैदिक काल में विषमता एवं असमानता नहीं थी। ऋग्वेद के रचयिता ने आध्यात्मिक उत्पीड़न के परिणामस्वरूप याचना करते हुए कहा कि हे श्रद्धा! हमारे में विश्वास उत्पन्न करो। परिणाम स्वरूप सृष्टि

के गीत के रूप में ऋग्वेद की रचना हुई और यहीं से ऋग्वैदिक धार्मिक दर्शन एवं विश्वासों का प्रारम्भ हुआ।[23]

जैन धर्म का प्रचार एवं विकास दक्षिण भारत में भी हुआ। मौर्यकाल तथा उसके बाद जिस प्रकार उत्तर भारत में मथुरा जैन धर्म का केन्द्र बन गया था, उसी प्रकार दक्षिण भारत में श्रवणबेलगोला जैन धर्म के प्रचार का केन्द्र बन गया। इस समय चालुक्य एवं कदम्ब वंश के राजा हिन्दू थे, लेकिन इन्होंने जेन मत को प्रश्रय दिया। पल्लव नरेश नरसिंह वर्मा और महेन्द्रवर्मा भी जैन धर्म के समर्थक थे। पल्लव के राज्य में कई स्थानों पर जैन साधुगृह बने हुए थे। पाटलिपुत्र उस समय जैनों का एक प्रसिद्ध उपासरा माना जाता था। नरसिंह वर्मा के समय ही ह्वेनसांग जैन मन्दिर को देखने आया था। काचीनगर भी उस समय जैन धर्म का एक प्रमुख क्षेत्र माना जाता था। यहाँ कई पौराणिक जैन मन्दिर हैं। शक्तिशाली नरेशों का संरक्षण प्राप्त करके दिगम्बर जैन सम्प्रदाय दक्षिण भारत में काफी प्रतिष्ठित हुआ।

सन्दर्भ सूची–

1. श्रीकान्त पाठक, जैन एवं बौद्ध धर्म, पृ. 1
2. शैलेन्द्र शर्मा एवं ईश्वरी प्रसाद, प्राचीन भारतीय संस्कृति, पृ. 32
3. श्रीकान्त पाठक, पूर्वोक्त
4. श्रीकान्त पाठक, प्राचीन भारतीय धर्म एवं दर्शन की रूपरेखा, पृ. 118
5. शैलेन्द्र शर्मा एवं ईश्वरी प्रसाद, प्राचीन भारतीय संस्कृति, पृ. 42
6. पूर्वोक्त, पृ. 42
7. पूर्वोक्त, पृ. 46
8. ऋग्वेद 10/166/1
9. श्रीकान्त पाठक, प्राचीन भारतीय धर्म एवं दर्शन, पृ. 118
10. भागवतपुराण, 5/3/20
11. श्रीकान्त पाठक, प्राचीन भारतीय धर्म एवं दर्शन, पृ. 119
12. गाडर्न : प्रिहिस्टारिक बैकग्राउण्ड ऑफ इण्डियन कल्चर, पृ. 94
13. शैलेन्द्र शर्मा एवं ईश्वरी प्रसाद, प्राचीन भारतीय संस्कृति, पृ. 58
14. ह्वीलर, ऐन्शियंट इण्डिया, पृ. 3/82
15. श्रीकान्त पाठक, प्राचीन भारतीय धर्म एवं दर्शन, पृ. 120
16. वी.डी. महाजन, प्राचीन भारत का इतिहास, पृ. 61
17. श्रीकान्त पाठक, प्राचीन भारतीय धर्म एवं दर्शन, पृ. 120
18. शैलेन्द्र शर्मा एवं ईश्वरी प्रसाद, प्राचीन भारतीय संस्कृति, पृ. 665
19. ऋग्वेद 1/117/1 तथा 5/28/6
20. ऋग्वेद, 1/112/10 और 1/116/15
21. ऋग्वेद, 3/53/4
22. ऋग्वेद, 1/123/10
23. शैलेन्द्र शर्मा एवं ईश्वरी प्रसाद, प्राचीन भारतीय संस्कृति, पृ. 76

JSECR, Vol. 10, No. 21, July.-Dec., 2024 ISSN : 2394-2878
Peer Reviewed Journal, Impact Factor: 9.0 (IIFS)

सोशल मीडिया का युवा पीढ़ी पर शिक्षा और सामाजिक जीवन में प्रभाव: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. बिनीता रानी टोप्पो
एम.फिल., नेट
सहायक प्राध्यापिका,समाजशास्त्र विभाग
संताल परगना महाविधालय, सिदो कान्हु मुर्मू विश्वविधालय,दुमका

सारांश

डिजिटल युग ने समकालीन युवाओं के शैक्षिक और सामाजिक परिदृश्य को व्यापक रूप से बदल दिया है, जिसमें सोशल मीडिया ने सीखने की आदतों, पारस्परिक संबंधों और जीवनशैली पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। यह अध्ययन युवा पीढ़ी पर सोशल मीडिया के बहुआयामी प्रभाव का विश्लेषण करता है, जिसमें इसके सकारात्मक और चुनौतीपूर्ण पहलुओं दोनों को उजागर किया गया है। सोशल मीडिया प्लेटफ़ॉर्म्स ने शैक्षिक संसाधनों, ऑनलाइन पाठ्यक्रमों, परस्पर संवादात्मक चर्चाओं और सहयोगात्मक सीखने के नेटवर्क तक अभूतपूर्व पहुंच प्रदान की है, जिससे आलोचनात्मक सोच, समस्या-समाधान कौशल और वैश्विक दृष्टिकोण में वृद्धि होती है। वहीं, अत्यधिक और असंगठित उपयोग ध्यान केंद्रित करने की क्षमता को प्रभावित कर सकता है, मानसिक थकान उत्पन्न कर सकता है और शैक्षिक प्रदर्शन पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है। शैक्षिक प्रभाव के परे, सोशल मीडिया सामाजिक संपर्क, पारिवारिक संबंधों और सामुदायिक सहभागिता को भी पुनर्परिभाषित करता है। युवा डिजिटल पहचान निर्माण करते हैं, वैश्विक नेटवर्क से जुड़े रहते हैं और ऑनलाइन संवाद में भाग लेते हैं, जिससे सांस्कृतिक दृष्टिकोण विस्तृत होते हैं और सामाजिक समावेशिता बढ़ती है। हालांकि, अत्यधिक ऑनलाइन सहभागिता पारंपरिक सामाजिक बंधनों को कमजोर कर सकती है और वास्तविक जीवन में संवाद और व्यवहारिक अनुभवों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है। इसलिए, ऑनलाइन और वास्तविक जीवन के अनुभवों के बीच संतुलन बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से, यह अध्ययन दर्शाता है कि सोशल मीडिया युवाओं के सामाजिक मूल्य, व्यवहार और सांस्कृतिक धारणाओं को किस प्रकार प्रभावित करता है। द्वितीयक डेटा आधारित विश्लेषण के माध्यम से यह अध्ययन शिक्षा और सामाजिक जीवन पर इसके प्रभाव के अवसर और संभावित चुनौतियों को उजागर करता है।

मुख्य शब्द: *सोशल मीडिया, युवा, शिक्षा, सामाजिक जीवन, बहुआयामी प्रभाव*

भूमिका

वर्तमान डिजिटल युग में सोशल मीडिया ने सामाजिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक संरचनाओं पर गहरा प्रभाव डाला है। युवा पीढ़ी, जो तकनीकी उपकरणों और ऑनलाइन प्लेटफ़ॉर्म के साथ सबसे अधिक जुड़ी हुई है, इस परिवर्तन की मुख्य वाहक मानी जा सकती है। फेसबुक, इंस्टाग्राम, ट्विटर, व्हाट्सऐप, यूट्यूब और अन्य डिजिटल नेटवर्क न केवल सूचना और संवाद का साधन बन गए हैं, बल्कि ये युवा व्यक्तित्व, सामाजिक पहचान और रचनात्मक अभिव्यक्ति के नए आयामों को भी आकार दे रहे हैं। तकनीकी नवाचारों के माध्यम से युवाओं का जीवन अधिक गतिशील, संवादात्मक और वैश्विक दृष्टिकोण-सम्पन्न हो गया है। शैक्षिक क्षेत्र में सोशल मीडिया ने ज्ञान अर्जन और सीखने की प्रक्रिया को पुनर्परिभाषित किया है। डिजिटल नोट्स, ऑनलाइन लेक्चर, शैक्षिक मंच और ई-लर्निंग एप्लिकेशन ने अध्ययन को अधिक सुलभ, लचीला और आकर्षक बनाया है। युवा विद्यार्थी अब पारंपरिक शैक्षिक सीमाओं से परे जाकर विभिन्न विषयों में गहन अनुसंधान कर सकते हैं, अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण प्राप्त कर सकते हैं और ऑनलाइन समूहों में विचारों का आदान-प्रदान कर सकते हैं। यह प्रक्रिया केवल सूचना संचरण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह विद्यार्थियों की आलोचनात्मक सोच, समस्या समाधान क्षमता और रचनात्मक प्रवृत्ति पर भी सकारात्मक प्रभाव डालती है[1]। इसके बावजूद, सोशल

मीडिया के अत्यधिक उपयोग से कुछ नकारात्मक परिणाम भी उत्पन्न हुए हैं। लगातार सूचना प्रवाह, डिजिटल सामग्री की अधिकता और ध्यान केंद्रित करने में कठिनाई जैसी चुनौतियाँ युवाओं में मानसिक और व्यवहारिक दबाव उत्पन्न कर रही हैं। समय प्रबंधन की समस्याएँ, ऑनलाइन व्यसन और वास्तविक सामाजिक संपर्कों में कमी जैसी प्रवृत्तियाँ समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से चिंतनीय हैं। इसलिए, इस क्षेत्र में अध्ययन केवल तकनीकी प्रभाव तक सीमित नहीं रहकर सामाजिक संरचना, मूल्य प्रणाली और सांस्कृतिक प्रथाओं पर पड़ने वाले दीर्घकालिक प्रभावों को समझने का अवसर प्रदान करता है। सोशल मीडिया ने सामाजिक जीवन के परंपरागत स्वरूप में भी महत्वपूर्ण बदलाव किए हैं। युवा अब अपने सामाजिक नेटवर्क का निर्माण और संवाद मुख्यतः डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म पर कर रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप, पारिवारिक और सामुदायिक संबंधों की प्रकृति बदल रही है। ऑनलाइन सहभागिता के माध्यम से युवा नई सामाजिक पहचान और डिजिटल व्यक्तित्व का निर्माण कर रहे हैं। वहीं, पारंपरिक सामाजिक मूल्यों, सांस्कृतिक आदतों और प्रत्यक्ष संवाद के स्थान पर आंशिक रूप से सतही संवाद और अस्थायी सामाजिक संपर्क देखने को मिल रहे हैं। इस परिदृश्य में सोशल मीडिया न केवल व्यक्तिगत जीवन बल्कि व्यापक सामाजिक संरचना के लिए भी निर्णायक माध्यम बन गया है।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह अध्ययन अत्यंत प्रासंगिक है क्योंकि यह युवाओं की डिजिटल सहभागिता, सामाजिक और शैक्षिक व्यवहार, तथा जीवनशैली में बदलाव के पैटर्न का विश्लेषण करता है। यह अध्ययन यह समझने में मदद करता है कि तकनीकी उपकरण किस प्रकार सामाजिक और सांस्कृतिक संरचनाओं को प्रभावित कर रहे हैं और युवा वर्ग के दृष्टिकोण, प्राथमिकताओं और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं को किस हद तक प्रभावित कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त, डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म ने वैश्विक दृष्टिकोण और विविध सांस्कृतिक अनुभवों को भी बढ़ावा दिया है, जिससे युवाओं की सोच अधिक समावेशी और व्यापक हो रही है। अतः, सोशल मीडिया का प्रभाव केवल व्यक्तिगत और शैक्षिक अनुभव तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक प्रथाओं और मूल्य प्रणाली को पुनर्परिभाषित कर रहा है। युवा पीढ़ी इस परिवर्तन के केंद्र में है, और उनके अनुभवों तथा डिजिटल सहभागिता का अध्ययन समाजशास्त्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यह न केवल वर्तमान सामाजिक और शैक्षिक परिवर्तनों को समझने का अवसर प्रदान करता है, बल्कि भविष्य में नीति निर्धारण, शैक्षिक कार्यक्रम और सामाजिक सुधारों के लिए भी मार्गदर्शन प्रदान करता है। इस व्यापक संदर्भ में सोशल मीडिया और युवा जीवन के बीच के संबंध को समझना अत्यंत आवश्यक है। यह अध्ययन युवा पीढ़ी में डिजिटल उपकरणों के उपयोग और इसके सामाजिक और शैक्षिक परिणामों के बीच के जटिल संबंधों को उजागर करता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि तकनीकी नवाचार केवल जीवनशैली में बदलाव नहीं ला रहे हैं, बल्कि वे सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक आदतों और मूल्य प्रणाली पर भी गहरा प्रभाव डाल रहे हैं। इस दृष्टि से, डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म का समाजशास्त्रीय महत्व अत्यधिक प्रबल है और इसका अध्ययन शैक्षिक और सामाजिक नीति निर्धारण के लिए अनिवार्य हो गया है।

सोशल मीडिया और शिक्षा पर प्रभाव

शैक्षिक सामग्री तक पहुंच और ऑनलाइन सीखने की सुविधा: डिजिटल युग में सोशल मीडिया ने शैक्षिक सामग्री तक पहुंच और सीखने के अवसरों को क्रांतिकारी रूप से बदल दिया है। पहले, विद्यार्थी केवल पुस्तकालयों, शैक्षिक संस्थानों और कक्षाओं पर निर्भर रहते थे। इस परंपरागत प्रणाली में समय और स्थान की बाधाएँ, सीमित सामग्री और संसाधनों की कमी प्रमुख चुनौतियाँ थीं। सोशल मीडिया और डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म के माध्यम से विद्यार्थी अब किसी भी समय, किसी भी स्थान से अध्ययन कर सकते हैं। वीडियो लेक्चर, ऑनलाइन नोट्स, ई-पुस्तकें, शैक्षिक पोर्टल और वेबिनार छात्रों को विविध विषयों और दृष्टिकोणों से परिचित कराते हैं। सोशल मीडिया आधारित शैक्षिक समूह और फोरम विद्यार्थियों को सहयोगात्मक अध्ययन और विचार-विमर्श के अवसर प्रदान करते हैं। यह केवल ज्ञान का आदान-प्रदान नहीं, बल्कि आलोचनात्मक सोच, प्रश्न पूछने और समाधान सुझाने की प्रक्रिया को भी प्रोत्साहित करता है। उदाहरण के तौर पर, एक छात्र किसी कठिन विषय को समझने में असमर्थ हो तो वह ऑनलाइन समूह में प्रश्न पूछ सकता है और वैश्विक स्तर के विशेषज्ञों या साथियों से उत्तर प्राप्त कर सकता है। इसके अतिरिक्त, सोशल मीडिया प्लेटफ़ॉर्म ने वैश्विक दृष्टिकोण और सांस्कृतिक समझ को भी बढ़ावा दिया है। विद्यार्थी अब अंतरराष्ट्रीय संदर्भ में सीख सकते हैं और विभिन्न देशों के

दृष्टिकोण, शोध और अध्ययन पद्धतियों से अवगत हो सकते हैं। यह पारंपरिक शिक्षा प्रणाली की सीमाओं को पार करता है और ज्ञान अर्जन को अधिक समावेशी, गतिशील और लचीला बनाता है[ii]।

ध्यान और अध्ययन पैटर्न पर प्रभाव: सोशल मीडिया ने विद्यार्थी के ध्यान और अध्ययन की आदतों में उल्लेखनीय बदलाव किया है। एक ओर यह डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म अध्ययन को अधिक आकर्षक और परस्पर संवादात्मक बनाता है। मल्टीमीडिया सामग्री, शैक्षिक वीडियो, इन्फोग्राफिक्स और ऑनलाइन क्विज़ विद्यार्थियों की अवधारणात्मक समझ और याददाश्त को मजबूत करते हैं। इस प्रकार, छात्र अब अधिक सक्रिय रूप से सीखने में संलग्न होते हैं, जिससे सीखने की प्रक्रिया व्यक्तिगत और लचीली बनती है। वहीं, लगातार सूचना का बहाव और सोशल मीडिया पर उपलभ्य सामग्री के कारण ध्यान केंद्रित करने की क्षमता प्रभावित हो रही है। अधिभार की स्थिति में विद्यार्थी लंबे समय तक एक विषय पर ध्यान नहीं दे पाते। तात्कालिक संतोष, मनोरंजन और सूचना की अधिकता के कारण अध्ययन की गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। सोशल मीडिया पर मनोरंजन और सामाजिक गतिविधियों की ओर आकर्षण समय प्रबंधन और शैक्षिक प्राथमिकताओं को भी प्रभावित करता है। अत: अध्ययन पैटर्न में बदलाव दो प्रकार का देखा जा सकता है: सकारात्मक और नकारात्मक। सकारात्मक पक्ष में अधिक लचीलापन, सक्रिय सीखना और बहुआयामी दृष्टिकोण शामिल हैं, जबकि नकारात्मक पक्ष में ध्यान केंद्रित करने में कमी, समय प्रबंधन की समस्याएँ और अधिभारित डिजिटल सामग्री के कारण मानसिक तनाव शामिल हैं[iii]।

डिजिटल उपकरण और प्लेटफ़ॉर्म के उपयोग से सीखने की क्षमता में बदलाव: सोशल मीडिया और डिजिटल उपकरणों के माध्यम से सीखने की क्षमता में गहरा बदलाव आया है। विद्यार्थी अब केवल जानकारी ग्रहण करने तक सीमित नहीं हैं; वे ऑनलाइन मंचों, शैक्षिक समूहों और फोरम के माध्यम से बहस, चर्चा और समस्या समाधान में सक्रिय भागीदारी करते हैं। इस प्रक्रिया से उनकी आलोचनात्मक सोच, समस्या-समाधान कौशल और विश्लेषणात्मक क्षमता में वृद्धि होती है। इसके अलावा, डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म ने वैश्विक संदर्भ में ज्ञान साझा करने और अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाने की सुविधा प्रदान की है। विद्यार्थी अब विभिन्न देशों के शोध, दृष्टिकोण और सांस्कृतिक अनुभवों से अवगत हो सकते हैं, जिससे उनकी समझ और सोच में व्यापकता आती है। इस प्रकार, डिजिटल उपकरणों का उपयोग पारंपरिक शिक्षण पद्धतियों की तुलना में अधिक सक्रिय, सहभागी और संवादात्मक अध्ययन प्रक्रिया को प्रोत्साहित करता है। युवा विद्यार्थियों के लिए यह एक अवसर है कि वे ज्ञान के विभिन्न स्तरों और स्रोतों को एकीकृत कर सकें। ऑनलाइन प्लेटफ़ॉर्म ने केवल जानकारी तक पहुंच को आसान नहीं बनाया है, बल्कि यह सीखने की क्षमता को समृद्ध, बहुआयामी और सृजनात्मक रूप से विकसित करने में भी सहायक है।

सकारात्मक और नकारात्मक पहलू

सोशल मीडिया के शैक्षिक प्रभाव के सकारात्मक पहलुओं में सबसे प्रमुख है ज्ञान तक त्वरित और व्यापक पहुंच। ऑनलाइन अध्ययन समूह, फोरम और शैक्षिक नेटवर्क विद्यार्थियों को विभिन्न दृष्टिकोण और समाधान की विधियों से परिचित कराते हैं। इसके परिणामस्वरूप सीखने की प्रक्रिया अधिक लचीली, सक्रिय और आत्मनिर्भर बनती है। वहीं, नकारात्मक पहलुओं में ध्यान केंद्रित करने में कठिनाई, समय प्रबंधन की समस्या और डिजिटल व्यसन शामिल हैं। अत्यधिक डिजिटल सहभागिता के कारण वास्तविक जीवन के सामाजिक संपर्कों में कमी, मानसिक तनाव और अधिभारित सूचना का दबाव देखा गया है। अतः सोशल मीडिया शैक्षिक दृष्टि से एक दोधारी तलवार के समान है। इसका संतुलित और नियंत्रित उपयोग लाभकारी है, जबकि अनुचित या अत्यधिक उपयोग हानिकारक साबित हो सकता है[iv]। समाजशास्त्रीय दृष्टि से देखा जाए तो यह अध्ययन केवल शैक्षिक प्रभाव तक सीमित नहीं है। यह यह स्पष्ट करता है कि डिजिटल माध्यम युवाओं के सीखने की प्रक्रिया, मानसिक संरचना और सामाजिक सहभागिता को किस प्रकार प्रभावित कर रहे हैं। सोशल मीडिया शिक्षा को अधिक लचीला, बहुआयामी और गतिशील बनाता है, लेकिन इसके साथ ही मानसिक और व्यवहारिक चुनौतियाँ भी उत्पन्न करता है।

सोशल मीडिया और सामाजिक जीवन पर प्रभाव

सामाजिक संपर्क में बदलाव: सोशल मीडिया ने युवाओं के सामाजिक संपर्क तरीकों में क्रांतिकारी बदलाव किया है। पारंपरिक सामाजिक नेटवर्क, जो परिवार, स्कूल और स्थानीय समुदाय तक सीमित थे, अब डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म के माध्यम से वैश्विक स्तर तक विस्तारित हो गए हैं। युवा अपने मित्रों, सहपाठियों और विशेषज्ञों से ऑनलाइन जुड़कर विचारों का आदान-प्रदान कर सकते हैं। इस परिवर्तन से न केवल संचार की गति और पहुँच बढ़ी है, बल्कि सामाजिक संपर्क की प्रकृति भी अधिक लचीली और बहुआयामी हो गई है। ऑनलाइन नेटवर्किंग ने सामाजिक सहयोग, सामूहिक समस्याओं के समाधान और साझा हितों के लिए एक नया मंच उपलब्ध कराया है। युवा अब समुदाय आधारित समूहों, शैक्षिक फोरम और रुचि आधारित सोशल नेटवर्क में शामिल होकर विभिन्न सामाजिक गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग ले सकते हैं। यह परिवर्तन पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं की तुलना में अधिक गतिशील, विविध और अंतर-सांस्कृतिक संपर्क उत्पन्न करता है[v]।

पारंपरिक सामाजिक मूल्य और परंपराओं पर प्रभाव: सोशल मीडिया के व्यापक उपयोग ने पारंपरिक सामाजिक मूल्यों और सांस्कृतिक परंपराओं पर भी प्रभाव डाला है। युवा वर्ग अब डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म के माध्यम से विभिन्न सांस्कृतिक दृष्टिकोण, आधुनिक विचार और वैश्विक प्रथाओं से परिचित हो रहा है। इसके परिणामस्वरूप, पारंपरिक नियम, रीति-रिवाज और सामाजिक अपेक्षाओं में बदलाव देखने को मिल रहा है। उदाहरण के तौर पर, पहले युवा अपनी सामाजिक गतिविधियों और मनोरंजन को पारिवारिक और स्थानीय समुदाय के संदर्भ में सीमित रखते थे। आज सोशल मीडिया ने इन गतिविधियों को वैश्विक स्तर पर फैलाने का अवसर प्रदान किया है, जिससे पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं में परिवर्तन आया है। कुछ मामलों में, डिजिटल मीडिया ने सामाजिक मूल्यों और सांस्कृतिक आदतों के प्रति समझ और सहिष्णुता बढ़ाई है, जबकि कुछ स्थितियों में पारंपरिक मान्यताओं की उपेक्षा और असहमति भी उत्पन्न हुई है[vi]।

ऑनलाइन सहभागिता और डिजिटल पहचान: सोशल मीडिया प्लेटफ़ॉर्म ने युवाओं को ऑनलाइन सहभागिता और डिजिटल पहचान निर्माण के नए अवसर प्रदान किए हैं। युवा अब अपने विचार, रचनात्मकता और सामाजिक दृष्टिकोण को ऑनलाइन प्रस्तुत कर सकते हैं। डिजिटल प्रोफाइल, पोस्ट, ब्लॉग और वीडियो साझा करने के माध्यम से वे अपनी सामाजिक पहचान को व्यक्तिगत और सामूहिक स्तर पर निर्मित करते हैं। इस प्रक्रिया के माध्यम से युवा अपनी सामाजिक स्थिति, विचार और रुचियों के अनुसार ऑनलाइन नेटवर्क में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। ऑनलाइन सहभागिता ने न केवल डिजिटल साक्षरता और तकनीकी कौशल को बढ़ाया है, बल्कि सामाजिक दृष्टिकोण, समूह सहभागिता और नेतृत्व क्षमताओं को भी सुदृढ़ किया है। वहीं, अत्यधिक डिजिटल पहचान पर निर्भरता कभी-कभी वास्तविक जीवन के सामाजिक संपर्कों और व्यक्तिगत अनुभवों में कमी का कारण बन सकती है।

परिवार और समुदाय के साथ संबंधों में बदलाव: सोशल मीडिया ने परिवार और समुदाय के साथ युवाओं के संबंधों में भी महत्वपूर्ण बदलाव किए हैं। पारंपरिक परिवारिक संवाद और सामुदायिक सहभागिता अब डिजिटल संवाद और ऑनलाइन सहभागिता के माध्यम से अधिक निर्भर होने लगे हैं। युवा अब परिवार के सदस्यों और स्थानीय समुदाय के बजाय डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म के माध्यम से मित्र, समूह और वैश्विक नेटवर्क से जुड़ते हैं। इस बदलाव के परिणामस्वरूप, पारिवारिक संबंधों में संवाद की गुणवत्ता और घनिष्ठता पर असर पड़ सकता है। वहीं, सोशल मीडिया ने परिवार और समुदाय के सदस्यों के बीच दूरी को पाटने और साझा अनुभवों के लिए नए अवसर भी उपलब्ध कराए हैं। उदाहरण के तौर पर, वीडियो कॉल, परिवारिक ग्रुप चैट और ऑनलाइन सामाजिक कार्यक्रम युवाओं को पारंपरिक सामाजिक संपर्क के साथ जोड़ने में मदद करते हैं, जबकि डिजिटल आदतों की अधिकता कभी-कभी पारिवारिक समय और सामूहिक गतिविधियों को प्रभावित कर सकती है।

डिजिटल सहभागिता और वास्तविक जीवन के सामाजिक अनुभवों का संतुलन

वर्तमान डिजिटल युग में सोशल मीडिया ने युवाओं के जीवन में सामाजिक और शैक्षिक गतिविधियों के स्वरूप को गहराई से प्रभावित किया है। डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म ने ज्ञान अर्जन, मनोरंजन, सामाजिक संपर्क और व्यक्तिगत पहचान के क्षेत्र में अत्यधिक अवसर प्रदान किए हैं। युवा वर्ग इन माध्यमों के माध्यम से वैश्विक नेटवर्क से जुड़ते हैं, विचार साझा करते हैं, और डिजिटल पहचान का निर्माण

करते हैं। हालांकि, यह तकनीकी सहभागिता वास्तविक जीवन में सामाजिक अनुभवों और पारंपरिक संवाद के साथ संतुलन बनाए रखने की चुनौती भी प्रस्तुत करती है। डिजिटल सहभागिता का मुख्य लाभ यह है कि यह सीमाओं को पार कर, व्यक्तियों को वैश्विक और बहुआयामी नेटवर्क से जोड़ता है। वीडियो कॉल, चैट, सोशल मीडिया पोस्ट, ऑनलाइन समूह और फोरम युवाओं को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टिकोण से संवादात्मक बनाने में मदद करते हैं। विद्यार्थी अब अपने मित्र, सहपाठी और विशेषज्ञों के साथ वास्तविक समय में विचार-विमर्श कर सकते हैं। इसके परिणामस्वरूप सीखने की प्रक्रिया अधिक सक्रिय, सहभागी और समावेशी बनती है। इस प्रकार, डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म का प्रभाव केवल सूचना आदान-प्रदान तक सीमित नहीं रहकर सामाजिक क्षमता, नेतृत्व कौशल और आलोचनात्मक सोच को भी प्रोत्साहित करता है।

वास्तविक जीवन के सामाजिक अनुभवों का महत्व इस संदर्भ में और भी बढ़ जाता है। पारंपरिक सामाजिक गतिविधियाँ, जैसे परिवार के साथ समय बिताना, सामुदायिक कार्यक्रमों में भाग लेना, विद्यालय और कक्षा में संवाद करना, व्यक्ति के व्यवहारिक और भावनात्मक विकास के लिए अनिवार्य हैं। ये अनुभव केवल ज्ञान के आदान-प्रदान तक सीमित नहीं रहते, बल्कि सामाजिक और नैतिक मूल्यों, सहिष्णुता, सहयोग और समर्पण की भावना को भी विकसित करते हैं। डिजिटल सहभागिता और वास्तविक जीवन की गतिविधियों के बीच संतुलन बनाए रखना युवाओं की मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक क्षमता और जीवन की गुणवत्ता के लिए अत्यंत आवश्यक हो गया है। अत्यधिक डिजिटल सहभागिता कई प्रकार की चुनौतियाँ उत्पन्न कर सकती है। लगातार ऑनलाइन नेटवर्किंग, सोशल मीडिया प्लेटफ़ॉर्म पर सक्रियता और डिजिटल मनोरंजन समय प्रबंधन की कठिनाई, मानसिक थकान और वास्तविक जीवन के सामाजिक संपर्कों में कमी का कारण बन सकते हैं। यदि युवा अपने परिवार, मित्र और सामुदायिक गतिविधियों के लिए पर्याप्त समय नहीं देते हैं, तो उनके सामाजिक और भावनात्मक विकास पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। ऑनलाइन और ऑफलाइन अनुभवों के बीच असंतुलन से मानसिक तनाव, अकेलापन और आत्म-पहचान में भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

संतुलन बनाए रखने के लिए रणनीतिक और व्यवस्थित डिजिटल सहभागिता की आवश्यकता है। युवा को डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म का उपयोग शैक्षिक और सामाजिक उद्देश्य के साथ करना चाहिए। ऑनलाइन अध्ययन समूह, शैक्षिक फोरम और ज्ञान-साझा करने वाले मंच उनके सीखने के कौशल और बहुआयामी दृष्टिकोण को विकसित कर सकते हैं। इसी समय, वास्तविक जीवन की गतिविधियाँ, जैसे पारिवारिक संवाद, सामुदायिक सहभागिता और सामाजिक कार्यक्रम, युवाओं को भावनात्मक, मानसिक और नैतिक रूप से सशक्त बनाती हैं। इस संतुलन से युवा न केवल ज्ञान और कौशल प्राप्त करते हैं, बल्कि सामाजिक मूल्यों और व्यक्तिगत जिम्मेदारी की समझ भी विकसित करते हैं। डिजिटल सहभागिता और वास्तविक जीवन के सामाजिक अनुभवों के बीच संतुलन सामाजिक संरचना और संस्कृति के संदर्भ में भी महत्वपूर्ण है। युवा वर्ग जो पारंपरिक और डिजिटल दोनों प्रकार के सामाजिक नेटवर्क में सक्रिय रहते हैं, वे बहुआयामी दृष्टिकोण और वैश्विक सोच विकसित करते हैं। यह उनके सामाजिक व्यवहार, निर्णय लेने की प्रक्रिया और नेतृत्व क्षमताओं को सुदृढ़ करता है। इसके साथ ही, यह संतुलन सामाजिक मूल्य, सांस्कृतिक परंपराओं और पारिवारिक संबंधों के निरंतर समर्थन को सुनिश्चित करता है।

मानसिक स्वास्थ्य और व्यक्तिगत विकास के दृष्टिकोण से भी यह संतुलन अत्यंत महत्वपूर्ण है। डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म का अत्यधिक उपयोग, लगातार सूचना का बहाव और ऑनलाइन प्रतिस्पर्धा युवा वर्ग में चिंता, तनाव और असुरक्षा की भावना उत्पन्न कर सकती है। वास्तविक जीवन में सामाजिक संपर्क, खेलकूद, सांस्कृतिक गतिविधियाँ और पारिवारिक सहभागिता मानसिक स्वास्थ्य को स्थिर और संतुलित बनाए रखने में मदद करती हैं। इस प्रकार, डिजिटल सहभागिता और वास्तविक जीवन के अनुभवों के बीच सामंजस्य युवा वर्ग के समग्र विकास के लिए अनिवार्य है। शिक्षा और सामाजिक जीवन पर व्यापक दृष्टिकोण से विचार करें तो डिजिटल सहभागिता और वास्तविक जीवन के अनुभवों का संतुलन युवाओं की बहुआयामी क्षमताओं, सामाजिक समायोजन और सांस्कृतिक समझ के लिए निर्णायक है। डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म ने शिक्षा और सामाजिक संपर्क को अधिक गतिशील, बहुआयामी और

वैश्विक बना दिया है, जबकि वास्तविक जीवन के अनुभव युवा के मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक विकास के मूल आधार के रूप में कार्य करते हैं।

सीमाएँ

प्रस्तुत अध्ययन मुख्यतः द्वितीयक तथ्यों पर आधारित है, जिसके कारण कुछ व्यवहारिक और प्रत्यक्ष अनुभवों के मूल्यांकन में सीमाएँ उत्पन्न होती हैं। द्वितीयक स्रोत जैसे कि ऑनलाइन लेख, शैक्षिक रिपोर्ट, शोध पत्र और सरकारी दस्तावेज़ों पर निर्भर रहने के कारण अध्ययन में वास्तविक जीवन के सामाजिक और शैक्षिक अनुभवों की गहन समझ सीमित रहती है। इसका परिणाम यह होता है कि युवा वर्ग की दैनिक गतिविधियाँ, उनकी व्यक्तिगत प्रतिक्रियाएँ और डिजिटल माध्यमों के प्रयोग के वास्तविक प्रभावों का प्रत्यक्ष अवलोकन नहीं किया जा सकता। अध्ययन में प्राथमिक तथ्यों की अनुपस्थिति भी एक महत्वपूर्ण प्रतिबंध है। व्यक्तिगत साक्षात्कार, फील्ड सर्वेक्षण या प्रायोगिक अध्ययन की कमी के कारण यह समझना मुश्किल हो जाता है कि सोशल मीडिया युवाओं के शिक्षा और सामाजिक जीवन पर किस प्रकार वास्तविक प्रभाव डाल रहा है। व्यवहारिक पहलुओं की गहनता, जैसे कि ऑनलाइन गतिविधियों के कारण परिवारिक संवाद में बदलाव, मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव या समुदायिक सहभागिता की गुणवत्ता, केवल द्वितीयक स्रोतों से सीमित रूप में समझी जा सकती है। इसके अतिरिक्त, द्वितीयक तथ्यों के स्रोत समय और स्थान के अनुसार भिन्न हो सकते हैं, जिससे निष्कर्षों में सार्वभौमिकता बनाए रखना कठिन हो जाता है। विभिन्न अनुसंधानों और रिपोर्टों में डेटा संग्रह की विधि, संदर्भ और आंकड़ों की प्रस्तुति में अंतर हो सकता है, जिससे निष्कर्षों में सूक्ष्म भिन्नताएँ उत्पन्न होती हैं। यह अध्ययन इन भिन्नताओं को पूरी तरह नियंत्रित नहीं कर सकता। अतः इस अध्ययन के परिणाम केवल सैद्धांतिक और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण प्रदान करते हैं। यह वास्तविक अनुभवों और व्यवहारिक परिप्रेक्ष्य की पूर्ण गहराई का प्रतिनिधित्व नहीं करता। भविष्य में प्राथमिक डेटा संग्रह, फील्ड सर्वेक्षण और प्रयोगात्मक अनुसंधान द्वारा इस विषय पर और अधिक व्यापक और ठोस निष्कर्ष प्राप्त किए जा सकते हैं। इस प्रकार, यह अध्ययन शिक्षा और सामाजिक जीवन पर सोशल मीडिया के प्रभाव के व्यापक संदर्भ और प्रारंभिक विश्लेषण के लिए महत्वपूर्ण है, लेकिन व्यवहारिक और प्रत्यक्ष अनुभवों की समझ में इसकी सीमाएँ स्पष्ट हैं।

निष्कर्ष

वर्तमान डिजिटल युग में सोशल मीडिया ने युवाओं के जीवन के शैक्षिक, सामाजिक और व्यवहारिक आयामों पर गहरा और बहुआयामी प्रभाव डाला है। शिक्षा के क्षेत्र में डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म ने ज्ञान तक पहुंच, ऑनलाइन पाठ्यक्रम और सहयोगात्मक सीखने के अवसर उपलब्ध कराए हैं। विद्यार्थी अब पारंपरिक शिक्षा प्रणाली की सीमाओं को पार कर, लचीले और गतिशील अध्ययन मॉडल का लाभ उठा रहे हैं। मल्टीमीडिया सामग्री, शैक्षिक फोरम और ऑनलाइन समूह चर्चा ने सीखने की प्रक्रिया को अधिक इंटरैक्टिव, सहभागी और बहुआयामी बना दिया है। यही नहीं, डिजिटल उपकरणों के माध्यम से वैश्विक दृष्टिकोण और सांस्कृतिक विविधता से परिचय भी संभव हुआ है, जिससे युवाओं की आलोचनात्मक सोच और समस्या-समाधान क्षमता में वृद्धि हुई है। सामाजिक जीवन के संदर्भ में सोशल मीडिया ने पारंपरिक संपर्क संरचनाओं, परिवारिक संबंधों और समुदायिक सहभागिता के स्वरूप को पुनर्परिभाषित किया है। युवा अब डिजिटल नेटवर्क के माध्यम से वैश्विक समुदाय से जुड़े हैं, अपनी सामाजिक पहचान निर्मित कर रहे हैं और ऑनलाइन सहभागिता के नए रूप अपना रहे हैं। यह सामाजिक और सांस्कृतिक अनुभव युवाओं में बहुआयामी दृष्टिकोण, सहिष्णुता और वैश्विक समझ विकसित करने में सहायक हैं। हालांकि, अत्यधिक डिजिटल सहभागिता ध्यान केंद्रित करने की क्षमता, मानसिक स्वास्थ्य और पारंपरिक सामाजिक संपर्कों को प्रभावित कर सकती है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से देखा जाए तो अध्ययन ने स्पष्ट किया है कि सोशल मीडिया केवल सूचना या मनोरंजन का माध्यम नहीं है, बल्कि यह युवाओं की जीवनशैली, सामाजिक व्यवहार और सांस्कृतिक मूल्यों पर भी निर्णायक प्रभाव डालता है। डिजिटल सहभागिता और वास्तविक जीवन के अनुभवों के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है, ताकि युवाओं का मानसिक, सामाजिक और शैक्षिक विकास समग्र रूप से संतुलित और सकारात्मक हो। निष्कर्षतः, सोशल मीडिया शिक्षा और सामाजिक जीवन दोनों में लाभकारी और चुनौतीपूर्ण प्रभाव उत्पन्न करता है। यह ज्ञान और

सामाजिक सहभागिता के अवसर बढ़ाता है, वैश्विक दृष्टिकोण और बहुआयामी सोच को प्रोत्साहित करता है, जबकि मानसिक और व्यवहारिक चुनौतियाँ भी उत्पन्न करता है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह अध्ययन युवाओं के जीवन में डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म की भूमिका को समझने, नीति निर्माण और सामाजिक सुधार के लिए महत्वपूर्ण दिशा-निर्देश प्रदान करता है।

संदर्भ सूची

[i]. अग्रवाल, निशा (2024), युवा पीढ़ी के बढ़ते कदम, किताब राइटिंग पब्लिकेशन, मुंबई, पृ.सं-78-80

[ii]. कोस्टा, एलिसबेटा, मिलर, डैनियल, हेन्स, नेल, मैकडोनाल्ड, टॉम, निकोलेस्कु, रज़वान, सिनानन, जोलिना, स्पायर, जूलियानो, वेंकटराम, श्रीराम, ज़िनयुआन, वांग (2019), दुनिया ने जैसे सामाजिक मीडिया को बदल दिया, यूसीएल प्रेस, यू.के., पृ.सं-68-79

[iii]. बाजवा, सेवा सिंह (2022), सोशल मीडिया के विविध आयाम, के.के. पब्लिकेशंस, न्यू दिल्ली, पृ.सं-53-57

[iv]. श्रीवास्तव, साधना (2025), अमृतकाल में भारत और मीडिया: परिवर्तन, चुनौतियाँ और संभावनाएँ, पार्थ प्रकाशन, उत्तराखण्ड, पृ-सं-102-111

[v]. वेंकटरमन ,श्रीराम (2019), दक्षिण भारत में सामाजिक मीडिया, यूसीएल प्रेस, यू.के., पृ.सं-180-185

[vi]. गुप्ता, अंकुर (2024), सच्चाई डिजिटल युग की: असर स्क्रीन का, काव्या प्रकाशन, न्यू दिल्ली, पृ-सं-22-25